

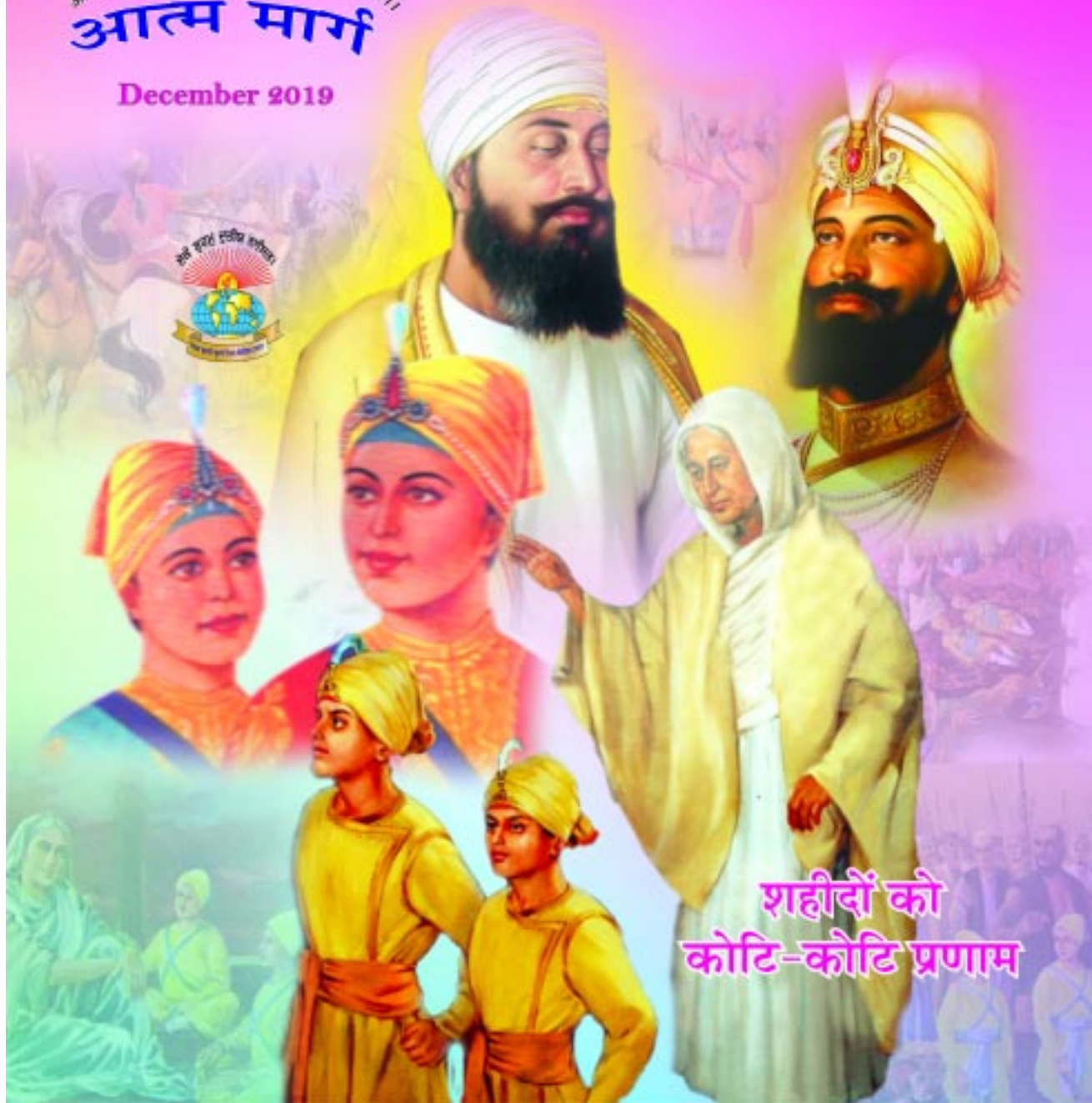
INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI NO. 68884/96

30/-

ब्रह्म हीसँ ब्रह्म सुणीअँ एकु एकु बखाणीअँ !!
आत्म प्रसार करण हारा प्रभु बिकल नही जाणीअँ !!

आत्म मार्ग

December 2019



शहीदों को
कोटि-कोटि प्रणाम

समागम रतवाड़ा साहिब - पृथक-पृथक वक्तागण संगत को सम्बोधन करते हुए



आत्म मार्ग के हिन्दी अनुवाद सम्बन्धी विशेष निर्णय

ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब की विशेष मीटिंग में आत्म मार्ग पत्रिका के हिन्दी अनुवाद के सम्बन्ध में यह निर्णय लिया गया कि इस पत्रिका का हिन्दी अनुवाद जनवरी 2020 से प्रकाशित करना बन्द कर दिया जाए। इसका विशेष कारण यह बतलाया गया है कि वर्तमान समय में इस पत्रिका के हिन्दी अनुवाद की संख्या बहुत कम हो गई है और वह उत्तरोत्तर कम ही होती जा रही है।

हिन्दी पाठकों की रुझानी जिज्ञासा को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय भी लिया गया है कि प्यारे महापुरुषों (सन्त वरियाम सिंह जी) के प्रवचनों को, जो कि पहले ही हिन्दी पुस्तकों के माध्यम से प्रकाशित किए गए हैं और बहुत ही कम मूल्य पर उपलब्ध हैं, अधिकाधिक संख्या में जिज्ञासुओं तक पहुँचाने के लिए उपयुक्त यत्न किए जाएँ। इसके लिए पुस्तकों के अतिरिक्त सोशल मीडिया व इन्टरनेट आदि का भी यथासम्भव प्रयोग किया जाए। हिन्दी पाठकों को ये प्रवचन शीघ्रतिशीघ्र उपलब्ध करवा दिए जाएंगे।

जिन पाठकों का वार्षिक (सालाना) अथवा आजीवन सदस्यता शुल्क (लाइफर मेंबरशिप सन्सक्रिप्शन) बकाया रहता है, उन्हें सविनम्र निवेदन किया जाता है कि वे अपना सदस्यता क्रमांक (मेंबरशिप नम्बर) बैंक खाता संख्या तथा पता आदि का ब्यौरा, आत्म मार्ग कार्यालय में भेजने की कृपा करें ताकि उनकी शेष राशि को वापिस लौटाया जा सके। यदि आवश्यक हो तो निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों के माध्यम से सम्पर्क किया जा सकता है -

84378-12900, 94172-14391, 94172-14379

आत्म मार्ग

वर्ष चौबीसवां - अंक ग्याहरवां, दिसम्बर 2019
गुरद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन

सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

प्रबन्ध सम्पादक

भाई (डा.) सुखविंदर सिंह

एडिटर-इन-चीफ

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

मुख्य सम्पादक

डा. जगजीत सिंह

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृपया निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यालय समय प्रातः 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - 84378-12900, 94172-14391,
94172-14379

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry,
Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE

Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib
(New Chandigarh) P.O. Mullanpur
Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S.
Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

| वार्षिक | आजीवन सदस्यता | प्रति कापी |
|---------|---------------|--------------------------|
| 300/- | 3000/- | 30/- |
| 320/- | 3020/- | (For outstation cheques) |

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

| | Annual | Life |
|-----------|-----------|------------|
| U.S.A. | 60 US\$ | 600 US\$ |
| U.K. | 40 £ | 400 £ |
| Canada | 80 Can \$ | 800 Can \$ |
| Australia | 80 Aus \$ | 800 Aus \$ |

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटरज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपूर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } (Every sunday)

Email: sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल

फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर

फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बेंस - मोबाइल 001-604-862-9525

फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंग्लैंड - बीबी गुरबख्शा कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी

फोन:0044-121-200-2818 फैक्स :0044-121-200-2879,

भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्पीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)

9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरु गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सेंटर - 96461-01996

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(PSEB) अंग्रेजी माध्यम - 95920-55581

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)

98786-95178, 92176-93845

* इंटरनेशनल डिवाइन स्कूल आफ नर्सिंग -

94172-14382

* इंटरनेशनल डिवाइन कालेज आफ एजुकेशन (बी. एड.)

94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) 98157-28220

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी - 98551-32009

श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग - 94647-12900

आडियो-वीडियो लाईब्रेरी - 98728-14385,

98555-28517

केवल टी.वी. नेटवर्क - 94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर

98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

| | |
|---|----|
| 1. सम्पादकीय (डा.) भाई सुखविन्दर सिंह | 5 |
| 2. बारहमाहा श्री मान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी | 7 |
| 3. धरम हेत साका जिन कीआ श्री मान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी | 11 |
| 4. अमर ज्योतियाँ श्री मान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी | 23 |
| 5. बाबाणियाँ कहानियाँ श्री मान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी | 32 |
| 6. सभ ते वडा सतिगुरु नानकु जिनि कल राखी मेरी सन्त बाबा हरपाल सिंह जी | 36 |
| 7. रतवाड़ा समागम की संक्षेप रिपोर्ट (डा.) भाई सुखविन्दर सिंह | 38 |
| 8. गुरू नानक आगमन डा. भाई वीर सिंह | 44 |
| 9. भाई नंद लाल जी डा. जगजीत सिंह | 48 |
| 10. गुरबाणी अर्थ भण्डार सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले' | 50 |
| 11. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार डा. स्वामी राम जी | 53 |
| 12. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची | 55 |

सम्पादकीय कलि तारणि गुरु नानक आइआ

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

मरण मुणसा सूरिआ हकु है

जो होइ मरनि परवाणो ॥

अंग - 580

‘शहीद’ तथा ‘शहादत’ शब्द को सुनते ही मन में यह विचार उत्पन्न हो जाता है कि वह शूरवीर जिसने सत्य के मार्ग पर चलते हुए चाव से मृत्यु को स्वीकार कर लिया हो। भले ही ‘शहीद’ शब्द अरबी भाषा का शब्द है लेकिन इस मार्ग पर चलने वाले कौमी योद्धाओं ने ऐसी परिभाषा दृढ़ करवा दी कि यह शब्द हमें अपना-अपना सा ही प्रतीत होने लग पड़ा। इस शब्द का सृजन कौम पर न्यौछावर होने वाले अर्थात् कौम रूपी शमा पर स्वयं को जला देने वाले परवानों के लिए ही हुआ है। सत्य के मार्ग पर कुर्बान होने वाले की मृत्यु को ‘शहादत’ का दर्जा दिया गया है। इस मत के साथ सारे ही धर्म पूर्णतः सहमत हैं। भले ही सारी दुनिया के सभी धर्मों में शहीदी का संकल्प अथवा उसके अर्थ पृथक-पृथक हैं लेकिन सिक्ख धर्म में इसके अर्थों की पुष्टि, सिक्ख इतिहास में से प्रत्यक्ष रूप से रूपमान होती हुई प्रतीत होती है। संसार की समस्त सच्चाइयों को एकत्र करके यदि उनका सार निकाला जाए तो जो निकलेगा वह यही होगा कि ‘जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु कै कालि।’ (अंग - 1429) इसका सीधा तात्पर्य है कि मरना सत्य है और जीना झूठ। इसी प्रकार से यदि संसार के सारे भयों को एकत्र करके उनका सार निकाला जाए तो जो सार निकलेगा वह होगा ‘मृत्यु का भय’। सिक्ख इतिहास इन दोनों की परिभाषा अपने पृथक व विलक्षण ढंग से सृजन करता है। सिक्ख इतिहास में जीने की आशा तथा मृत्यु के भय पर गुरसिक्खों ने विजय प्राप्त कर ली है और यह ‘पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस।।’ (अंग - 1102) के सिद्धान्त की पूर्ति है तथा ‘जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ।। सिरु धरि तली गली मेरी आउ।।’ (अंग - 1412) के सिद्धान्त पर चलते हुए स्वयं को कुर्बान कर देने का जज्बा है -

कबीर मुहि मरने का चाउ है

मरउ त हरि कै दुआर ॥

मत हरि पूछै कउनु है परा हमारे बार ॥

अंग - 1367

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरे मनि आनंदु ॥

मरने ही ते पाईअै पूरनु परमानंदु ॥ अंग - 1365

निर्भय व निरवैर को जप कर स्वयं गुरसिक्ख भी निर्भय व निरवैर शक्तियों के स्वामी बन गए हैं। इसीलिए उनके लिए गुरवाणी का फुरमान है - ‘कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरे मनि आनंदु।। मरने ही ते पाईअै पूरनु परमानंदु।।’ गुरसिक्ख इस परमानन्द को मन व शरीर दोनों की मृत्यु पर विज प्राप्त करके करते हैं। सिक्ख धर्म के अन्दर पहले व शहीद माने जाते हैं जिन्होंने धर्म, देश तथा कौम के सच्चे-सुच्चे आदर्श की प्राप्ति के लिए शान्तमयी रहकर कुर्बानी दी है जो प्रत्येक प्रकार के दुखों व तकलीफों को पूर्ण निष्ठा के साथ झेलते हैं और दूसरे व शहीद माने जाते हैं जो युद्ध के मैदान में जुल्म और जालिम के खिलाफ जूझते हुए अपने प्राणों की आहुति दे देते हैं। तीसरे प्रकार के शहीद वे होते हैं जो अन्य लोगों के धर्म को बचाने के लिए कुर्बानी देते हैं। इस प्रकार की कुर्बानी को अत्यन्त महान माना जाता है। इस प्रकार के शहीद को समय की हुकूमत के द्वारा कई प्रकार के लालच और धमकियाँ भी दी जाती हैं और इस प्रकार से उनके मार्ग बहुत ही विषम हो जाते हैं लेकिन उनका इरादा बहुत मजबूत होता है, फलस्वरूप उन्हें इस प्रकार के लोभ, लालच व भय, सत्य के मार्ग से भटका नहीं पाते हैं। यही कारण है कि वे प्रत्येक प्रकार की चुनौती को कबूल करते हुए उसका जवाब अपनी कुर्बानी के द्वारा देते हैं और उनकी कुर्बानी कभी व्यर्थ नहीं जाया करती है। वे सृष्टि के अस्तित्व के अन्तिम पल तक अमर रहते हैं क्योंकि उनके द्वारा साहसहीन लोगों के अन्दर नवीन आत्मा को डाल दिया जाता है और जो लोग निराशा से घिरे होते हैं उन्हें एक विशेष प्रकार की ऊर्जा व स्फूर्ति प्राप्त होती है। ‘शहीद’ होने वाले के सामने सच्चे धर्म के उसूल होते हैं और धर्म की परिभाषा उसकी शहीदी में से प्रत्यक्ष रूप से रूपमान होती है। सब,

सन्तोष, सत्य, धैर्य, क्षमा आदि धर्म के सदगुण उसकी शहीदी में से प्रकट होते हैं। वह किसी भी स्थिति में अपने उसूलों की मृत्यु नहीं होने देता है। धर्म के उसूलों पर पहरा देना, धर्म के अर्थों पर पूरा उतर जाना ही है। 'मुरदा होइ मुरीद न गली होवा। साबर सिदक सहीदु भरमु भउ खोवणा।' सब्र तथा दृढ़ विश्वास शहीद के दो गहने होते हैं। इस प्रकार के शहीदों का इतिहास खून के द्वारा लिखा जाता है और शहीदों का बहा हुआ खून कभी व्यर्थ नहीं जाता है। शहीद की मिट्टी भी भाग्यशाली होती है। आने वाली पीढ़ियाँ उस पावन धरती को नतमस्तक होती हैं।

**शहीदों की चिताउ पे लगेंगे हर वरश मेले
वतन पे मिटनों वालों का जिही निशा होगा।**

शहीद, कौम को प्रकाश स्तम्भ की तरह से, विषम परिस्थितियों के समय साहस प्रदान करता है तथा उसे सही मार्ग दर्शन प्रदान करता है। शहीद का यही गौरवमयी इतिहास, कौम के लिए एक अमूल्य निधि हुआ करती है। कवि की पंक्तियाँ हैं -

**जद डुलिआ खून शहीदाँ दा,
तकदीर बदलदी कौमाँ दी।**

सिक्ख कौम शहीदों की कौम है और शहीदी इसे विरासत में मिली है। बहादुर कौमों के महल ईंट, सीमेंट या गारे के साथ निर्मित नहीं किए जाते वरन वे तो शहीदों की हड्डियों, खून व मज्जा के साथ निर्मित किए जाते हैं। यही कारण है कि ये महल फिर आँधी, तूफानों व भूचालों के आने से गिरते नहीं हैं, वरन् ये तो कौम के दबे कुचले व पिछड़े लोगों को शरण देने का कार्य करते हैं। फिर गढ़ी चाहे कच्ची ही क्यों न हो, उनके इरादे पक्के होते हैं। पेट से वे चाहे भूखे ही क्यों न हों लेकिन वे गुरू-प्यार में पूर्णतः तृप्त होते हैं। वहाँ पर फिर भूख, भोजन की नहीं लगती है बल्कि उनका आधार तो गुरू का प्यार व नाम-वाणी ही होता है। उनके अन्दर गुरू दर्शनों की प्यास होती है, यही कारण है कि एक-एक सिक्ख सवा-सवा लाख के साथ लड़ जाता है क्योंकि उनका गुरू समर्थ होता है -

**सवा लाख से एक लड़ाउ
तबै गोबिंद सिंघ नाम कहाउं।**

पौष व माघ माह भावार्थ दिसम्बर व जनवरी महीने का नाम सामने आते ही शहीदों की तस्वीर सामने आ जाती है। यह तस्वीर कौन सी है? इस तस्वीर में से कौन दिखाई देता है? इसमें से नौवें पातशाह का शीश धड़ से अलग हुआ दिखाई

पड़ रहा है। पावन शीश का संस्कार श्री आनन्दपुर साहिब में तथा धड़ का संस्कार रकाबगंज (दिल्ली) में होता नजर आ रहा है। भाई मतीदास आरे के द्वारा चीरे जा रहे हैं। भाई सतीदास जी को रूई में लपेट कर शहीद किया जा रहा है, भाई दयाला जी को देग में उबाला जा रहा है। श्री आनन्दपुर साहिब का घेरा दिखाई पड़ रहा है। इस तस्वीर में से बाईसधार के राजाओं और औरंगजेब का झूठ और फरेब नजर आ रहा है। इसमें से पावन गीता और कुरान की झूठी कसमें नजर आ रही हैं तथा आनन्दों की पुरी का त्याग करना नजर आ रहा है। सिरसा नदी के बिछोड़े नजर आ रहे हैं, परिवार तीन भागों में विभक्त हो रहा है। रात के घने अन्धकार में वर्षा व ठंडी हवा सीने को चीरती हुई नजर आ रही है। इस प्रकार की विषम परिस्थितियों में भी ब्रह्म वेला के समय में श्री आसा दी वार के कीर्तन के नित्तेनम को टूटने नहीं दिया जा रहा है। भाई विचित्र सिंह घायल होते हुए दिखाई दे रहे हैं। निहंग कोटल सिर व धड़ की बाजी लगाता है। चमकौर की कच्ची गढ़ी दिखाई पड़ रही है, दो बड़े साहिबजादे, पाँच प्यारों में से तीन प्यारे तथा अन्य सिंह, शहीद हो रहे हैं। माछीवाड़े के जंगल, चरणों में जोड़ा नहीं, फटे हुए वस्त्र हैं, न ताज है, न बाज है, सच्चे पातशाह जी के पावन चरणों में से खून बहता हुआ दिखाई पड़ रहा है, छोटे साहिबजादों तथा माता गुजर कौर जी के ठंडे बुर्ज के तसीहे दिखाई दे रहे हैं। साहिबजादों की छोटी आयु पाँच साल तथा सात साल की दिखाई दे रही है, लेकिन उनका ज्ञान, उनकी सयानप तथा उनकी निडरता, बड़ी उम्र वालों को भी निरुत्तर कर रही है। सत्य के उसूलों पर पहरा देते हुए वे सूबा सरहिन्द को धर्म के अर्थ समझाते हुए नजर आ रहे हैं। माता जी की शहीदी तमाम दुनिया भर की माताओं के लिए साहस है, प्रकाश स्तम्भ है, जो कि सांसारिक दुखों में विचलित होने से रोककर, उनके अन्दर साहस भरती हुई दिखाई पड़ रही है।

इस तस्वीर में से मोती मेहरा जी दिखाई दे रहे हैं। गुरू प्यार के बदले में उसने अपना सारा परिवार कोल्हू में पिरवा लिया। दीवान टोडरमल की कुर्बानी किसी से छिपी नहीं है। गुरू का प्यार बहुत विशाल है तथा सांसारिक स्वर्ण मोहरें बहुत तुच्छ हैं। 40 मुक्ते तथा माता भागो की कुर्बानी, सृष्टि के अस्तित्व के अन्तिम पल तक प्रेरणादायक रहेगी। उपर्युक्त सारी कौमी तस्वीर पौष व माघ के महीने में से प्रत्यक्ष रूप

(शेष पृष्ठ 10 पर)

पौष

(पौष महीने की सक्रान्ति - 16 दिसम्बर, दिन सोमवार)

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

पोखि तुखारु न विआपई कंठि मिलिआ हरि नाहु ।
मनु बोधिआ चरनारबिंद दरसनि लगड़ा साहु ।
ओट गोबिंद गोपाल राइ सेवा सुआमी लाहु ।
बिखिआ पोहि न सकई मिलि साधू गुण गाहु ।
जह ते उपजी तह मिली सची प्रीति समाहु ।
करु गहि लीनी पारब्रहमि बहुड़ि न विछुड़ीआहु ।
बारि जाउ लख बेरीआ हरि सजणु अगम अगाहु ।
सरम पई नाराइणै नानक दरि पईआहु ।
पोखु सुहंदा सरब सुख जिसु बखसे वेपरवाहु ॥

अंग - 135

समय अपनी चाल के साथ चलता रहता है, यह किसी के रोकने पर नहीं रूकता। जिस प्रकार एक गोल पहिया घूमता रहता है उसी तरह से समय घूमता हुआ आगे बढ़ता चला जाता है। समय का वितरण करने वालों ने इसे कल्पों, युगों, सदियों, महीनों, सप्ताहों तथा दिनों में बांटा हुआ है। भूतकाल को यह पीछे छोड़ता चला जाता है। भविष्य को पकड़ने का यह पूरा यत्न करता है, पर जब भविष्य को हाथ डालने लगता है तो वह वर्तमान में बदल जाता है। इस प्रकार यह समय अपनी तीव्र गति से चल रहा है। आज एक बालक को देखते हैं, कुछ समय बाद वह किसी और अवस्था में नज़र आता है। फिर जवानी आ जाती है, यौवन को बुढ़ापा धीरे-धीरे खा जाता है और जवानी का कहीं नामोनिशां भी नहीं रहता। बुढ़ापा मौत के अटल नियम में लीन हो जाता है। 'आइआ गया मोइआ नाऊ' वाली स्थिति में से यह संसार गुजर रहा है। इस संसार में ऐसे महापुरुष भी आये, जिन्होंने अपनी ताकत के बल पर समय को बदलना चाहा। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, गुरु, पीर पैगम्बर, औलिए इस संसार से चले गये। धरती जिसके ऊपर ये अपने जीवन का नाट्य करते रहे तथा बहुत महत्वपूर्ण इतिहास की रचना करते रहे, उसका

पता ही नहीं चलता कि वे कहाँ से आए थे और किधर चले गये? इतना अवश्य है कि कुछ समय के लिए उनकी कथाएं हमें प्रेरणा देती रहेंगी। गुरबाणी में एक वाक्य आता है धरती आसमान से पूछती है, यह कह कर, कि मैं तो छोटी सी हूँ, मेरी संख्या, नाप, तोल, सदी, गर्मी मनुष्य ने सब कुछ माप लिया और मेरे पेट में छिपे अनेक भेदों की इसने जानकारी प्राप्त कर ली है। इस संसार को भवसागर से पार उतारने वाले थोड़ी देर के लिये मुझ (धरती) पर आकर अपना नाट्य करते हैं और फिर पता नहीं चलता कि कहाँ चले जाते हैं। आज तक बहुत समर्थशाली पीर, पैगम्बर, गुरु, साधक, ऋषि-मुनि, अबदाल तथा अनेक हस्तियाँ आईं और चली गईं। मेरी पहुँच बहुत सीमित है, मैं नहीं जान सकती कि वे कहाँ चले गये? हे आसमान! तेरा फैलाव अनन्त है, जहाँ तक निरंकार की रचना है तू भी साथ रहता है, तू सभी स्थानों की जानकारी रखता है, क्या तू बता सकता है कि वे कहाँ चले गये? आसमान ने कहा कि तुझे पता होना चाहिए तू माता धरती (धरत महत) कहलाती है, तेरे अन्दर से ही अनेक प्रकार की वनस्पतियां, जीव-जन्तु, समरथ पुरुष, ऋषि-मुनि, गुरु, पीर, पैगम्बर, औलिए रूपमान होते हैं। तेरे से भोजन

प्राप्त करके फलते फूलते हैं, तेरे से पानी प्राप्त करके जीवन को आगे चलाते हैं। तुझे भी कुछ पता होना चाहिए कि वे कहाँ चले गये? तब धरती ने उत्तर दिया, “ऐ आसमान! मैंने तो इस बात को भली-भान्ति जान लिया है कि जीव जन्तुओं, ऋषियों-मुनियों, पुण्य आत्माओं, पापियों का जो स्थूल भाग है, जिसे शरीर कहते हैं, वह मरणोपरान्त अपने-अपने तत्वों में समा जाता है। पर इसमें जो बोलने वाला समर्थशील अंश रहता है, जिसकी वजह से शरीर जीवित रहता है, जिसके कारण शरीर द्वारा सारे कार्य होते हैं, उसका मुझे पता नहीं चलता कि वह कहाँ चला जाता है? मेरे द्वारा तो जड़ तत्व प्राप्त करके शरीर बनता है, जिसे पाँच तत्व कहते हैं, जिसमें हे आकाश, तू भी आ जाता है। इसके बारे में तो मुझे ज्ञान है पर इसके अन्दर जो वास्तविक नाट्य कर रहा था, हस रहा था, बोल रहा था, अनेक प्रकार के कौतुक कर रहा था, जिसके चले जाने के बाद यह शरीर गली सड़ी मिट्टी की ढेरी के सिवाय कुछ भी नहीं रहता। जो इस शरीर में वास्तविक चीज़ है, मैं उसके बारे में जानना चाहती हूँ।

बाबा बोलते ते कहा गए देही के संगि रहते।

सुरति माहि जो निरते करते कथा बारता कहते ॥

अंग - 480

तब आसमान ने बताया कि हे धरती माँ! जब मनुष्य शरीर छोड़ता है तो तेरे पाँच तत्वों से ली गई चीज़ें अपने तत्वों में समा जाती हैं। कोई इस शरीर को जला देता है, कोई मिट्टी में दबा देता है, कोई पानी में बहा देता है, पर जो स्थूल तत्व प्रभु ने पैदा किए हैं, वे न तो कभी कम होते हैं, न ही कभी बढ़ते हैं पर इसमें जो असली अंश था, जिसे जीव-आत्मा कहा जाता है, यह अपने किये गये कर्मों का फल भोगने के लिए धर्मराज की कचहरी में चला जाता है। वहाँ पर पहुँच कर उसे उलाहने मिलते हैं और वह सदा उलाहने सुनता रहता है -

जिमी पुछे असमान फरीदा खेवट किंनि गए।

जालण गोरं नालि उलामे जीअ सहे ॥ अंग - 488

अतः यह क्रिया सदीव काल से चल रही है, इस चाल में कभी सुख आ जाते हैं तथा कभी दुख आ जाते हैं, कभी खुशियाँ आ जाती हैं, कभी गमी आ जाती हैं, कभी मेल हो जाता है, कभी वियोग हो जाता है। जीव मिल-मिल कर, फिर बिछुड़ जाते हैं, बिछुड़-बिछुड़ कर फिर मिल जाते हैं, अनेक रूप धारण करते हैं। जिसके साथ-साथ प्रकृति समय

के साथ अपना रूप बदलती है, माघ के महीने में वनस्पति में रस भर जाता है तथा हरियाली गुलज़ार में दृष्टिमान होती है पर समय बीत जाता है। माघ के बाद पौष का महीना जाता है, जिसमें ठण्ड और बर्फ (पाला) का बहुत जोर हुआ करता है। यह सारी वनस्पति को सुखा देती है तथा पतझड़ जैसी हालत हो जाती है। हरियाली समाप्त हो जाती है पर कुछ वनस्पति ऐसी होती है, जिस पर मौसम का प्रभाव बहुत कम हुआ करता है। उनकी हरियाली कायम रहती है। इसी प्रकार मनुष्य के मन में ऋतुओं, तिथियों, दिनों के अनुसार उतार चढ़ाव आते रहते हैं। कभी मनुष्य खुशियों के हिलोरे लेता है, आनन्द के सागर में गोते लगाता है। उस समय कुछ भी याद नहीं रहता। केवल आनन्द लेना ही उसका ध्येय बन जाता है। पर जब समय बदलता है, उसके हाथों में ये खुशियाँ, हिलोरे, चाव, उदासियों में बदल जाते हैं। ऐसे समझ लो कि लहलहाती खेती मौसम के कोप के सन्ताप से उदास हो जाती है। पतझड़ आ जाता है, इसी प्रकार मनुष्य के मन में समय की चाल के साथ खुशियों की जगह उदासियाँ आ जाती हैं। इसी अवस्था को गुरु महाराज जी बारह माह में पौष के महीने में फ़रमान करते हुए बताते हैं कि एक तो ऐसे व्यक्ति हैं, जिनके ऊपर दुखों के कठोर तथा समय के थपेड़े, चिन्ताएं, कमियाँ, विघ्न, बर्फीली हवायें अपना प्रभाव डालती हैं तथा मनुष्य निराशाजनक स्थिति में पड़ जाता है। कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जो किसी सुघड़ माली की देख रेख में पलते हैं, वह माली उन्हें ठण्ड से बचाने के लिए गरमायश देता है, ठण्डी हवाओं की ओर से ओट करता है, ऐसे जीवन प्रफुल्लित होते हैं।

सो इस पौष महीने में हमें एक महत्वपूर्ण उपदेश मिलता है कि एक तो ऐसे जीवन हैं जो वाहिगुरु जी के प्यार से विहीन हैं, सुमिरन से हीन हैं, सेवा तथा प्यार से रिक्त हैं, वे अपने क्षण भंगुर सुखों में पड़ कर परमेश्वर को भूल जाते हैं पर जब दुखों की घनी अन्धेरियों से भरी हवायें चलती हैं, तब वे उदास होकर निराशा के गर्त में गिर जाते हैं पर दूसरी ओर ऐसे प्रेमी भी हैं, जो प्रभु के साथ, गुरु की कृपा के कारण सदा ही जुड़े रहते हैं। अमृत बेला में उठते हैं, शरीर की शुद्धि के लिये तथा सतर्कता के लिए स्नान करते हैं, गुरु की बाणी में भावलीन होकर, विचार कर पढ़ते हैं, तथा प्रभु की याद में घंटों बैठे रहते हैं; तथा वे उस याद को बढ़ाते चले जाते हैं। यहाँ तक कि उस लिव की ऐसी अवस्था हो जाये कि जब भी प्रभु को भूले तो अपनी मृत्यु ही समझे अर्थात् अपने को मरा हुआ ही माने। भाव यह है कि उनका

जीवन उस मछली जैसा हो जाये जो पानी से बिछुड़ते ही अपने प्राण त्याग देती है जैसे कि -

जिउ मछुली बिनु पाणीए किउ जीवणु पावै ।
 बूंद विहूणा चात्रिको किउकरि त्रिपतावै ।
 नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै ।
 भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै ।
 तितु संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै ॥

अंग - 708

आखा जीवा विसरै मरि जाउ ॥ अंग - 9

उनके रोम-रोम में से वाहिरु जी का अनवरत प्रवाह, अज्ञान के स्रोत काटता हुआ, प्यार में रमा हुआ है तथा वह सदीव वाहिरु जी के प्यार में रत, उसके साथ अभेद अवस्था में जुड़े रहते हैं। ऐसे पुरुषों को दुखों, तकलीफों, विघ्नों के भरे समूह कुछ भी नुकसान नहीं पहुँचा सकते जिसके बारे में फ़रमान है -

पोखि तुखारु न विआपई कंठि मिलिआ हरि नाहु ॥
 अंग - 135

प्रभु दर्शन में लीन रहते हैं। वे अपने प्यारे की ओट में रहते हैं तथा प्रभु की सेवा, सुमिरन में अपना जीवन व्यतीत करते हैं। उनको प्रभु की त्रिगुणीमाया किसी प्रकार भी भुला नहीं सकती और न ही उनकी प्रीति को तोड़ सकती है, उन्हें माया मोह नहीं सकती। यहाँ तक कि वे बड़ी से बड़ी उपलब्धियाँ प्राप्त करने के बाद भी, अपने प्यारे को, किसी श्वास में भी नहीं भूलते। महाराज जी का फ़रमान है -

मनु बेधिआ चरनारबिंद दरसनि लगड़ा साहु ।
 ओट गोविंद गोपाल राइ सेवा सुआमी लाहु ।
 बिखिआ पोहि न सकई मिलि साधू गुण गाहु ॥
 अंग - 135

वह महापुरुषों के साथ मिलकर, अपने प्यारे के गुण गाकर, जीवन पदवी के हुलारे सदीवी लेते हैं, उनके ऊपर कभी भी मुर्दापन नहीं आता। प्रीति विहीन कभी भी नहीं होते, प्रीत से खाली होना ही मुर्दापन हुआ करता है -

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत ।
 मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥
 अंग - 253

वाहिरु जी से बिछुड़ कर यह जीव 84 के चक्कर में गोते खा रहा था क्योंकि हउमै तत्व ने इसे विछोड़े में डाल दिया था। दुखी होकर रोता और कुरलाता था, पर जब सच्ची

लिव तथा साधुओं की संगत करके, वह अपने मीत के गुण गाता है तो वह प्यार इतना प्रबल हुआ करता है कि वह हउमै के बन्धन काट कर प्रभु में ऐसे मिल जाता है जैसे -

जिउ जल महि जलु आइ खटाना ।
 तितु जोती संगि जोति समाना ॥ अंग - 278

वह प्यारा प्रभु इस निर्बल (मानहीन) अपने अंश जिसे जीव आत्मा कहा जाता है, उसका हाथ पकड़ कर अपने स्वरूप में समाई करा देता है। अपनी परम ज्योति में निवास दे देता है और इस प्रकार अपने में अभेद कर देता है, जिस प्रकार समुद्र में अनेक नदियों से आया हुआ पानी अपना अस्तित्व मिटा कर, फिर समुद्र बन जाता है फिर उसका कभी भी बिछोह नहीं होता क्योंकि प्रभु ने उसे कभी भी अपने से अलग नहीं रहने दिया। अपना ही स्वरूप बना लिया। अब वह जीव आत्मा न रहा। अब वह न 'मैं' रहा। न 'तू' रहा। वह अपने आप ही हो गया। जिस प्रकार पानी की लहर समुद्र में समा जाती है, पानी में उठने वाले बुलबुले पानी में ही समा जाते हैं, इसी प्रकार पूर्ण प्रेम के आनन्द में लीन हुआ यह जीव आप ही परमेश्वर बन जाया करता है।

कबीर तू तू करता तू हूआ
 मुझ महि रहा न हूँ ।
 जब आपा पर का मिटि गइआ
 जत देखउ तत तू ॥ अंग - 1375

जह ते उपजी तह मिली सची प्रीति समाहु ॥
 अंग - 135

अब विछोड़े का प्रश्न ही नहीं उठता, ऐसे प्रभु पर लाखों बार कुर्बान होते हैं, अपने आपे को अर्पण करते हैं जो, गमता में नहीं आ सकता। जिसकी कोई थाह नहीं पाई जा सकती पर अपने अस्तित्व में स्थित होकर, अपने आप, अपनी महिमा में आप ही अनेक रूपों में दिखाई देता है, जिसके बारे में जीव के पास कोई ऐसी वस्तु नहीं, जिसके द्वारा वह उसकी थाह पा सके।

करु गहि लीनी पारब्रहमि बहुड़ि न विछुड़ीआहु ।
 बारि जाउ लख बेरीआ हरि सजणु अगम अगाहु ॥
 अंग - 135

नही जान जाई कछू रूप रेखं ।
 कहा बास तांको फिरै कउन भेखं ।
 कहा नाम ताको कहा कै कहावै ।
 कहा कै बखानो कहै मैं न आवै ॥ अकाल उसतति

जो वाहगुरु जी के द्वार पर आकर बैठ गये, सभी सहारे छोड़कर जिन्होंने इस महान एकंकार के साथ प्यार का झूला डाल लिया, वे नारायण का रूप होकर ही निखरते हैं, यह उस प्रभु का ही बिरद कर्तव्य है। यह जीवन जो प्रभु के साथ सदीवी प्यार में बीते हुये उसे बुरे समय में दुखी नहीं कर सकते। वे प्रभु की आशीष के पात्र होकर उसी के ही हो चुके होते हैं।

सरम पई नाराइणै नानक दरि पईआहु ।

पोखु सुहंदा सरब सुख जिसु बखसे वेपरवाहु ॥

अंग - 135

वाहगुरु जी के चरणों में प्रार्थना है, हमने तेरा प्यार छोड़कर, माया के साथ प्यार किया जिसका अस्तित्व क्षण भंगुर है। हम यह नहीं मानते की आप सदीवी हैं, हर समय साथ रहते हैं, देखते हैं, हर समय साथ रहता है। तू सदीव सुखों का भण्डार, जिसके विपरीत माया सदा ही दुखों का घर है। क्या हो गया हमारी बुद्धि को, तुझे भूलकर माया के अनेक रूपों में पड़े रहते हैं। कहीं माया के रूप घर मन्दिर हैं, सम्बंधी पुत्र, पुत्रियां हैं। हे प्रभु! कृपा करो, अपने साथ मिला लो, हम भी पौष महीने की ताब से बच कर तेरे प्यार का आनन्द उठा सकें।



(पृष्ठ 6 का शेष)

से दृष्टिमान होती है। इस तस्वीर की पुष्टि अरदास के माध्यम से भी हो रही है।

‘जिन सिंहों सिंहणियों ने धर्म हेतु अपने शीशों का बलिदान दिया, अपने बन्द बन्द कटवाए, खोपड़ियाँ उतरवाईं, चरखड़ियों पर चढ़े, शीश आरे के साथ चिरवाए गए लेकिन धर्म नहीं हारा और आपकी रजा को मीठा करके माना।’ यह सारी अरदास, सारी कौम की तस्वीर है। हमारा पूरा इतिहास ही इस पाँच मिनट की अरदास में बन्द हुआ प्रतीत होता है। इसमें से हमारी कौमी तस्वीर प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ती है। इस प्रकार से शहीदी के ये महीने हमारे समक्ष कितना गौरवमयी इतिहास प्रस्तुत कर रहे हैं। आओ! हम सब दशमेश पिता जी के परोपकारों को याद करें, सतगुरु जी द्वारा प्रदत्त खण्डे-बाटे के अमृत के धारणी होकर शहीदों के पदचिन्हों पर चलने हेतु प्रार्थना करें। उन्होंने हमें अमृत रूपी अमूल्य

वस्तु प्रदान करने के लिए अपने ऊपर बेशुमार अत्याचार सहन किए तथा शहीदियाँ प्राप्त कीं। आओ! शहीदों को प्रणाम करें। सच्चे पातशाह जी द्वारा दूढ़ करवाई गई नाम-वाणी की युक्ति के धारणी बनें और उनके प्यार व वैराग्य में जीवन व्यतीत करें। ये महीने शहीदी के महीने हैं कोई भी गुरु को प्यार करने वाला गुरसिक्ख इन दिनों अपने घर में खुशी का कार्य न करे बल्कि शहीदों की पावन स्मृति में अधिकाधिक समय, वाणी सेवा व सिमरन के साथ जुड़कर व्यतीत करे। हमारी तरफ से शहीदों को यही सच्ची श्रद्धाजलि होगी। वे अपनी मंजिले-मकसूद पर पहुँच चुके हैं, हमें भी वे परम-पद प्राप्त करने के उस मार्ग के पथिक बनने की शक्ति प्रदान करेंगे। यथा -

मरणु मुणसा सूरिआ हकु है

जो होइ मरनि परवाणो ॥

सूरे सेई आगै आखीअहि

दरगह पावहि साची माणो ॥

अंग - 580



आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का व्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

‘आत्म मार्ग’ एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृपया इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

धर्म हेत साका जिन कीआ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

सतिनाम श्री वाहगुरु,
धन श्री गुरु नानक देव जीओ महाराज
डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥

अंग - 256

फिरत फिरत प्रभु आइआ परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥

अंग - 289

साधुसंगत जी! उच्च स्वर में बोलो सतिनाम श्री वाहगुरु! अपने-अपने कारोबार को संकोचते हुए आप सब गुरु दरबार में पहुँचे हैं, अपनी चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो तथा उन्हें बाहर जाने से रोको। आज का जो दिन है वह जिस दिन से संसार की रचना हुई है, उस समय से ही महत्वपूर्ण दिन है। हाँ, हम इसे समझ ही नहीं सके हैं और न ही हम संसार को बता सके हैं। साधुसंगत जी! गुरु जी ने एक बहुत बड़ा उसूल कायम किया था, जिसे हम संसार तक पहुँचा ही नहीं पाए हैं। हमने केवल कुर्बानी तक ही उसे सीमित कर लिया है। श्री गुरु जी ने अपना बलिदान दिया लेकिन हमने उससे कोई शिक्षा ही ग्रहण नहीं की क्योंकि गुरुओं ने ऐसी अलौकिक बातों को मंच पर किया जिन्हें कि हम समझ ही नहीं सके। यदि हम यह पढ़ लेते हैं कि गुरु नानक जी ने नवाब के साथ जाकर मस्जिद में नमाज पढ़ने के समय जब उन्हें कहा गया कि आपने नमाज नहीं पढ़ी तो आपने नवाब को कहा कि हमने तो नमाज पढ़ी है लेकिन तुमने नहीं पढ़ी तुम्हारी नमाज दरगाह में कबूल नहीं होगी, तुम्हारी नमाज खण्डित हो गई है, लेखे में तो केवल उठना, बैठना ही पड़ा है, नमाज नहीं पढ़ी क्योंकि खुदा के साथ तो तुम्हारा कनेक्शन ही नहीं जुड़ा। जिस मन ने नमाज पढ़नी थी, वह तो काबुल में घोड़े खरीद रहा था या घोड़ी के नवजात शिशु की रक्षा में ही लगा रहा। यदि गुरु नानक सब कुछ जान गया तो वाहगुरु भी तो सब कुछ जानता ही है। यदि मान लो हम

थोड़ी देर के लिए यह मान लें कि गुरु नानक देव जी तो यहाँ पर है ही नहीं (जिनका श्री गुरु ग्रन्थ साहिब पर विश्वास कम है) तो फिर नमाज को या जपुजी साहिब को कौन सुन रहा है? कौन देख रहा है? हम पढ़ते जा रहे हैं, पढ़ते जा रहे हैं लेकिन मन तो कहीं पर टिकता ही नहीं है। हमें डर ही नहीं लगता है कि यह बात तो गुरु साहिब ने पहले ही मना कर दी है। यह तो हमारा पाठ किसी भी लेखे में नहीं पढ़ रहा है। दरअसल हमने अपने आपको जपुजी साहिब पढ़ने के लिए तैयार ही नहीं किया हम नमाज से आगे ही नहीं निकल सके हैं।

इस प्रकार सिक्ख इतिहास के अन्दर असंख्य ऐसे उदाहरण हैं, जिन्हें कि यदि हम अपना लें तो हम विश्व मानव बन सकते हैं, हम सारे संसार के साझे मनुष्य बन सकते हैं। फिर सारा संसार ही हमारा हो जाता है। श्री गुरु नानक की बहुत बड़ी approach थी लेकिन हमने उसे यूँ ही नजरअन्दाज कर दिया। इसका कारण यह है कि यह सारा दर्शन हमारे जैसे मूर्ख लोगों के हाथ में आ गया है। हमारी जो अपनी तंगदिल वाली दृष्टि थी, हम उसी घेरे से बाहर नहीं निकल सके हैं। यहाँ तक कि हमने श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी पर भी पाबन्दी लगा दी है कि इसे वही पढ़ सकता है जिसने अमृतपान किया हो, दूसरा इसे नहीं पढ़ सकता है। यदि विचार करके देखो तो क्या गुरु साहिब ने, गुरुवाणी, अमृतपान कर चुके लोगों के सामने उच्चरित की थी? या फिर साधारण लोगों के सामने उच्चरित की थी? अब स्थिति यह है कि यदि बिना अमृतपान किए लोग वाणी पढ़ रहे हों तो हम उनके हाथ से गुटके को छीन लेते हैं कि तुमने अभी अमृतपान नहीं किया है। इसलिए तुम अभी इसे नहीं पढ़ सकते हो। यह कितनी तंगदिली की बात है? प्रत्येक बात में हमारी तंगदिली ही चलती है। हम लोग तो श्री गुरु ग्रन्थ साहिब की शिक्षा के ही विपरीत चलते हैं। हम उसके साथ से शत प्रतिशत ही टूट चुके हैं। हमें समझ ही नहीं आ रही है। धर्म

का कुछ और ही बन गया है। हमारे अन्दर धर्म की मौलिक रौशनी ही नहीं रही है। हमारी वैश्विक भावना ही नहीं रही है। हमारा धार्मिक दायरा व हमारी सोच बहुत छोटी हो चुकी है। बहुत बड़ा ज्ञान जो दुनिया को दिया जाने वाला था और जिसके लिए गुरु ने हमारे ऊपर विश्वास किया था, उसमें हम खरे नहीं उतरे। गुरु जी ने बीच में पुजारी वर्ग को हटा कर, हमें ही यह दायित्व सौंपा था क्योंकि पुजारी वर्ग धीरे-धीरे दूषित हो जाता है। हमारे जो बुजुर्ग थे वे हमारी अपेक्षा बहुत सयाने थे। बहुत देर तक उन्होंने एक यह वर्ग ही बना रखा कि आप लोग कोई काम मत करो, कुछ न करो। आपके कपड़े की चिन्ता, आपके खाने पीने की चिन्ता, आपके आवास का प्रबन्ध हम लोग स्वयं करेंगे। आप लोग केवल आन्तरिक खोज करो और फिर सच्चाइयों को हमें बतलाओ क्योंकि यदि आप लोग रोटी, कपड़ा और मकान के प्रबन्ध में ही लग गए तो फिर आन्तरिक खोज कैसे कर पाओगे? उस वर्ग का नाम ब्राह्मण वर्ग रख दिया। यदि व्यक्ति अपने उसूलों पर कायम रहता था तो फिर तो उसे सर्वोच्च वर्ग (ब्राह्मण वर्ग) में रखा जाता था तथा यदि वह गिर जाता था तो फिर उसे निचली श्रेणियों में दाखिल कर दिया जाता था और फिर वह ब्राह्मण नहीं रहता था। बड़े-बड़े ब्राह्मण हुए हैं। श्री रामचन्द्र जी के जो गुरु जी थे (वशिष्ठ जी) वे ब्राह्मण नहीं थे लेकिन उन्हें ब्राह्मण की पदवी दी गई थी। छोटी-छोटी जातियों में से उठ कर बड़े-बड़े रुतबे उन्होंने प्राप्त किए जैसे कि पी.एच.डी. की डिग्री प्राप्त की जाती है। महाराज जी ने भी इस बात को स्पष्ट करते हुए कहा कि हम तो ब्राह्मण उसे कहते हैं जो कि ब्रह्म की विचार करता है, जाति-पात को हम नहीं मानते हैं लेकिन आगे जाकर यह एक वर्ग बन गया, पुजारी वर्ग बन गया, फलस्वरूप उनकी उन्नति अवरुद्ध हो गई। श्री गुरु नानक देव जी ने भी गुरुगद्दी श्री चन्द जी को नहीं दी थी कि यह तो खानदानी बन जाएगी। इसके आगे गुरु अंगद देव जी ने भी दातू तथा दासू को नहीं दी। यदि चौथे महाराज जी के बाद खानदानी गद्दी प्रतीत होती है तो उत्तराधिकारी ही इतने जबरदस्त हुए कि उनके मुकाबिले में दूसरा कोई ठहर ही नहीं सका। आखिर में श्री दशमेश जी ने जो कुर्बानी की उस प्रकार की कोई कर ही नहीं सकता था। अतः वह चुनाव कोई गलत प्रकार का नहीं था। श्री दशमेश जी ने गुरुगद्दी को पुनः परिवार में से निकाल दिया। यदि आप चाहते तो साहिबजादों को बचा सकते थे। यह कार्य

उनके लिए कोई कठिन नहीं था। उन्होंने हमारे ऊपर विश्वास किया कि दो सौ साल की तालीम में अब ये सब कुछ समझ गए हैं। 235-236 साल श्री गुरु जी रहे। यह बहुत बड़ा समय था, जिसमें आप रहे और हमें सारा कुछ समझाया लेकिन समय के अन्तराल के साथ हम लोग दोबारा वहीं पर गिरते जा रहे हैं, जहाँ पर कि पहले थे और कई मामलों में तो पहले से भी नीचे गिरते जा रहे हैं। अतः आज का दिन श्री गुरु तेग बहादुर जी की शहादत का दिन है। इसके अन्दर जो असली चीज है, उसे समझने का यत्न करो, केवल उसकी गौरवता ही न करो कि हाँ यह बहुत बड़ी बात थी। उसके अन्दर अपने किरदार की तलाश करो। गुरु जी ने तो एक लकीर खींच दी है लेकिन आवश्यकता इस बात का विश्लेषण करने की है क्या हम उस लकीर पर चलते भी हैं या नहीं? गुरु जी ने एक तो यह लकीर खींची थी कि न तो किसी को भय देना है और न किसी का भय मानना है। दूसरी बात यह थी कि यदि किसी गरीब के साथ अन्याय हो रहा है तो उसकी तरफ खड़े हो जाओ। यदि तुम्हारे अन्दर शक्ति है फिर तो तुम बराबर खड़े हो जाओ, यदि उतनी शक्ति नहीं है तो फिर उसके साथ हमदर्दी रखो। यदि प्रत्यक्ष तौर पर हमदर्दी भी नहीं रख सकते तो फिर अपने मन में तो अवश्य ही रखो तथा अरदास करो कि महाराज! यह गरीब मार हो रही है। यथा -

जैसा बितु तैसा होइ वरतै

अपुना बलु नहीं हारै ॥

अंग - 679

जितनी शक्ति परमेश्वर ने दी है, उसका प्रयोग करो और अपना बल मत हारो। झूठ की मदद मत करो और उसे घटाने का प्रयास करो। यह बहुत बड़ा उपदेश श्री गुरु तेग बहादुर जी ने दिया। श्री गुरु जी न तो तिलक में विश्वास करते थे और न ही जनेऊ में तथा न ही सुन्नत में उन्हें कोई विश्वास एवं न ही उन्हें किसी रूप रेखा या भेष में कोई भरोसा था। किताबों में हो सकता है कि लिखा हुआ हो लेकिन श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी में इसका उल्लेख कहीं नहीं मिलता है। जो तख्त का मालिक होता है उसकी बात चला करती है। जब हम लोग कहते हैं कि चवर तख्त के मालिक, तो फिर तख्त का मालिक तो मौजूद है और उसी की बात चलेगी। ऐसा तो नहीं हो सकता है कि अमुक व्यक्ति का हुक्म चला था, अमुक का हुक्म चला था, अमुक ने यह कहा, अमुक ने वह कहा। गुरुओं ने कोई ऐसी बात नहीं की या

कही जो कि श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के प्रतिकूल हो अर्थात् जो श्री गुरु ग्रन्थ साहिब के आशय से मेल न खाती हो, वह बात श्री गुरु जी ने नहीं की क्योंकि वहाँ पर कथनी व करनी का सुमेल था। ऐसा नहीं था कि कवियों की भांति कविता बना डाली या लेखकों ने कोई लेख लिख दिया लेकिन अपने जीवन में उसका कोई असर नहीं है। जिस समय हम किताब पढ़ते हैं तो उस समय हम महसूस करते हैं कि यह व्यक्ति तो बहुत ऊँचा है। लेकिन जब हम पास में जाकर देखेंगे तो हमें पता चलेगा कि इसने तो लोगों के ख्याल चोरी किए हुए हैं। इसने तो हजारों किताबें रख कर उनमें से चुन-चुन कर एक गुलदस्ता बना दिया है। गुलदस्ता तो खूबसूरत है लेकिन गुलदस्ता बनाने वाले का जीवन खूबसूरत नहीं है और यह एक बहुत बड़ा भ्रम उत्पन्न हो जाता है। लेकिन गुरुओं के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं थी। श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर गुरु साहिबान ने जो भी कहा है, उनका जीवन उससे विपरीत नहीं था। उनका जीवन उनकी कथनी के अनुसार ही था। यदि लेखक का मन विपरीत है तो लेखक ने अपने मन की बात लिख डाली, अपने ख्याल को लिख डाला, तो हमें उस व्यक्ति विशेष की बात को मानना कोई आवश्यक नहीं है। गुरु साहिबान किसी भी व्यक्ति के ऊपर कोई पाबन्दी नहीं लगाते थे, जिस प्रकार से व्यक्ति पैदा हुआ है, उसे उसी रूप में रहने की ताकीद करते थे। यदि आप पाबन्दी लगाते भी थे तो आत्म चरित्र की ही लगाते थे। यदि हमारे सिर पर केश हैं तो ये दरगाह से ही आए हैं। यह कोई ऐसी बात तो है नहीं कि आप लोग दवाईयां लगा लगा कर अपने शरीर पर उगाओ। हाँ, जो इसके विपरीत था, यानि कि केशों को काटना, उसे आपने रोक दिया और आपने कहा कि कुदरती तौर पर जैसे हो वैसे ही रहो। किसी समय केशों के सम्बन्ध में भी गहरी खोज हो जाएगी, तब यह पता चलेगा कि ये हमारे शरीर के लिए कितने अधिक आवश्यक हैं।

श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं कि तमोगुणी भोजन मत खाओ -

कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंग्रितु लोनु॥

अंग - 1374

सादा खाना खाओ -

हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु॥ अंग - 1374

पहले जानवरों को मारकर खाओ, फिर उसके बदले

में अपने गले को कटाओ। 'एहेरा' कहते हैं शिकार करके खाने को। हेर वृत्ति का तात्पर्य है शिकार वाली वृत्ति। इस प्रकार जो यह कहता है कि माँस खाने की कोई मनाही नहीं है तो यह प्रचार गलत हो जाता है। अतः साधुसंगत जी! श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी से बाहर की किसी भी बात को बिल्कुल भी मत मानो। चाहे कोई कुछ भी कहता रहे। यदि हिम्मत है तो उससे पूछ लो कि गुरवाणी में इसका प्रमाण कहाँ पर है? यदि कोई बात गुरवाणी के साथ मिलती है तो उसे मान लो अन्यथा उसे अस्वीकार कर दो। लेकिन हमें तो यह पता ही नहीं चल पाता है कि यह गलत कह रहा है अथवा सही कह रहा है क्योंकि शब्द की शक्ति बहुत जबरदस्त होती है।

इस प्रकार साधुसंगत जी! जिस समय श्री गुरु तेग बहादुर महाराज जी को बहुत बड़ी कुर्बानी देनी पड़ी तो उसके साथ चुपचाप पौने दो सौ वर्षों तक संघर्ष चला आ रहा था। संघर्ष यह था कि सबको आजादी चाहिए जिसे कि मानवीय अधिकारों के तौर पर प्रस्तुत किया जाता है। उस समय भारतवर्ष के अन्दर मानवीय अधिकारों का नामोनिशान नहीं था। उस समय केवल जोर का राज्य था या मूर्खों का शासन था। या इसे यूँ कह लो कि मानवीयता से पागल हुए लोगों का शासन था। उन लोगों के मन में परमेश्वर का भय लेशमात्र भी नहीं था लेकिन विडम्बना की बात यह थी कि वे अपने अत्याचारपूर्ण काम को पुण्य मानते थे। जैसे कि भूमिया चोर, लोगों की लूटमार करके, दान किया करता था। इसी तरह से ये लोग भी अपने अत्याचारपूर्ण कार्य को पुण्य समझते थे। इनके कार्य जुल्म को पराकाष्ठा थी। पौरस का युद्ध हुआ और अत्याचारी लोगों ने पाँच हजार लोगों को एक पंक्ति में खड़ा करके कत्ल कर दिया गया। अयोध्या पर हमला हुआ, चौदह हजार लोगों को एक लाइन में खड़ा कर के उनके सिर काट डाले गए। इसी प्रकार बनारस पर हमला हुआ, जहाँ पर कि भारतवर्ष के सर्वाधिक विद्वान लोग रहते थे और इसलिए उसे काशी कहते हैं, लोगों को एक लाइन में खड़ा करके एक बार पूछा गया कि यदि प्राणों की रक्षा चाहिए तो इस्लाम में आ जाओ अन्यथा प्राणों से हाथ धो बैठोगे क्योंकि हमने भारतवर्ष में तिलक और जनेऊ को नहीं रहने देना है। उस समय उनके इन्कार करने पर तैंतीस हजार लोगों को एक पंक्ति में खड़ा करके कत्ल कर दिया गया। ये जो बातें मैं बोल रहा हूँ, ये सभी इतिहास के पन्नों में दर्ज हैं। यहीं बस नहीं, इसके बाद उस अत्याचारी शासक ने लिखा

है कि आज मैंने बहुत ही पुण्य का कार्य किया है, क्योंकि खुदा की दुनिया में से इतने काफिर लोगों को चुन-चुन कर मार डाला है तथा इतने लोगों को मुसलमान बना डाला है। इसी प्रकार उसने 29000 लोगों को खड़ा कर लिया और चारों तरफ धूनियां गाड़कर रस्सियों से बाँध दिया तथा सब के हाथ पीछे करके बाँध दिये। इसके बाद चारों तरफ से रूई लपेट दी गई और आग लगा दी गई। अब 29000 लोग जल रहे हैं, कितनी चीखें सुनाई पड़ रही होंगी, कितने लोग परमेश्वर को याद कर रहे होंगे। इतना बड़ा घोर जुल्म करने के बाद उसने लिखा है कि आज मैंने बहुत बड़ा पुण्य का कार्य किया है और मेरे लिए बहिश्त के दरवाजे अवश्य ही खुले होंगे। इस प्रकार टर्की से आकर तैमूर बादशाह ने 1,25,000 लोगों का कत्ल कर दिया। उसकी सेना की संख्या डेढ़ लाख थी। उसने अपनी सेना से कहा देखो! भारतवर्ष में तुम लोग आए हो इनके पास कोई दौलत नहीं रहनी चाहिए, कोई बच्चा नहीं रहना चाहिए, कोई अच्छी लड़की नहीं रहनी चाहिए, तुम्हें सारी छूट है कि सब कुछ लूट लो। इस प्रकार 1,50,000 की सेना ने भारत को जी भरकर लूटा और कितना लूटा इसका कोई अनुमान नहीं है।

इस प्रकार भारतवर्ष के अन्दर तैमूर ने असीमित जुल्म किए और उसके बाद उसने अपनी पुस्तक में लिखा है कि मैंने भारतवर्ष में जाकर पुण्य का कार्य किया है। मैंने वहाँ पर साल लाख काफिरों का कत्ल करवाया तथा ढाई लाख लोगों को मुसलमान बना लिया।

इस प्रकार से जुल्म होता चला गया, महमूद गजनवी ने एक बहुत ही शानदार मन्दिर को क्षणभर में नेस्तनाबूद करके उस स्थान पर मस्जिद बनवा दी। उस मन्दिर की इमारत इतनी शानदार थी कि उस प्रकार की इमारत उस समय कहीं भी सुनने या देखने में नहीं आती थी। उस मन्दिर के निर्माण में 80 करोड़ स्वर्ण मोहरों का खर्च आया था। यह रकम उस समय की है जिस समय एक रुपए के नौ मन चने आया करते थे। 80 करोड़ स्वर्ण मोहरों का तात्पर्य है कि उसके ऊपर खरबों रुपया लगा हुआ था। उसे बनाने के लिए पाँच सौ मिस्री, सौ सालों तक लगे रहे। लेकिन उसने कुछ ही देर में उसे समाप्त कर डाला। इसी प्रकार दक्षिणी भारत में भिलसा का मन्दिर बहुत ही विशाल था, जिसके ऊपर शमसुद्दीन गौरी ने सन् 1266 में चढ़ाई की तथा इसे तोड़ते समय उसे बहत्तर करोड़ रुपयों के हीरे हाथ लगे। यह मन्दिर 315 फुट ऊँचा

तथा आधा कोस लम्बा था तथा इसका निर्माण 300 सालों में हुआ था। गौरी ने इस मन्दिर की समस्त मूर्तियों को एकत्र करके तथा उनके ऊपर पचास हजार लोगों को खड़ा करके कत्ल कर दिया। इस कत्लेआम से सारी मूर्तियां खून में डूब गईं, उसके बाद उसी स्थान पर 25000 लोगों ने खड़े होकर नमाज पढ़ी तथा अल्लाहताला को कहा कि हे अल्लाहताला! आज हमने जितना भी पुण्य कार्य किया है इसे हमारे लेखे में डाल दो।

इसी प्रकार मोहम्मद कासिम आया उसने ग्यारह हजार लोगों को गुलाम बनाकर खलीफा हरनशीद के पास बगदाद में भेजा तथा बहमनाबाद में 16,000 लोगों का कत्ल किया।

संवत् 700 में जब अब्दुल रजाक भारत में आया तो उसने यहाँ के भारत को देखकर वापिस टर्की में जाकर बताया कि मैं एक स्वर्ग देखकर आया हूँ। क्योंकि भारतवर्ष एक स्वर्ग है। जब उन्होंने पूछा कि वहाँ पर ऐसी क्या बात है? उसने बताया कि वहाँ के लोग इस प्रकार के हैं कि न कोई झूठ बोलता है, न कोई मदिरा ग्रहण करता है, न कोई व्यभिचार करता है, और न कोई चोरी करता है। प्रशासन की तरफ से आदेश है कि घर व दुकान के दरवाजों को बंद नहीं करना है। जौहरियों के दरवाजे खुले हैं, जिस प्रकार कि अपने यहाँ अनाज के ढेर लगे हैं। वहाँ पर सोने-चाँदी या हीरों की कोई चोरी नहीं होती। इस प्रकार उसने भारत की जी भरकर प्रशंसा की तथा यहाँ के साधुओं के वचन भी लिखे।

इसी प्रकार सिकन्दर लोधी आया, जिसने नामदेव के पास गाय को मारकर रख दिया तथा जिसने कबीर साहिब को पकड़कर आग में जलाने व पानी में डुबोने की कोशिश की -

गंगा की लहरि मेरी टूटी जंजीर ॥ अंग - 1162

उसने लिखा है कि मैंने चार लाख बत्तीस हजार मुसलमान बनाए जैसे कि हम लोग कहते हैं कि हमने इतने लोगों को अमृतपान करवाया। इसी प्रकार उसने आगे लिखा है कि मैंने 2,53,000 लोगों का कत्ल करवाया।

इस प्रकार श्री गुरु जी कथन करते हैं कि इस प्रकार के अधर्म का युग चल रहा था और विडम्बना यह थी कि इस कार्य को वे धर्म का नाम देते थे। अब गुरु जी कहने लगे कि इन लोगों को कैसे समझाया जाए? जब व्यक्ति अधर्म को ही धर्म कह रहा है तो उसे समझाना बहुत कठिन होता

है। जैसे कि हम लोग कहते हैं कि ऐ भद्रपुरुष! तुम बकरे को क्यों मारते हो? तो वह जवाब देता है कि मैं इसे मारता नहीं हूँ बल्कि इसकी मुक्ति कर रहा हूँ। ऐ प्रेमीपुरुष! मुक्ति तो अभी तुम्हारी ही नहीं हुई है तो तुम दूसरों की मुक्ति कैसे कर दोगे? इसी प्रकार से उनके मन में भी गलत धारणा बैठ गई थी, जिसके लिए भाई साहिब भाई गुरदास जी को लिखना पड़ा कि उस समय घोर अंधकार छाया हुआ था। साधुसंगत जी! इस गलतफहमी में मत रहना कि उस समय कोई कोहरा छाया हुआ था या आँधी चल रही थी, जैसे कि आज हम लोग सुबह गाड़ी से जब गए तो 20 गज पर भी कुछ नहीं दिख रहा था। गाड़ी के तीनों बल्ब जगाने के बाद भी कुछ नहीं दिख रहा था क्योंकि धुन्ध के अन्दर प्रकाश नहीं होता है। लेकिन गुरु नानक देव जी ने आकर उसी धुन्ध को हाथ डाला -

*सतिगुर नानक प्रगटिआ मिटी धुंद जग जानण होआ ॥
भाई गुरदास जी, वार 27/1*

गुरु जी प्रकाश को लेकर आए। उस समय की हालात को ब्यान किया जाता है कि दुखी रो रहे थे, कोई उनकी फरियाद सुनने वाला नहीं था। मानवता नाम की चीज समाप्त हो चुकी थी। मानवता को समझने का कोई भी यत्न नहीं करता था क्योंकि समझना तो शासक वर्ग ने ही था, दूसरे तो बेचारे लाचार ही होते हैं। भाई साहिब भाई गुरदास जी ने उस समय के वातावरण का रेखाचित्र इस प्रकार से खींचा है -

*धारना - रसारे जग ते पसारा हो गिआ पाप दा,
रोणा कौण सुणे दुखी दा।*

जब कोई कानून ही न रहा हो, राज्य का कोई उसूल ही न रहा हो तो फिर गरीब की बात को कौन सुनता है? न कोई न्यायालय सुन सकता है और न ही कोई कचहरी। कुछ समय पहले इमरजैसी के दौरान न्यायपालिका को काम करने से रोक दिया गया था। उस समय हम लोगों की जमीनें छीन ली गईं, जब हम लोग न्यायालय में जाते थे तो हमें वहाँ से कोई जवाब नहीं मिलता था क्योंकि उन्होंने कानून ही ऐसे बना डाले थे कि अरबों रुपयों की जमीन को सीलिंग में शामिल कर डाला। उस समय यदि कोई आकर फरियाद करता था तो अधिकारीगण कहते थे कि कानून तो समाप्त हो चुका है। अब तो और प्रकार के अधिकार चल रहे हैं। अतः आज के जमाने में भी इस प्रकार की बातें देखने में

आ जाती हैं। इस प्रकार के मूलभूत अधिकारों को मानवीय अधिकारों की संज्ञा दी जाती है। जो लोग इन अधिकारों की बात करते हैं वे बहुत सुलझे हुए लोग हैं। लेकिन ज्यादातर 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली बात ही चलती है। अतः भाई गुरदास जी लिखते हैं कि वह समय ही ऐसा था कि लोगों का विश्वास धर्म के ऊपर से उठ चुका था और हालात ऐसे हो गए थे कि जितने लोग, उतने ही धर्म। यदि एक घर में दस लोग हैं तो कोई चन्द्रमा को मानता है, कोई सूरज को, कोई वृक्ष को, कोई कब्र को, कोई रामचन्द्र जी को, कोई यमराज को, कोई किसी अन्य चीज या देवते को मानता है अर्थात् किसी एक को मानने वाला कोई नहीं। इस प्रकार की हास्यास्पद स्थिति भारतवर्ष की हो चुकी थी। उस समय एक महान पैगंबर मोहम्मद साहिब का आगमन इस संसार में हुआ। वे बहुत ही तपस्वी, त्यागी व सुलझे हुए पुरुष थे। लिखने वाले चाहे कुछ भी लिखते रहें लेकिन वे बहुत महान थे। यदि वे इतने उच्चावस्था वाले न होते तो उन्हें परमेश्वर का ज्ञान नहीं हो सकता था। चालीस वर्ष की आयु में उनके अन्दर ज्ञान का प्रकाश हुआ और उसके बाद उन्होंने सो रहे संसार को जगाना शुरू किया तथा उन्होंने एक धर्म चलाया जिसे प्यार व मोहब्बत का धर्म, इस्लाम का धर्म कहते हैं, लेकिन उसके अन्दर जल्दी ही असन्तुलन पैदा हो गया अर्थात् लोगों ने उसे चलने नहीं दिया। तत्कालीन लोगों ने मोहम्मद साहिब को भी मारकर फेंक दिया तथा अन्य साथियों को भी मार डाला। इसके बाद मुर्दा लोगों में से उठकर मोहम्मद साहिब मदीना चले गए। वहाँ पर जाकर उन्होंने कहा कि इन ख्यालों की रक्षा के लिए, नेकी को प्रकट करने के लिए एक व्यवस्थित दल की आवश्यकता है। इस प्रकार दल का निर्माण हो गया और जल्दी ही उसमें सन्तुलन कायम हो गया। जिस समय किसी धर्म में सन्तुलन कायम हो जाता है तो उसके मूल्यों की उपयोगिता बढ़ जाती है। इस प्रकार इस्लाम धारण करने वाले व्यक्ति तगड़े हो गए और दूसरे हारने लग पड़े। निःशंक रूप से लोग वही थे लेकिन उन्होंने इस्लाम धारण कर लिया। अब यहाँ पर एक बात और हो गई कि इन लोगों ने कुरान शरीफ की आयतों के मतलब बदल दिए। इन्होंने काफिर का मतलब यह निकाला कि जो इस्लाम के अतिरिक्त अन्य धर्म वाला है। वास्तव में काफिर तो वह होता है जिसे हम बेमुख कहते हैं। यथा -

मनमुखु दुख का खेतु है दुखु बीजे दुखु खाइ ॥

दुख विचि जंमै दुखि मरै हउमै करत विहाइ ॥

अंग - 947

अपने मन के पीछे चलने वाला व्यक्ति, चाहे किसी भी धर्म का है, वह मनमुख ही होगा। परमेश्वर के ऊपर विश्वास न करने वाला व्यक्ति काफिर ही होगा। अतः परिभाषा ही गलत हो गई। फलस्वरूप अत्याचार के बल पर दूसरे लोगों को मुसलमान बनाना शुरू कर दिया गया। इस प्रकार मोहम्मद साहिब हुए और चार यार हुए जिनके नाम थे - अब्बूबकर सद्दीक, उमरफारूक, उस्मानगनी, हजरत अली। अतः इस्लाम को मानने वाले चार हिस्सों में बंट गए। इसके बाद बहतर ख्याल हुए जैसे कि अब श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी को मानने वाले तो बहुत हैं लेकिन कई शाखाएं या सर्किल बनते जाते हैं और उनके अपने अपने ख्याल बनते जाते हैं। एक का ख्याल, दूसरे से नहीं मिलता है। इसी प्रकार इस्लाम के अन्दर शिया हो गए, सुन्नी हो गए और दूसरे हो गए तथा धीरे-धीरे ये सब आपस में ही उलझने लगे। यथा -

कउमि बहतरी संगि करि

बहुत बिधि वैरु विरोध पसारा।

रोजे, ईद, निमाजि करि

करनी बंदि कीआ संसारा ॥

भाई गुरदास जी, वार 1/20

सारे संसार को उन्होंने कर्मों में बाँध दिया। कहने लगे क्या रोजे रखने गलत हैं? गुरु जी ने कहा, नहीं। क्या व्रत रखने बुरे हैं? गुरु जी ने कहा, नहीं। गलत तब होते हैं जब कि कोई जोर से रखाए।

जब भाई मनसुख जी लंका में जाते हैं तो उसे राजा शिवनाभ ने बहुत बड़ी सजा दी क्योंकि उसने व्रत नहीं रखा था। गुरु जी ने कहा कि व्रत तो हम लोग रोज रखते हैं। हम चार रोटियों की जगह तीन रोटियाँ ही खाते हैं। इसलिए हम तो रोज ही व्रत रखते हैं -

अल्प अहार सुल्प सी निद्रा

दया छिमा तन प्रीति ॥

(पातशाही 10)

तुम लोग तीस दिन रोजे रखते हो, हम लोग तो सारा साल ही रखते हैं। तुम लोगों ने तो बंधन में डाल दिया है। दो ईदें हो गई हैं और पाँच नमाजें हो गई हैं। तुम कहते हो कि 5 बार परमेश्वर को याद करना है और शेष सारा दिन चाहे उसे भूले रहो। यदि ऐसा करते हो तो मुसलमान अन्यथा काफिर। तुम लोगों ने तो व्यक्ति को जंजीरों से बाँध दिया

है -

..... करनी बंदि कीआ संसारा ॥

पीर पैकंबर, अउलीए,

गउस, कुतब बहुत भेख सवारा।

भाई गुरदास जी, वार 1/20

बहुत सारे भेष बन गए हैं। पीरों का और है, पैगम्बरों का और है, गउस का और है, कुतबां का और है, यानि कि सबने अलग-अलग भेष धारण कर रखे हैं तथा काम क्या करने लगे हैं?

ठाकुर दुआरे ढाहिकै

तिहि ठउड़ी मासीत उसारा।

भाई गुरदास जी, वार 1/20

एक भगवान के मन्दिर को गिराकर दूसरे भगवान के मन्दिर को बना लिया। अब इस प्रकार कितने दिल टूटे? भद्रपुरुष! तुमने उसे क्यों गिराना था? यदि आवश्यक है तो पास में अपना एक और मन्दिर बना लेते। इसी से फसाद पैदा होता है। एक मन्दिर गिराने से लाखों लोगों का दिल टूटता है और इसी गलती को वे लोग बार-बार कर रहे थे। बड़े-बड़े मन्दिरों को जिन्हें देखने के लिए विदेशों से लोग आया करते थे, इस प्रकार के तीन हजार मन्दिरों को उन्होंने गिरा दिया। सात अजूबे तो संसार में मशहूर हैं लेकिन यहाँ के अजूबों की तो गिनती ही नहीं है। गरीबों को इन्होंने मारना शुरू कर दिया -

मारनि गऊ गरीब नो धरती उपरि पापु बिथारा।

भाई गुरदास जी, वार 1/20

जब गरीब को मारा जाता है तो परमेश्वर का दिल दुख जाता है। वैसे तो परमेश्वर दुख व सुख से बाहर है लेकिन वह रहता तो प्रत्येक के हृदय में है -

संतन दुख पाए ते दुखी

सुख पाए साधन के सुखी कबयो बाच बेनती चौपई

काफर मुलहिद इरमनी रूमी जंगी दुसमणि दारा।

भाई गुरदास जी, वार 1/20

ये सारे तथाकथित धार्मिक लोग आपस में लड़ने लग पड़े। इनके सामने कोई उद्देश्य नहीं था। ये औरतों के लिए ही लड़ने लग पड़े। राजभाग के लिए तो राजा लोग आपस में लड़ा ही करते थे लेकिन भारतवर्ष के अन्दर औरतों के लिए दो ऐसी लड़ाइयाँ लड़ी गई जिन्हें भारत कभी भी भुला नहीं पाएगा। एक लड़ाई तो द्रौपदी वाली लड़ाई थी, जिसके

कारण महाभारत का युद्ध हुआ और 45,00,000 लोग असमय काल के गर्त में समा गए। दूसरी लड़ाई सीता जी के जाने के कारण रावण से हुई। ये दोनों लड़ाईयां आज तक मशहूर हैं। इस लड़ाई के कारण रावण को अपनी सारी सेना को मरवाना पड़ा और आखिर में लंका से हाथ धोने पड़े। लेकिन इधर सात आठ सौ साल पहले भी लड़ाई लड़ी गई। चित्तौड़गढ़ के राजा भीम सिंह की रानी पद्मिनी थी, जिसे प्राप्त करने के लिए लड़ाई लड़ी गई और हजारों लोग मारे गए। इस लड़ाई में लगभग 15,000 राजपूत मारे गए और लगभग 20,000 लोग मोहम्मद गौरी के मारे गए। इस लड़ाई के आखिर में सारी औरतें आग में छलांग लगा कर जल गईं। केवल एक वृद्धा रह गई थी जो कि आँखों से अंधी थी। भीम सिंह ने अपने सारे घोड़ों की आँखें फोड़ डालीं ताकि वे दुश्मनों के हाथ न लग जाएं। सारे हीरे जवाहारात जला दिए गए। जब मोहम्मद गौरी ने आकर भीम सिंह से पूछा कि पद्मिनी कहाँ है? तो उसने राख के ढेर की तरफ इशारा करते हुए कहा कि इसके अन्दर पद्मिनी को ढूँढ़ लो।

इसी प्रकार से भटनेर वाले राजा भट्टी की लड़की चंचल कुमारी के लिए भी बहुत बड़ा युद्ध हुआ। बस, उस समय इसी प्रकार के युद्ध ही हुआ करते थे और धर्म की बात कोई भी नहीं करता था -

चारे जागे चहु जुगी पंचाणि प्रभु आपे होआ।
आपे पटी कलमि आपि आपे लिखणिहारा होआ।
बाझु गुरु अंधेरु है
खहि खहि मरदे बहु बिधि लोआ।
वरतिआ पापु जगतु ते
धउल उडीणा निसदिनु होआ।

भाई गुरदास जी, वार 1/22

जब पाप बहुत अधिक बढ़ जाता है तो उस समय धरती का सन्तुलन लड़खड़ा जाता है क्योंकि गुरु जी कहते हैं कि यह धरती बैल के सहारे से नहीं बल्कि धर्म के सहारे से खड़ी है। यदि धर्म बढ़ेगा तो सुख शान्ति बढ़ेगी। यदि धर्म घटेगा तो धरती का सन्तुलन बिगड़ेगा और मौसम का सन्तुलन भी बिगड़ जाएगा। अनावश्यक वर्षा होगी, भूचाल आएंगे, अनेकों आपदाएं आएंगी क्योंकि धर्म का सन्तुलन बिगड़ गया है। सूक्ष्म लहरें आदमी के मन में से उठती हैं यदि परमेश्वर की तरफ वाली लहरें उठती हैं तो संसार सुखी बसता है, तथा दुख निकल जाता है यदि उसके विपरीत उठती है तो धरती

डोलने लग जाती है। अब मान लो धरती एक मिलीमीटर जितनी भी हिल जाए तो उसी समय किसी दूसरे ग्रह के साथ टकरा जाएगी। गुरु जी कहने लगे कि इस प्रकार अब उस धउल (धर्म) बोझ नहीं उठा सकता है -

वरतिआ पापु जगतु ते
धउल उडीणा निसदिनु होआ।
बाझु दइआ बलहीण
होइ निघर चले रसातलि टोआ।

भाई गुरदास जी, वार 1/22

दया समाप्त हो चुकी है, दया जो थी यह धर्म की माँ थी। यदि दया ही चली गई तो बच्चा क्या करेगा? वह तो बिल्कुल छोटा था।

धौलु धरमु दइआ का पूतु॥ अंग - 3

माँ चली गई, फलस्वरूप उसका बेटा (धर्म) नीचे बैठने लग पड़ा।

खड़ा इकते पैर ते पाप संगि बहु भारा होआ॥

भाई गुरदास जी, वार 1/22

भारी हो गया, सन्तुलन सही नहीं रहा। चहुँओर पाप का ही विस्तार हो गया। अब इस पाप के बोझ को यदि कोई रोक सकता है तो वह साधु ही रोक सकता है। अन्य कोई भी इसे नहीं रोक सकता है लेकिन विडम्बना यह है कि संसार में साधु तो कोई दिखाई ही नहीं पड़ रहा है -

थंमे कोइ न साध बिनु
साधु न दिसे जगि विचि कोआ॥

भाई गुरदास जी, वार 1/22

साधुओं का तो अभाव ही हो गया है -

धरम धउलु पुकारे तलै खड़ोआ॥

भाई गुरदास जी, वार 1/22

अब साधु तो संसार में रहा नहीं है इसलिए धर्म जो है वह पुकार कर रहा है। भाई गुरदास जी ने यहाँ पर बहुत बड़ी बात लिखी है कि साधु संसार का पिलर होता है। यदि संसार के अन्दर से साधु कम हो जाएंगे तो सबकी वृत्ति चोरों व डाकुओं वाली बन जाएगी, चहुँओर लूटमार का ही बोलबाला हो जाएगा। चोरी करो, छीनो, झपटो, धर्म नाम की तो कोई चीज है ही नहीं। इस समय भी ऐसा ही समय चल रहा है। रिश्वतें चलती हैं, धोखे चलते हैं, मिलावटें चलती हैं। पी.जी.आई. चाहे एक नहीं, बल्कि पचास बना डालो तो भी बीमारियां दूर नहीं होंगी क्योंकि धर्म हिल गया है। खाने-

पीने के लिए कोई भी सही चीज नहीं मिल रही है। चाहे जितना अधिक पैसा खर्च लो। कपड़ा लेने जाओ तो पता ही नहीं लगता है कि क्या दे दिया है, वह शरीर से ही चिपक जाता है। हरेक कहता है कि पता नहीं मेरी चमड़ी को क्या हो गया है? कपड़ों वालों ने ही कुछ ऐसा दे दिया है। साधु संगत! इस प्रकार के उद्योग लग गए हैं जो कि व्यक्ति को व वतावारण को नुक्सान पहुँचाते हैं। इस प्रकार सब कुछ ही गलत हो चुका है।

इस प्रकार भाई गुरदास जी कहते हैं कि साधू कोई नहीं रहा है और साधू ही संसार का पिलर हुआ करता है, साधू तो प्रकाश स्तम्भ होते हैं जिस क्षेत्र में साधू रहते हैं, उस क्षेत्र को सुधारते रहते हैं लेकिन साधू कौन होता है यह भी सोचने वाली बात है। साधू वह होता है जिसके अन्दर परमेश्वर का ज्ञान प्रकट होता है, यदि किसी ने केवल भेष धारण कर रखा है तो वह साधू नहीं हुआ करता है या जो किसी स्थान अथवा डेरे का मालिक हो तो वह साधू नहीं हुआ करता है। साधू की परिभाषा है -

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु ॥

धनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥ अंग - 319

जिसके हृदय में से पाँचों भ्रमों का पूर्णरूपेण नाश हो गया हो, जिसे यह संसार परमेश्वर रूप दिखाई देने लग जाए। जब आँखों से देखता है तो भी परमेश्वर, जब कानों से सुनता है तो भी परमेश्वर ही सुनता है, उसे परमेश्वर के बिना कुछ भी नहीं सुनता है।

हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि ॥

अंग - 1420

जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू

सु बिनु हरि जापत है नही होर ॥ अंग - 1265

जिसकी इस प्रकार की दृष्टि हो जाती है वह किसी एक धर्म का व्यक्ति नहीं रह जाता है। यह भी बहुत ही भ्रम की बात है। साधू का धर्म तो परमेश्वर ही होता है। परमेश्वर के अलावा उसका और कोई धर्म नहीं हुआ करता है। दरअसल सबका धर्म एक ही होता है, कभी दो धर्म नहीं होते हैं। गुरु जी ने भी सबको यही बतलाया है -

बीज मंतु सरब को गिआनु ॥

अंग - 274

जो बीज मन्त्र तक पहुँच गया है उसके लिए सारी सृष्टि एक ही हो गई है, उसके लिए फिर दो नहीं रहती है। भाई

कन्हैया जी को क्या कोई दूसरा दिखाई दिया? वह तो सबको पानी पिलाता रहा था। गुरु दशमेश जी के समक्ष पेशी हुई -

गुरु जी - भाई कन्हैया! तुम मुगलों को पानी पिलाते हो?

कन्हैया - नहीं, सतगुरु जी।

दशमेश जी - फिर क्या तुमने पहाड़ियों को पानी पिलाया?

कन्हैया - नहीं, महाराज जी।

दशमेश जी - फिर तुमने खालसे को पानी पिलाया है?

कन्हैया - नहीं, महाराज जी।

दशमेश जी - तो फिर तुमने किसे पानी पिलाया है?

कन्हैया - महाराज जी! यह तो बहुत पहले की बात है जबकि मुझे लोग अलग-अलग प्रकार के दिखाई पड़ते थे लेकिन अब तो आपने मेरे नेत्रों में ज्ञान का सुर्मा डाल दिया है जिसके कारण अब तो मुझे आपके बिना कोई दूसरा दिखाई ही नहीं पड़ता है। अब मैं जिधर भी देखता हूँ उधर तुम्हीं दिखाई पड़ते हैं, दूसरा कोई नजर ही नहीं आता है-

धारना - तूहीं तूहीं मोहिना - 2

गुरहि दिखाइओ लोइना ॥

ईतहि उतहि घटि घटि घटि घटि

तूही तूही मोहिना ॥

अंग - 407

गुरु दशमेश जी अपने आसन से उठे और उठकर अपने आलिंगन में ले लिया तथा बोले कृतार्थ! कृतार्थ! कन्हैया! अभी तक तुम मुझे केवल पानी ही पिलाते थे लेकिन अब तुम मेरे जख्मों पर मरहम भी लगाया करो। इसलिए आज से तुम यह मरहम की डिब्बी भी अपने पास रख लो तथा पट्टियाँ भी रख लो। पहले जख्मों को साफ किया करना उसके बाद मेरे जख्मों पर मरहम लगा कर पट्टियाँ बाँध दिया करना। गुरु दशमेश जी अत्यन्त प्रसन्न हुए कि हमारे यहाँ भी साधू बन गया है -

थंमे कोई न साधु बिनु

साधु न दिसै जगि विचि कोआ ।

भाई गुरदास जी, वार 1/22

अकाल पुरुष का हुक्म हुआ और गुरु परमेश्वर के रूप में गुरु नानक देव जी प्रकट हुए लेकिन शेष नौ

ज्योतियां कौन थी? नौ शरीर बदले लेकिन ज्योति तो वही थी। श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी भी गुरु नानक ही हैं, श्री गुरु तेग बहादुर जी भी गुरु नानक ही थे। केवल बात करने के लिए फर्क होता है। जैसे कि यदि हम कहने लग जाएं कि श्री गुरु नानक देव जी ने चाँदनी चौक में शहादत दी तो सारे कहने लग जाएंगे कि यह कैसी बातें करने लग पड़ा है? या तो यह हमारी समझ से ऊपर की बात कर रहा है और या फिर इसे कुछ पता ही नहीं है। वे कहेंगे शहीदी तो गुरु तेग बहादुर जी ने दी थी और यह कह रहा है कि श्री गुरु नानक देव जी ने शहीदी दी है। फिर यह भी कहा जाता है कि उनका नाम था। यह बात तो ठीक है कि उनका नाम था लेकिन श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर तो उनका नाम नहीं है वहाँ पर तो केवल नानक शब्द का ही प्रयोग होता है। जैसे कि पाँचवां नानक चौथा नानक, तीसरा नानक या नौवां नानक। कहीं भी यह नहीं लिखा है कि यह श्री गुरु तेग बहादुर जी ने लिखा है। जो हम लोग निम्नलिखित शब्द पढ़ते हैं तो यह श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर अंकित नहीं है। शब्द है-

*बाहि जिना दी पकड़ीअै
सिर दीजै बाहि न छोडीअै।
तेग बहादुर बोलिआ,
धरि पईअै धरम न छोडीअै।*

यह पंक्तियां श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी में दर्ज नहीं हैं। इस प्रकार से गुरु नानक देव जी की ज्योति ही सारे शरीरों के माध्यम से कार्य करती रही। अब धर्म मजबूत हो चुका था। लगभग 236 वर्षों तक उन्हें साधू बनाने के लिए संसार में रहना पड़ा। आपकी सोच थी कि साधू बना दो इसके बाद तो ये स्वयं ही सम्भाल लेंगे। यदि आप बली कन्धारी के पास गए तो उसके अन्दर से आपने अहंकार का लेशमात्र भी निकाल दिया यानि कि उसके अन्दर से शैतान को निकाल डाला और शरीर वही रहने दिया तथा उसे साधू बना डाला। यदि आप कौड़ा राक्षस के पास गए तो उसके अन्दर से राक्षस तत्व बाहर निकाल दिया तथा उसे साधू बना दिया और लोगों का मार्गदर्शक बनाकर उसे आसन पर बैठा दिया। यदि आप सज्जन ठग के पास गए तो ठग भाव उसके अन्दर से निकाल डाला तथा उसे साधू बना कर बैठा दिया। इसके बाद आप कहने लगे, सज्जन! यह जो आनन्द तुम्हें आया है यह तभी रह पाएगा यदि तुम इस पाप की कमाई को बाँट डालोगे।

उसने एक क्षण भी नहीं लगाया, कोई बहाना नहीं किया। वचन जैसे ही हुआ तो उसके बाद वह सौ-डेढ़ सौ राज मिस्त्रियों व मजदूरों को ले आया तथा कहने लगा इस सारी हवेली को गिरा दो। मिस्त्रियों व मजदूरों ने सारी हवेली की ईंट-ईंट कर डाली तथा ढिंढोरा पिटवा दिया कि सज्जन ने महलों को ढाह दिया है, जिसने मलवा उठाना है आ जाओ, ईंटें तथा सारा माल खजाना पड़ा है, जिसने ले जाना है ले जाओ। तीन दिनों के अन्दर सारा कुछ उठवा दिया तथा तीसरे दिन एक वृक्ष के नीचे बैठ गया जो साथीगण थे उन्हें कहा कि अब हमारा, तुम्हारा कोई साथ नहीं रहा है, इसलिए तुम लोग अब जा सकते हो। यदि हमारे जैसे रहना है तो रहो, अन्यथा जाओ।

एक झोंपड़ी डाल दी गई। चारपाई के ऊपर महाराज जी बैठे हैं, रस्सी से बुनी हुई चारपाई है। अब और तो कोई चीज शेष रही ही नहीं थी। गुरु नानक देव जी बोले, भाई सज्जन! एक मंजी (छोटी चारपाई) और मंगाओ। सज्जन ने मंजी मंगवा ली। आप कहने लगे, लो भाई सज्जन! इस मंजी के ऊपर हम तुम्हें बैठाते हैं। यह जो तुम्हारे अन्दर नाम का निवास हुआ है, इसे तुम सारे संसार को बाँट दो। अब हमने तुम्हें साधु बना दिया है, अब तुम ठग नहीं रहे हो।

साधुसंगत जी! श्री गुरु नानक देव जी साधू बनाने के लिए ही आए थे, क्योंकि संसार को साधू ही सम्भाल सकता है। एक व्यक्ति तो कुछ कर ही नहीं सकता है। यदि जगह-जगह पर लाइट हाउस हो तभी अन्धकार दूर हो पाता है। एक व्यक्ति तो संसार को संभाल ही नहीं पाता है। परमेश्वर ने तो जगह-जगह पर ड्यूटियां लगाई हुई हैं। अपनी-अपनी ड्यूटी के अनुसार परमेश्वर सबसे काम करवा रहा है। अतः महाराज जी कह रहे हैं कि प्रेमीजनो! इस प्रकार का समय था -

कली काती राजे कासाई

धरमु पंख करि उडरिआ॥

अंग - 185

धर्म तो खत्म ही हो गया था, जिस समाज में से धर्म निकल जाए तो वह समाज कैसा होगा? तो फिर वह समाज चोरों का, कातिलों का, डाकुओं का, निर्दयी लोगों का ही होगा। अब कई कहते हैं कि राजनीति में धर्म को मत मिलाओ। धर्म कहते चरित्र को। मजहब को धर्म नहीं कहते हैं। हाँ, यह कहना चाहिए कि धर्म में मजहब मत मिलाओ क्योंकि यदि महजब, धर्म में मिल जाएगा तो वह बहुत बुरा

हशर करता है। सारे मजहबों के अच्छे उसूलों को छंट कर दिल्ली का संवधान बना लो, कभी कोई विवाद हो ही नहीं सकेगा। उसूल बना लो कि इस प्रकार की बातें करनी हैं और इस प्रकार की बातें नहीं करनी हैं। जब हमारे मुखी धर्म वाले होंगे तो फिर तो वर्षा भी समय से ही हुआ करेगी, फिर न कोई विवाद होगा और न कोई हड़ताल हो पाएगी, फिर तो कर्मचारी भी जोर-शोर से काम करेंगे क्योंकि वहाँ पर धर्म ने राज भाग सम्भाल लिया होगा। राजा तथा प्रजा जब अधर्म का अनुसरण करने लग जाएंगे तो खींच बढ़ जायेगी। अतः धर्म उड़ गया, न ही समाज में धर्म रहा न किसी राजा का धर्म रहा। राजे कसाई बन गए, उन्होंने कल्युग की कैंची हाथ में पकड़ ली है -

*कूडु अमावस सचु चंद्रमा
दीसै नाही कह चड़िआ ॥*

अंग - 185

अमावस कूड़ की हो गई, सच का चन्द्रमा जो था वह छुप गया। अमावस एक दिन रही है, दूसरे दिन एकम का चांद आ जाता है। हम मत्था टेकते हैं कि हे ईश्वर! फिर से प्रकाश आ गया। कई दूज को मत्था टेकते हैं, वे प्रकाश को मत्था टेकते हैं। अमावस मनाते हैं कि आज अन्धेरा समाप्त हो जाएगा। इसी प्रकार इस जीवन की अमावस जब मना ली जाए तो फिर प्रकाश होना शुरू हो जायेगा -

हउ भालि विकुं नी होई ॥

अंग - 185

हम बेताब होकर, एक सांस होकर सच की खोज कर रहे हैं। परन्तु कोई मिलता नहीं है -

आधेरै राहु न कोई ॥

अंग - 185

हमने सभी को देखा है, योगियों में गए, मठों में गए, बड़े-बड़े पीरों के आश्रमों में गए। जो उस समय का सबसे बड़ा पीर था, वह बगदाद का पीर था, वह दस्तगीर पीर था। आपने उसके अन्दर से झूठ का पर्दा हटा कर ज्ञान का प्रकाश किया। उसके पुत्र का नाम बहलोल था। वहाँ पर अब भी पत्थर लगा हुआ है। गुरु नानक लिखते हैं बहलोल! तुम्हें ढूँढता में यहाँ पहुँचा था, क्योंकि वह प्यार वाली आत्मा थी। वह निःछल एवं प्रकाश वाली आत्मा था। गुरु नानक आ जाते हैं वहाँ वह फिर ऊँचा स्थान बनाता है, वहाँ गुरु नानक उस पर बैठते हैं तो सामने बैठ देखता रहता है। गुरु नानक जी वहाँ नौ महीने उस जगह (बगदाद) में बैठे रहे। अब कई कह देते हैं कि गुरु नानक हिन्दुओं के घर से मंगवा कर खाते थे लेकिन गुरु नानक की नजर में तो न कोई मुसलमान

है, न ही कोई हिन्दू। यह तो हमारे लिए है। कई लोगों को यह बात बुरी लगती है फिर गुरु नानक मुसलमानों के यहाँ से खाते रहे हैं? लेकिन गुरु नानक के सामने तो हिन्दू और मुसलमान एक ही थे। कहा कि यदि हमारे अन्दर लहू है, तो क्या तुम्हारे अन्दर दूध है? जैसे पांच तत्व तुम्हारे अन्दर हैं, वैसे ही हमारे हैं। वह वहीं बैठ गया, 36 वर्ष उसी दीवार की ओर मुँह करके बैठा रहा। धन्य था वह प्रेमी, जिसने गुरु नानक को एक बार में ही देख लिया। प्यार में इतना मस्त हुआ कि फिर उसने मुड़कर किसी दूसरी ओर नहीं देखा। उसने दीवार पर लिख दिया कि मैंने अल्लाह पाक की जात देखी है, अब मैं उसके बिना किसी और को नहीं देखना चाहता। उसका ध्यान इतना परिपक्व हो गया कि उसे गुरु नानक चबूतरे पर बैठे ही नजर आते रहे। उसने लिख कर लगा दिया कि उसने 36 साल यहाँ पर गुरु नानक के दर्शन किए हैं। मैंने किसी और को नहीं देखा। वह प्यार वाला था। गुरु नानक ऐसे सख्त आदमी के पास गये और उसे सन्त बना दिया। उसके वस्त्र नहीं बदलवाये, कुछ नहीं बदलवाया, अन्दर से साधू का का रूप बना दिया। अतः इस प्रकार साधु के बिना कोई रखने वाला नहीं है। अन्धेरे में कोई नहीं मिल रहा है -

हउ भालि विकुं नी होई ॥

आधेरै राहु न कोई ॥

विचि हउमै करि दुखु रोई ॥

कहु नानक किनि बिधि गति होई ॥

अंग - 185

संसार तो अहं में पड़ गया, अब संसार का उद्धार कैसे हो? अमावस छाई पड़ी है। कैसे उस समय अधर्म का बोलबाला था, यह बात एक दो उदारहणों से समझ आ जायेगी।

जब गुरु तेग बहादुर जी का समय था तो उस समय औरंगजेब का राज हो गया। उसने मीटिंग बुलाई सभी काजी, सूबेदार और मौलानाओं को बुलाकर कहा कि सारे भारतवर्ष में इस्लाम का धर्म लाया जाये। इस्लाम का झंडा फहराया जाए। किसी भी मन्दिर और ठाकुरद्वारे पर कोई दूसरा झंडा न रहे। तारे वाला झंडा, हर जगह होना चाहिये। इस पर विचार किया जाये कि यह कैसे हो, क्योंकि आबादी बहुत अधिक है। उस समय मुसलमान थोड़े थे लेकिन राज पक्का हो सकता था इस्लाम का, जैसे कि अफगानिस्तान हो गया, ईरान हो गया। उसने सोचा कि इस प्रकार मैं यदि हिन्दुस्तान

को भी कर लूँ, तो बहुत बड़ा पुण्य हो जाएगा। उसने स्कीमें बनाई कि मुसलमानों को छोड़ दूसरों पर कर लगाये जायें, जजिया कर लगाया जाए। आदेश कर दिया कि छः महीने की जरूरत से अधिक तुम अनाज घर पर नहीं रख सकते। घोड़े की सवारी नहीं कर सकते। पैजामा पहनने पर टखने नहीं ढक सकते, छत पर नहीं चढ़ सकते। यदि कहीं छत में छेद हो जाता तो साथ के पड़ोसी के यहाँ चार आदमी जाकर कहो कि हमारी छत पर छेद हो गया है, कृपा करके आप आकर बन्द करो। अपनी छत पर नहीं चढ़ सकते थे। यदि चढ़ना है तो पहले खबर करो। घोड़े पर नहीं चढ़ सकते थे, मैंने सिंध में बड़े-बड़े अमीर देखे हैं। वहाँ मैं एक घर चला गया। मैंने पूछा कि आप इस प्रकार कैसे रहते हो? मुझे सारी बात बताई गई कि हम सभी इसी तरह रहते हैं। मैंने कहा कि तुम तो गांव के शाह हो? कहने लगे कि शाह तो हैं लेकिन कानून ही ऐसा है। हमें घटिया अनाज खाने को मिलता है। अंग्रेजों के साथ हमारे मुकदमे होते हैं। यहाँ शरह चलती है जबकि अंग्रेजों का राज था। अतः इस प्रकार से सारी दुनिया बदल गई, हम आधे गांव के लोग तो मुसलमान ही बन गये क्योंकि जो हमारे निगाहे वाले पीर हैं, लालां वाला पीर, अहमद पीर है, उसे सारे ही मानने लग गये हैं। वह करामाती था, भाईयों ने ही उसे मार दिया था, उनके साथ लड़कर भाग गया। तब जाकर उसे मार दिया गया। वहाँ सबका संग जाता था, पंजाब के आधे लोग तो मुसलमान बन गये थे। उसी प्रकार करने लग पड़े। कहने लगे कि भट्टियों को मुसलमान बना लो, यदि भट्टी बन गये तो राजपूत सारे ही बन जायेंगे। इनसे सब नीचे हैं, फिर आगे चलेंगे। पहले जो सख्त हैं उन्हें बना लो और दूसरा जो कश्मीरी पंडित हैं ये सबसे विद्वान हैं, ये वेदों के ज्ञाता हैं। यदि ये मुसलमान बन गये तो ये इस्लाम का प्रचार करेंगे और फिर सब मुसलमान बन जायेंगे। वहाँ पर फिर दमन चक्र चला कि एक तो सवा मन जनेऊ हर रोज उतारा जायेगा। एक यह कि हमारे धर्म में तीन महान बादशाह ऐसे हुए हैं, लगातार जिन का हमाम, जिसे गर्म पानी कहते हैं, गर्म पानी करके स्नान आदि करना। वह सारे भारतवर्ष के वेद, पोथियां, पुरान, कुरान, धार्मिक पोथियां उसके चूल्हे में जायेंगी तो पानी में नहाना है। कितने ही वर्ष पुस्तकों की आग जलती रही, हस्तलिखित पुस्तकें होती थीं। पुस्तकें समाप्त कर दो, स्वयं ही खत्म हो जायेंगे। विद्या समाप्त कर दो स्वयं ही अगली पीढ़ियां अनजान

रह जायेंगी। अतः कश्मीर के ऊपर इफ्तारखान को 1674 में गर्वनर बना दिया। हिदायतें दे दीं कि कश्मीर को हर हाल में इस्लाम में ले आओ। श्रीनगर में इकट्ठ किया गया, आदेश था कि कोई शहर में न रहे, सब जेहलम के किनारे आओ। वहाँ पर सौ आदमियों को बंडल में बाँधकर, संगल के साथ दरिया में बहा दिया जाता है। उन सभी को सब देखते रहते थे। जो बह रहे होते थे, वे चीखें मारते, बहुत हाथ-पैर मारते थे लेकिन संगलों से बांधे होने के कारण नहीं छूट सकते थे। आखिर जब डूब जाते थे, आगे जाल लगे होते थे, वहाँ से संगल खोल कर ले आते थे और वे आगे बह जाते थे। प्रतिदिन का यही कार्य होता था, अनंत ही लोग मरने शुरू हो गये। उस समय समझदार लोगों ने गुप्त रूप में एक मीटिंग बुलाई। सारे भारतवर्ष के ब्राह्मणों ने कहा कि कोई उपाय किया जाए। इस प्रकार तो हम समाप्त हो जायेंगे। राजपूत राजाओं के पास गये। राजपूत कहने लगे कि हमारा स्वाभिमान तो अब समाप्त हो गया है, हम तो लड़कियां ही उनके यहाँ ब्याहने लगे हैं। एक राणा प्रताप के बिना सभी राजाओं की लड़कियां उनके यहां ब्याहने लग पड़े। उत्तर मिल गया, सेवादीन मरहट्टा जमीन पर हाथ पांव मार रहा था, पंजाब तथा उत्तरी हिन्दोस्तां को उसका कोई लाभ नहीं था क्योंकि दमन चक्र चल रहा था। उस समय सभी ने कहा कि इस समय तो केवल शिव जी महाराज को ही जागृत किया जाये क्योंकि वे तो तीसरी आँख खोल कर सब को भ्रष्ट कर देते थे। वहाँ चलो सारे। मता पास किया गया, मते में जो अच्छी-अच्छी करनी वाले पुरुष थे, उन्हें छांटा गया, क्योंकि इस देश में अवाहन करके ब्रह्मा को बुला लेते थे। देवते, देवियों को प्रकट कर लेते थे। लेकिन बहुत देर से कोई भी प्रकट नहीं हुआ। उस समय कहा कि अमरनाथ की गुफा सबसे पवित्र है, जहाँ देवता प्रकट हो सकता है। अतः बर्फ में से गुजरकर अमरनाथ पहुँचते हैं। वहाँ शिव जी महाराज जी आवाहन किया गया कि अपने त्रिशूल से वे इनका विनाश करेंगे। वहाँ जाकर विनतियां कीं, प्रार्थनाएं कीं कि हे प्रभु! इस समय हिन्दू धर्म पर बहुत गहरा कष्ट पड़ा हुआ है, नाव डूब रही है, भवसागर में। आप स्वयं प्रकट होकर हमारी सहायता करो क्योंकि हमें कोई राह नहीं नजर आ रही है। इस प्रकार प्रार्थना करते हैं -

धारना - कंढा पार दा नजर ना आवे,
मंझधार बेड़ी ढोलदी।

कहने लगे, हे प्रभु! आप पर आशा रखे बैठे हैं। आप तीन मुख्य देवते हो, उनमें से आप पर विश्वास है, क्योंकि आपकी रुचि युद्धों वाली नहीं है। आप तीसरा नेत्र खोलो और हमारी सहायता करो। एक कवि के वचन हैं जो उसने नौवें पातशाह के बारे में लिखे हैं कि -

हे प्रभु! तू महादेव! हे शिव जी भगवान!
साइसती है ग्रसिआ हिंदू धरम महान।
बुत शिकन जरवाणिआं ढाहे मंदर अनमोल।
गौरवता इस धरम दी घटे दिती रोल।
सुंदर बुत भगवान दे तोड़े तेशेमार
अते पुजारी मंदरों धूह के कढे बाहर।
कीते गऊआं मार के मंदर कई पुलीत
कल सी मंदर दिसदा दिसे पई मसीत
नउका हिंदू धरम दी डोले अज मंझधार।
ना दिसदा उरवार ही ते ना ही दिसदा पार।
इस अतिआचार दा करना कठन बिआन
बणिआ हिंदोसतान ही हिंदूआं लई मसान।
कतलगाह अज धरम दी बणिआ भारत देश
नहीं जरवाणे सामणे चलदी साडी पेश।

इस तरह से ईश्वर से प्रार्थना करते हैं, कहते हैं, हे भगवान! अब कोई चारा नहीं। जितने भी शस्त्रधारी थे, क्षत्रियों का युग गुजर गया था, महाभारत का युग जा चुका था, उस युग में तो हमारे धर्म की ओर कोई देख ही न सका, लेकिन आज क्या हो गया है? पतन हो रहा है। अब हम आपकी शरण में आए हैं, आपके बिना कोई रक्षा करने वाला नहीं है -

भगवान! तेरी शरण हां, आए हो लाचार
छडु के तेरे दुआर नूं जाईए किहड़े दुआर।
हमारे लिये कोई द्वार नहीं रहा।
लज्जा तेरे हथ है, नीलकंठ भगवान।
इस हतिआरे राज दा मेटहु नाम निशान।
सदल दुआर कउ छाडिकै गहिओ तुहारो दुआर।
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार। दोहरा
धारना - हुण रिहा ना दुआरा होर कोई,
रखिआ जो करे हिंद दी।

हे प्रभु! अब कोई और द्वार नहीं रहा। सभी द्वार खटखटा लिये हैं। राजाओं के यहाँ भी जा चुके हैं। शूरवीरों को भी

कह कर देख लिया है। कोई नहीं हिल रहा है, सभी के दम सूख गये हैं। जुल्म का ऐसा चक्रव्यूह चल रहा है कि सभी धड़ाधड़ इस्लाम में जा रहे हैं। हे प्रभु! तेरी दुनियां में इस जुल्म को रोकने वाला कौन है, जो हमारी बांह पकड़ सके। प्रभु जी! तुम प्रकट हो जाओ और अपनी तीसरी आँख खोलो तथा इस राज को समाप्त कर दो।

इस हतिआरे राज दा मेटहु नाम निशान।

कोई उत्तर नहीं आ रहा। बार-बार प्रार्थना करते हैं, रो-रो के विनती करते हैं। कई कह रहे हैं कि अन्न ग्रहण नहीं करेंगे, यहीं पर जान दे देंगे। ठण्डी बर्फ में विनती करते हैं। समय बीतता गया, कोई प्रकट नहीं हुआ। कहने लगे कि पहले तो शिव जी महाराज इतना समय नहीं लगाया करते थे? वे तो उसी समय प्रकट हो जाया करते थे। तथास्तु! कहकर वरदान दे देते थे।

उस समय प्रकट न हुए। तभी एक जटाजूट साधू आ गया, सभी ने समझा कि शिव भगवान इस रूप में प्रकट हुए हैं। उस समय वह साधू कहने लगा कि तुम यहाँ क्यों एकत्र हुए पड़े हो? कहने लगे कि हमारे ऊपर ये कष्ट आए हुए हैं। कहा कि, फिर कोई उत्तर नहीं आया? कहने लगे कि नहीं। साधू ने कहा कि मेरे पास है उत्तर, तुम ध्यान से सुनो में बताता हूँ -

धारना - बांह फड़ेगा तुहाडी सतिगुर नौवां,
शरन जा के लै लओ ओसदी।

कहने लगे प्रेमीजनो! आवाज सुनो! जो आवाज आ रही है। आवाज हर एक के हृदय से नहीं आती, क्योंकि जो सुनने वाले सैट हैं वे तो खराब पड़े हैं, उन्हें तो जंग लगा पड़ा है। यदि सैट ठीक न हो तो आवाज नहीं आती, जैसे टेलीफोन का रिसीवर खराब है तो आवाज कैसे आएगी? इस प्रकार से वह साधू कहने लगा कि आवाज आई है -

आखिआ शिव भगवान ने मुखों इउं उचार।
भारत विच है प्रगटिआ कलजुग रखणहार।
तेग बहादर नाम है महिमा अपर अपार।
बैठा विच अनंदपुर ला के है दरबार।
जाओ उसदी शरन विच छडु के होर विचार।
नउका हिंदू धरम दी लाएगा उह पार।



अमर ज्योतियाँ (साहिबजादों की अद्वितीय शहीदी)

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

संसार में जब धर्म का नाश होना शुरू हो जाता है, मानवीय मूल्यों, आदर्शों के विपरीत धक्काशाही, जोर जबरदस्ती, मजहबी ईर्ष्या, राजसी अन्याय, सामाजिक घृणा, अभिमान, मायिक शक्ति में बेहोशी, समाज में, राजनीतिक वातावरण में प्रवेश कर जाती है, उस समय राजा कसाई बन जाता है। उसके राज्य में धर्म नहीं रहता। गुरु महाराज जी फ़रमान करते हैं -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ।
कूडु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ॥
अंग - 145

जैसे जैसे अत्याचारों में वृद्धि होती है अज्ञान का घटाटोप अन्धेरा छा जाता है, मनुष्य की बुद्धि पशुओं के स्तर से भी नीचे गिर जाती है, उस समय सत्य असत्य, धर्म-अधर्म, न्याय-अन्याय का ज्ञान मनुष्य के अन्दर से निकल कर अन्धकार में खो जाता है। उसकी पीड़ा करोड़ों ब्रह्मण्डों के मालिक तक पहुँचती है, उस समय वह अपने परम अस्तित्व में से अपना ही रूप प्रकट करके खण्डों, ब्रह्मण्डों में भेजता रहता है जिसने शरीरधारी होकर इस अज्ञान तथा जुल्म का नाश करना होता है। यदि रोग बढ़ जाये और समाज के शरीर में फैलना शुरू हो जाए उस समय योग्य डाक्टर यह उचित समझता है कि शरीर में से वे अंग काट दिए जायें जिन पर रोग का प्रभाव पड़ चुका है। जैसे कैंसर होने पर शरीर का वह अंग काट दिया जाता है, इसी प्रकार जब समाज में घटित हो रहे प्रकाश में अन्धकार छा जाता है, उस समय गुरु, पीर, अवतार, पैगम्बर, महापुरुष प्रभु द्वारा प्रेरित हुक्म में रहते हुए समाज तथा राजसी शक्तियों का मार्ग दर्शन करने के लिए अनेक विधियाँ अपनाते हैं। कहीं तो अपनी मानसिक शक्तियों का प्रयोग करके होश में लाने पड़ते हैं, कहीं पर शस्त्रों का प्रयोग करके ला-इलाज अन्धकार से घिरे हुए मनमुख वजूदों

को समाप्त करना पड़ता है, कहीं प्यार तथा प्रेम के उपदेश देकर उनके अन्दर से अन्धकार का नाश, गुरु पीर होकर किया जाता है। इस प्रकार जैसी आवश्यकता होती है प्रभु वैसी ही हस्ती गुरु रूप में, अवतार रूप में, पैगम्बर रूप में संसार में भेजते रहते हैं।

गुरु दशमेश पिता जी (गुरु गोबिन्द सिंह जी) ने संसार में अपने प्रकट होने के बारे में बताते हुए फ़रमान किया है कि प्रभु ने उन्हें एक विशेष मिशन दिया और हुक्म दिया कि जिस धर्म का रास्ता निरोल, खालिस, भेषों-भ्रमों से निस्पृह, नफरत, ईर्ष्या, वैर, विरोध, काम, क्रोध, लोभ, मोह अहंकार, निन्दा, चुगली आदि से पवित्र, न्यारा नरोया है, उस समाज की संरचना के लिये भेजा है। गुरु महाराज जी हमें ज्ञान देते हुए फ़रमान करते हैं कि अकाल पुरुष के हुक्म के अनुसार यह फ़रमान हुआ है कि मैं आपको अपने पुत्र का स्थान, दर्जा देकर, विशेष मिशन की पूत हेतु भेज रहा हूँ। भारत वर्ष में सात आठ सौ वर्षों से अन्याय तथा अत्याचारों की पीड़ा बढ़ती ही जा रही है। आततायी शासक विदेशों से आकर भारत के नर नारियों को पैरों तले कुचल रहे हैं। न तो भारतीय नारी का कोई आदर है और न ही भारतीय पुरुष को सुख चैन से सांस लेने के लिये स्थान मिलता है। उनके पूजा स्थलों को गिरा कर, लाखों दिलों को तोड़ दिया जाता है। यह सब मजहब के नाम पर किया जाता है, मजहब के नाम पर पाप को पुण्य बनाया जाता है। इस घोर अन्धकार में फंसे हुए जीव, श्वास और सत खो चुके हैं, उनमें कोई साहस ही नहीं रहा, भय के वातावरण में इतने नीचे चले गये हैं कि वे अपने गौरव को भूल चुके हैं। प्रभु ने कहा कि मैं तुम्हें संसार में भेज रहा हूँ ताकि तुम सत का मार्ग प्रचलित करो और धर्म के नाम में मिली हुई अन्धकारमयी सोच को दूर करो। जुल्म ने यह भी पहचान खत्म कर दी कि बुद्धि

क्या है, दुर्बुद्धि क्या है? दुर्बुद्धि को अपनाकर इन्सान दुखी हो रहा है। गुरू महाराज जी प्रार्थना करते हैं कि हे प्रभु! मैंने ध्यान लगाकर देखा है कि सारी सृष्टि जल रही है, अन्धकार छा चुका है और यह धर्म का मार्ग, जिसे आत्म मार्ग कहा जाता है, यह तभी चल सकता है यदि स्वयं शक्ति देने वाला सहायक पवित्र हाथ मेरी पीठ पर रखें। आपने मुखारविन्द से इस प्रकार कहा है -

मैं अपना सुत तुहि निवाजा।
पंच प्रचुर करबे कउ साजा।
जहा तहा तै धरमु चलाइ।
कबुधि करन ते लोक हटाइ॥

अकाल पुरख बाच। चौपड़

कबि बाच॥ दोहरा॥
ठाढ भयो मैं जोरि कर, बचन कहा सिर निआइ।
पंथ चलै तब जगत मै, जब तुम करहु सहाइ।

गुरू महाराज जी अपना लक्ष्य संसार को बताते हुए फ़रमान करते हैं कि मुझे इसी उद्देश्य हेतु संसार में भेजा गया है, मेरा किसी के साथ कोई वैर नहीं, सभी के साथ मेरा प्यार है, मुझे ऐसा मत समझना कि मैं परमात्मा बनकर संसार में आया हूँ, वह पारब्रह्म परमेश्वर, अगम अगोचर है, इकाई रूप में मैं उसका दास हूँ, इसलिये यह गलती मत कर बैठना कि तुम मुझे ही परमेश्वर समझ लो। परमेश्वर अगम है, अगोचर है, निराला है, उसका पारावार नहीं पाया जा सकता। वह सभी जगह परिपूर्ण है और सभी के अन्दर घट घट में वास रखता है, वह अखण्ड ज्योति है। मैं उसका दास हूँ। इस बात पर किसी प्रकार का भी संशय मन में मत लाना। ऐसे समझ लो कि मैं उस धर्म पुरुष का दास संसार में उसके हुक्म को पालन करवाने के लिए देहधारी हुआ हूँ। मैंने जगत का तमाशा देखना है और सत्य की जीत असत्य की हार मेरा कार्य है। आपने फ़रमान किया है -

चौपड़। इह कारनि प्रभ मोहि पठायो।
तब मै जगत जनम धरि आयो।
जिम तिन कही तिनै तिम कहि हों।
अउर किसू ते बैर न गहि हों। ३१।
जो हम को परमेसर उचरि हैं।
ते सभ नरक कुंड महि परि हैं।

मो को दास तवन का जानो।
या मै भेद न रंच पछानो। ३१।
मै हो परम पुरख को दासा।
देखन आयो जगत तमासा। ३२।
जो प्रभ जगति कहा सो कहि हों।
म्रित लोक ते मोन न रहि हों। ३३।

इसलिये इस जगत में यह कार्य करने के लिए मैंने शरीर धारण किया है, दोनों तरह से मेरा कार्य चलेगा। प्यार तथा प्रेम से, वैराग, भक्ति तथा ज्ञान के उपदेश देकर मनुष्य के अन्दर से अन्धकार मिटा दूँगा और उसे ज्ञान प्रदान किया जायेगा कि तू शरीर नहीं है, तू प्राण नहीं है, मन नहीं है, बुद्धि नहीं है, चित्त नहीं है और न ही तू जीव है, तू वाहिरगुरू की अंश है, उसी एक ही आत्मा की अखण्ड ज्योति है, उसे अपने आप की पहचान बताई जायेगी। जिस शरीर में अज्ञान तथा बुराईयों का असाध्य रोग, जिसका कोई भी इलाज न होता हो तथा शरीर महा अन्धकार में ग्रसित हो चुका हो, उसे संसार मंच में से युद्ध द्वारा नया शरीर धारण करने के लिये आगे चलाया जायेगा। सो मुझे ऐसा मत समझना कि मैं किसी के पूर्व धर्म से प्रेरित होकर कुछ करूँगा। मैं प्रभु द्वारा सौंपा गया कार्य सभी सम्प्रदायों और मज़हबों से ऊपर उठकर निषपक्ष होकर पूर्ण करूँगा। अपने बारे में बताते हुए फ़रमान करते हैं -

कहिओ प्रभू सु भाखि हों। किसू न कान राखि हों।
किसू न भेख भीज हों। अलेख बीज बीज हों। ३४।
पखाण पूज हों नहीं। न भेख भीज हों कहीं।
अनंत नामु गाइ हों। परम पुरख पाइ हों। ३५।
जटा न सीस धारि हों। न मुंद्रका सुधारि हों।
न कान काहू की धरों। कहिओ प्रभू सो मै करों।
३६।
भजों सु एक नामयं। जु काम सरब ठामयं।
न जाप आन को जपो। न अउर थापना थपो। ३७।
बिअंत नाम धिआइ हों। परम जोति पाइ हों।
न धिआन आन को धरों। न नाम आन उचरों। ३८।
तवक नाम रत्यं। न आन मान मत्यं।
परम धिआन धारयं। अनंत पाप टारयं। ३९।
तुमेव रूप राचियं। न आन दान माचियं।

तवक नाम उचारिअं। अनंत दुख टारयं। ४०।

दुष्टों और दोषियों को मैं पकड़ कर पछाड़ूंगा भी, धर्म के मार्ग पर भी चलाऊँगा और असाध्य अन्धकारमयी स्थिति वाली दुष्टता को जड़ से उखाड़ूँगा। इस प्रकार बहुत बड़ा उत्तरदायित्व लेकर गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज संसार में प्रकट हुए।

आपके जीवन पर यदि हम विचार करें तो उपयुक्त वर्णन में बताई गई सारी बातें आसानी से समझ में आ जायेंगी। आपने एक ऐसे समाज का संसार में निर्माण किया जो निरोल खालसा था, उसमें कोई भ्रम तथा भूल नहीं थी, न ही कोई मिलावट थी, आपने फ़रमान किया कि अपने आत्म स्वरूप को पहचान कर, उसका आनन्द लूटना अपने अस्तित्व को उस आत्म अस्तित्व में लीन करना तथा सत्य आचार व्यवहार अपनाना, यह खालसा जीवन का प्रत्यक्ष रूप होगा और उसकी महानता इतनी उच्च होगी कि उसकी महिमा को देवी देवता भी नहीं जान पायेंगे। देव लोक के प्रमुख देव उसके संग की लालसा किया करेंगे जैसे कि -

वरतणि जा कै केवल नाम।

अनद रूप कीरतनु बिस्राम।

मित्र सत्रु जा कै एक समानै।

प्रभ अपुने बिनु अवरु न जानै॥

कोटि कोटि अघ काटनहारा।

दुख दूरि करन जीअ के दातारा।

सूर बीर बचन के बली।

कउला बपुरी संती छली॥

ता का संगु बाछहि सुर देव।

अमोघ दरसु सफल जा की सेव।

कर जोड़ि नानकु करे अरदासि।

मोहि संतह टहल दीजै गुणतासि॥ अंग - 392

साध की सोभा साध बनि आई।

नानक साध प्रभ भेदु न भाई॥ अंग - 272

और आप फ़रमान करते हैं -

आतम रस जिह जानही सो है खालस देव॥

प्रभ महि मो महि तास महि रंचक नाहन भेव॥

सरब लोह ग्रंथ में से

आपका जीवन एक महान संग्राम का जीवन है क्योंकि अन्धकार के पथराये हुए तथा मूच्छत हुए जीवों को जगाना अति कठिन था, दूसरी ओर अधर्म की ताकतें, धर्म की आवाज़ को मिटा देने पर तत्पर थीं। इसकी और अधिक व्याख्या करने पर बहुत विस्तृत वर्णन हो जायेगा सो संक्षेप में इस प्रकार है कि उस समय अलग अलग सम्प्रदायों में अत्याधिक वैर भाव था और कट्टरपन इतना अधिक था कि अपने से विपरीत निश्चय वाले मनुष्य को मनुष्य ही नहीं समझा जाता था। उसका वध कर देना, उसका घर बार लूट लेना, स्त्रियों का अपमान कर देना, बच्चों को गुलाम बना लेना, एक पुण्य कार्य समझा जाता था। इस अधर्म के अन्धकार को पैदा करने वाले पश्चिम से आने वाले बादशाह अमराव, मन्त्री, काज़ी, मौलवी थे। उन्होंने धर्म की परिभाषा अपने हितों के अनुसार बना ली और हर पाप को पुण्य कह कर अति पुण्य करने वाले कहलाते थे। गुरु दशमेश पिता जी द्वारा धर्म और शान्ति के लिए लगाई गई उच्च आवाज़ को मलिया मेट करने के लिए उस समय की संकीर्ण सोच वाले शासक तथा राजसी शक्ति तत्पर थी, वह चाहे हिन्दू बुरका पहन कर पहाड़ों में राज्य करते थे, चाहे तुरक बुरका पहन कर दिल्ली के तख्त पर राज्य करते थे। गुरु महाराज जी ने फ़रमान किया कि हमारा किसी के साथ वैर भाव नहीं था, हम केवल मानव धर्म का मार्ग प्रचलित कर रहे थे। यह आवाज़ राजाओं को बहुत बुरी लगी क्योंकि वे धर्मी बन जाने वाली तथा अपने अधिकारों की पहचान करने वाली प्रजा की बहादुरी से डरते थे। गुरु महाराज जी फ़रमान करते हैं कि जब हम पांवटा साहिब में निवास कर रहे थे, उस समय पहाड़ी राजा इकट्ठे हुए और फतह चन्द राजा जो श्री नगर में राज्य करता था उन सभी राजाओं को साथ लेकर, बिना किसी कारण के हम पर आक्रमणकारी बन कर आया, उस समय आप सभी धर्मों के साहित्य की, शुद्धरूप में, आध्यात्मवाद के प्रकाश में रचना कर रहे थे। फ़रमान है -

फते साह कोपा तबि राजा।

लोह परा हम सो बिनु काजा। बचित्र नाटक

युद्ध हमारे ऊपर थोपा गया, हम कभी भी यह नहीं चाहते थे कि किसी पर भी आक्रमणकारी बना जाए और उसका राज्य छीन लिया जाए। हमारे सामने और कोई चारा

नहीं था क्योंकि शान्तमय रह कर अत्याचार सहन करने की सीमा वाले गुरु तेग बहादुर साहिब, परदादा गुरु (गुरु अर्जुन देव जी) कितने धिनौने जुल्म सह चुके थे। इन जालिमों के सामने हाथ पर हाथ रख कर शहीद हो जाना कोई महत्व नहीं रखता था क्योंकि शान्ति की सीमा समाप्त हो चुकी थी। महान गुरुओं को दिये गये कष्ट अब सहन शक्ति को समाप्त कर रहे थे। वे सभी शक्तियों के मालिक होते हुए फिर भी मनुष्य शक्ति की सीमाओं में रहते हुए जालिमों के अन्धे नेत्र खोलने के लिए बलिदान दे गये। कोई भी व्यक्ति युद्ध नहीं चाहता। सभी शान्ति एवं सुख चाहते हैं पर जब कोई पेश ही न चले तो अपनी रक्षा के लिए शस्त्र हाथों में उठा लेना, अपनी पूरी कोशिश करना, अपने जैसे विचारों के लोगों को एकत्रित करके, दुष्टता को दूर करने के लिए यदि शस्त्र का उत्तर शस्त्र से दिया जाए तो कोई अनुचित बात नहीं हुआ करती। बल्कि धर्म यह मांग करता है कि कायरों की तरह गर्दन कटवाने से कोई लाभ नहीं, बहादुरों की तरह अपने बलिदान दीजिए। गुरुमत सारे विश्व का भला मांगती हुई प्रार्थना करती है कि हे वाहिगुरु! इस जलते हुए संसार की रक्षा कर, जिस द्वार से वह पार हो सकता है वहीं से ही कृपा करके पार करा दे। ऐसी विशाल फिलासफी के होते हुए किसी के साथ विरोध का प्रश्न ही नहीं उठता -

फरीदा बुरे दा भला करि गुस्सा मनि न हठाइ।

देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ॥

अंग - 1381

इस प्रकार गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज का सारा जीवन दुष्टताई का सुधार करते हुए और सच के प्रकाश के लिए यत्न करते हुए व्यतीत हो रहा था। अपने समस्त प्राचीन साहित्य को रूपमान करने के लिये 52 कवि तथा 50 लेखक अपने दरबार में रखे हुये थे। मंगल कवि को महाभारत के पर्व का अनुवाद करने के लिए उस समय का 60,000 रूपया दिया गया और इतने उपहार दिये जिन्हें मंगल कवि के घर तक पहुँचाने के लिए दो सौ जवानों को साथ भेजा।

गुरु महाराज जी पर लगभग 14 बार आक्रमण किया गया। सत धर्म के रक्षक, खालसा के वजूद में जाग्रत हो उठे। सूरमाओं ने सदा ही इन्हें हार दिलाई। वैसे वे बेपनाह फौजों के मालिक थे, युद्ध के हथियारों का कोई अन्त नहीं पा

सकता था। गुरु महाराज जी के प्यारे गुरसिख अपने सीमित साधनों के साथ औरंगजेब के महान साम्राज्य तथा 22 धार के पहाड़ी राजाओं के साथ सत्य की ओट लेकर जूझते रहे। अन्त में समस्त भारत की राजसी शक्ति जिसमें 22 धार के पहाड़ी राजा, औरंगजेब की बेपनाह फौज और संघर्ष के भ्रम में पड़े उलटी मति वाले लुटेरे जिनकी संख्या दस लाख के करीब बताई जाती है वे इस महान युद्ध में सम्मिलित हुए। दूसरी ओर गुरु महाराज जी के पास न तो भोजन के विशाल भण्डार थे, न ही शस्त्रों का बहुत बड़ा कोई भण्डार था। ओट थी तो सत्य की थी। दोनों दलों का कोई मुकाबला नहीं था पर गुरु महाराज जी का जो वाक्य था कि -

चिड़ियों से मैं बाज तुड़ाऊं।

सवा लाख से एक लड़ाऊं।

यह प्रत्यक्ष रूप में दिखाई दे रहा था, 6 महीने या इससे भी अधिक समय का घेराव था। गुरु साहिब के किलों में अन्न तथा शस्त्रों का भण्डार सीमित रूप में रह गया था। खालसा फौज ने वृक्षों के पत्ते उबाल उबाल कर पीये, वृक्षों की छालें, आटे के अन्दर मिला मिला कर खाईं। लम्बा घेराव होने के कारण घेरा डालने वाले भी घबरा गये थे, उन्होंने विश्वास दिलाया और औरंगजेब द्वारा हस्ताक्षर की गई चिट्ठी पवित्र कुरान शरीफ के साथ रख दी। पहाड़ी हिन्दू राजाओं ने महा पवित्र पुस्तक गीता थाल में रखी तथा उसी थाल में गाय की प्रत्तिमा रखी गयी तथा प्रण किया गया कि हम गीता की तथा गाय की आन रखते हुए सौगन्ध खा कर अपने दिल की सच्चाई प्रकट करते हैं कि यदि आप किला छोड़ दें तो आपका जहाँ मन चाहे वहाँ रह सकते हो। इस प्रकार कुरान शरीफ वालों ने कुरान शरीफ की कसम खाई तथा कुरान शरीफ को साक्षी मानकर कहा कि हम हज़रत मोहम्मद साहिब की कलाम वाली इस पवित्र पुस्तक की साक्षी देकर आपको किला छोड़ने के लिए प्रार्थना करते हैं कि आप आनन्दपुर छोड़ दें। जहाँ आपका मन चाहे जा सकते हैं, आपको कुछ नहीं कहा जायेगा। गुरु महाराज जी अच्छी तरह से समझते थे कि यह फरेबी लोग न तो भगवान को मानते हैं, न ही धूमक आदमी हैं, ये तो अपने हित के लिए धर्म की जड़ें काट रहे हैं। इसलिये पहाड़ी राजाओं का गीता की गवाही देना और कुरान शरीफ वालों का कुरान शरीफ की

कसम खाना एक फरेब (धोखा) था, एक ढीठता थी। गुरु महाराज जी ने सिखों की प्रार्थना सुनकर किला खाली कर देने का मन बना लिया। वैसे आप जानते थे कि ये भेषी मोमन तथा देवी भक्त अन्दर से खोखले हैं। इनका कुरान शरीफ का मानना तथा देवी देवताओं को मानना केवल अपने स्वार्थ के लिए ढोंग रचना है। गुरु महाराज ने यह दर्शाया कि अपने धर्म ग्रन्थों का आदर तो सारा विश्व ही करता है पर दूसरों के धर्म चिन्हों का आदर करना भी महान पुरुषों का कर्तव्य हुआ करता है। गुरु महाराज जी ने उनका आदर कायम रखते हुए 20 दिसम्बर 1704 अनुसार 6 पौष सम्बत 1761 की आधी रात को वहाँ से जाते समय 7 पौष दिन बुद्धवार को किला खाली कर दिया। धन्य हैं गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज जिन्होंने दूसरे धर्मों की पुस्तकों का आदर करके बताया कि परमेश्वर की बाणी चाहे अरबी में हो, चाहे संस्कृत में, चाहे किसी अन्य भाषा में हो, पूर्ण रूप में आदरणीय है। उस पर विश्वास करना एक बहुत बड़ी महानता है। किला खाली होते ही मक्कार हाकिमों ने न तो कुरान शरीफ की पवित्रता की परवाह की, न गीता तथा गाय की आन की परवाह की, अपनी सारी फौजें गिने चुने गुरसिखों के पीछे लगा कर हुक्म दिया कि घेरा डाल कर सभी को मार दिया जाये। एक भी आदमी गुरु गोबिन्द सिंह जी सहित सकुशल न निकल जाये। आनन्दपुर साहिब से लेकर सिरसा के किनारे तक यह भयानक युद्ध हुआ यहाँ एक और चमत्कारिक घटना का उल्लेख करना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगा।

7 पौष की अमृत बेला को सम्भालने के लिये आपने आसा जी की वार का कीर्तन आरम्भ करवा दिया। एक तरफ मार धाड़ हो रही है, दूसरी ओर वृत्तियाँ एकाग्र करके प्रभु प्यार का महान आत्म रस लूटा जा रहा है। उन्होंने शरीर की अपेक्षा हरि को याद करने के लिए किये जा रहे कीर्तन को पहल दी। दरिया सरसा चौड़े (खुले) किनारों में बहता है। पहाड़ों में वर्षा होने के कारण बहुत ही ठण्ड तथा धुन्ध हो गई, सरसा दरिया बहुत ही वेग के साथ अपने किनारों से बाहर निकल कर बह रहा है। ऐसा प्रतीत होता था कि आज सरसा दरिया ने भी महाराज जी के पवित्र कार्य में विघ्नकारी बनकर रास्ता रोकने की भूल की। इसीलिये गुरसिखों ने इस

बहते हुए दरिया के पानी के ऊपर आज तक पाँच जूतियाँ मारना एक प्रकार का protest (विरोध) प्रकट करने का ढंग बना लिया है। इस स्थान पर घोर संघर्ष हुआ।

गुरु महाराज जी चार दिनों से उनींदरे थे तथा काफी थकावट हो चुकी थी। यहाँ साहित्य का काफी मात्रा में नुकसान हुआ जिसकी कमी कभी भी पूरी नहीं की जा सकती क्योंकि गुरु महाराज जी का 20-22 वर्षों का अनथक प्रयास, दिमागी निचोड़ पल भर में सरसा की भेंट चढ़ गया। पर धन्य थे गुरु महाराज जिन्होंने सभी कुछ वाहिगुरु जी की आज्ञा समझ कर सहन कर लिया।

गुरु महाराज जी यहाँ से चलते हुए 22 दिसम्बर प्रातः तक चमकौर साहिब की कच्ची गढ़ी जो एक हवेली जैसी थी, जो ऊँचे स्थान पर स्थित थी, में प्रवेश कर गये। सुबह ही अनगिनत फौजों ने आकर उस गढ़ी को घेर लिया। उस गढ़ी में गुरु महाराज जी के 40 मरजीवड़े सिख दो साहिबजादे गुरु महाराज जी के साथ थे। सुबह ही युद्ध शुरू हो गया। दिन भर 25 सिख इस गढ़ी में से बारी बारी निकल कर सवा लाख से एक लड़ने वाली गुरु इच्छा को साकार करते थे। न किसी को घबराहट होती थी। गढ़ी में से मीलों तक एक विशाल लश्कर नज़र आता था। ऐसे लगता था जैसे फौजों की बाढ़ आई हुई हो और सारे ही गढ़ी तक पहुँचने के लिए एक से एक जल्दी में हों। 25 सिखों ने दोपहर तक युद्ध किया। सूर्य छिपना शुरू हो गया। वे पुर्जा पुर्जा कट कर शहादत प्राप्त कर गये पर कमाल यह था कि कोई भी बुज़दिल न हुआ तथा किसी ने भी शस्त्र न फेंके। अन्तिम सांस तक शस्त्र चलाते रहे। इसके पश्चात साहिबजादा अजीत सिंह जिनकी शारीरिक आयु 18 वर्ष के लगभग थी, आप ने गुरु महाराज जी से आज्ञा मांगी कि पातशाह! मुझे भी अपना शरीर इस मानवता की रक्षा के लिए किये जा रहे महान यज्ञ रूपी युद्ध में जूझ कर सफल करने की आज्ञा दीजिए। गुरु महाराज जी ने प्रसन्नता सहित आज्ञा दे दी, स्वयं हाथों से शस्त्र सजाए, साहिब अजीत सिंह घोड़े पर सवार हुए और पाँच सिख लेकर इस ठाठें मारते शत्रु दल में आकर दाखिल हो गये। उस समय के प्यार से भरे, कवि योगी अल्ला यार खां ने ऐसे रूपमान किया है -

गोबिन्द के दिलदार किले से निकल आए।
वहु देखीए सरकार किले से निकल आए।

घोड़े पै हो असवार किले से निकल आए।
ले हाथ में तलवार किले से निकल आए।
किआ वसफ हो उस तेग का इस तेगे जुबान से।
वहु मिआन से निकली नहीं निकली येह वहां से।
शेअर ७८

साहिब अजीत सिंह जी की शस्त्र विद्या को देख कर शत्रु भी वाह! वाह! कर रहा है क्योंकि इतनी फुर्ती से तलवार चल रही थी, काट रही थी कि नजरें भी देख नहीं पाती थीं। बिजली के वेग से कम इनकी चाल नहीं थी। इनके बारे में भी इसी कवि ने लिखा है -

'तलवार सी, तलवार थी किआ जानीए किआ थी।
खुंखार थी, खून बाज थी आफत बला थी।
थी आब या फौलाद पै बिजली की जला थी।
'यम राज' की अम्मां थी वहु शमशेर कजा थी।
अरदल में बिचारे 'मलकल मौत' खड़े थे
अपने शुगले खास में मशगूल बड़े थे। शेअर ८८
(पुस्तक सफरनामा ते जफरनामा में से धन्यवाद सहित)

ये पाँचों सिख कई घंटों तक युद्ध करते रहे। उस समय पहले पहल एक ऐसी बात हुई कि पहाड़ी राजाओं, नवाब तथा मुगल फौजों के जनरलों ने साहिबजादे की कला को देखने का हुक्म दे दिया। ये 6 सिख हैं। एक-एक सिख के साथ एक-एक योधा यद्ध करो। कायर तो पीछे हट गये, अल्लाह का शुक्र करते हुए। पर बहादुरी के घमण्ड में आने वाले बारी बारी सामने आते रहे। इतिहास बताता है कि इन 6 ने 150 के करीब जालिमों को सदा की नींद, तलवार के स्पर्श से सुला दिया। उस समय सारे नियम तोड़ते हुए दुष्ट फौज के जवान इन पर टूट पड़े। साहिबजादा अजीत सिंह जी अकेले ही बहुत दूर तक युद्ध करते हुए निकल गये। अन्त में इस प्रकार एक अति दुर्गम घेरे में फंस जाते हैं जैसे अभिमन्यु महाभारत के युद्ध में चक्रव्यूह को तोड़ने के लिए महान किले बन्दी में फंस गया था पर बाहर न निकल सका। साहिबजादा अजीत सिंह जी की तलवार टूट गई और केवल सन्जोह (कवच) पहने हुए मुगल सिपाही को बरछी मारी। वह कवच को चीर कर हड्डियों में जाकर फंस गई और शस्त्रविहीन होकर शहीद हो गये। वह अपने पवित्र शरीर का बलिदान देकर

अमरापुरी में प्रवेश कर गये। उनके युद्ध ने गढ़ी में शेष रहते सिखों को बहुत ही उत्साह प्रदान किया।

जो सिख बाकी रह गये थे उनमें साहिबजादा जुझार सिंह 14 वर्ष के गुरु दशमेश पिता जी के लाड़ले पुत्र भी थे, वह आगे बढ़े और उन्होंने कहा कि "पिता जी! मेरा प्यारा भाई शहादत प्राप्त कर चुका है, मैंने उससे पीछे नहीं रहना। चाहे मेरी शारीरिक आयु बहुत कम है पर आप द्वारा बख्शी गई शक्ति से मेरे अन्दर अथाह बल प्रवेश कर गया है। मुझे भी युद्ध लड़ने की आज्ञा दें।" गुरु महाराज जी ने पीठ पर थपकी दी और छोटे छोटे शस्त्र कमरकसे में सजाये। छोटी कमान तथा तलवार देकर, पितृ प्यार दिया। घोड़े पर सवार होकर पाँच सिख साथ दिये और कहा "बेटा! आज न्याय तथा अन्याय का युद्ध है, यह हमारे शहीद हो जाने से समाप्त नहीं हो जायेगा। यह काफी लम्बा युद्ध है। अधर्म पर विजय प्राप्त करनी है, जाओ! तुम भी इस महान कार्य में अपने शरीर की आहुति डालो।" प्यारे! कितना हृदय विदारक दृश्य है। जिसे हमने देखना तो क्या था, सुन भी नहीं सकते। प्यारे पिता जिसने कोई मुल्क राज्य आदि हड़प नहीं करना था, न ही किसी की जायदाद लूटनी थी, केवल दुखियों के दुःख दूर करने के लिए, संसार में न्याय की स्थापना के लिए अपने सारे सुख दाव पर लगाये हुए थे, आज उनका प्यारा पुत्र 14 वर्ष का, महान जंग में प्रवेश करने वाला है। पिता के नेत्रों से जल नहीं बह रहा। आप प्रसन्न होकर पीठ पर शाबाशी ठोक रहे हैं, गले से लगाकर, छाती से लगाकर प्यार करते हैं, माथा चूमा, शाबाशी दी और कहा कि इस आज्ञादी के संघर्ष में तू भी अपनी आहुति दे। संसार में जो आया है उसने जाना ही है। तू वह पदवी प्राप्त कर, जहाँ बड़े बड़े यती, योगी, दानी नहीं पहुँच सकते। उस सारी अवस्था को योगी अल्लाह यार जी ने अक्षरों में रूपमान करते हुए अंकित किया है -

'भराई सी आवाज़ मैं बोले गुरु गोबिन्द सिंह।
पाला है तुमें नाज़ से बोले गुरु गोबिन्द सिंह।
रोका नहीं आगाज़ से बोले गुरु गोबिन्द सिंह।
इस नन्हे से जान बाज़ से बोले गुरु गोबिन्द सिंह।
लो! आउ तन पाक पै हथिआर सजा दें।
छोटी सी, कमां-नन्ही सी तलवार सजा दें।

शेअर १०४

(पुस्तक सफरनामा ते जफरनामा में से धन्यवाद सहित)

लो! जाउ सिधारो तुम्हे करतार को सौंपा।
मर जाउ-या-मारो! तुम्हे करतार को सौंपा।
रब्ब को न बिसारो! तुम्हे करतार को सौंपा।
सिक्खी को उधारो! तुम्हे करतार को सौंपा।
वाहिगुरू अब जंग की तुम्हे हिंमत बखशें।
पिआसे हर जात जामें शहादत तुम्हे बखशें।

शेअर १०६

(पुस्तक सफरनामा ते जफरनामा में से धन्यवाद सहित)

सूर्य छिपने तक इस छोटे वजूद ने वह कमाल करके दिखाया, जिसकी सदियों तक प्रशंसा होती रहेगी। हम तुलना नहीं कर सकते पर एक बात कहने में कोई कोताही नहीं होगी कि श्री राम चन्द्र जी की लंका में चढ़ाई के समय लक्ष्मण जी मूच्छत हो गये। उस समय श्री राम चन्द्र जी का विरह का जो चित्र रामायण में खींचा गया है, उस समय श्री राम चन्द्र जी ने तो वैरागमय होना ही था, पढ़ने वालों के नेत्रों से अश्रु धाराएं बहने लग जाती हैं। इसी प्रकार अभिमन्यु के युद्ध में शहीद हो जाने के बाद, पाँचो पाण्डव श्री कृष्ण जी महाराज के ढाँढस बंधाने पर भी शान्त नहीं होते, बच्चों की तरह वियोग में रो रहे हैं। वशिष्ठ जी, जो श्री राम चन्द्र जी के आध्यात्मिक गुरु थे, सौ पुत्रों के मरने का वियोग न सहन करते हुए सतलुज में प्राण त्यागने के लिए आये, और दरिया सौ धाराओं में होकर बहने लग गया तथा सहस्राद्रव कहलाया। पर धन्य थे गुरु गोबिन्द सिंह जी महाराज, आपकी उस समय की अवस्था को रूपमान करते हुए इसी कवि ने लिखा है -

याकूब को यूसफ के बिछड़ने ने रुलाइआ,
साबर कोई कंम ऐसा रसूलूं मै है आइआ।
कटवा के पिसर चार इक आंसू न गिराइआ,
रुतबा गुरु गोबिन्द सिंह ने रिशीओं का बड़ाइआ।
(पुस्तक सफरनामा ते जफरनामा में से धन्यवाद सहित)

एक अन्य प्रेमी शेर पंजाब के सम्पादक स. अमर सिंह ने इस घटना का उल्लेख अपनी कविता द्वारा किया है -

उठती जवानीउं को लुटा कर चले गए,
सीने में आरजूएँ दबा कर चले गए।
चमकौर मैं न बूंद बी पाणी की मिल सकी,
खूने जिगर से पिआस बुझा कर चले गये।
भूखे थे रात के, शाहा हर दो जहां के लाल,
वाह हसरतां कि तीर ही खा कर चले गए।
फरिआद है कि बाप की आखों के साहमने,
दोनों जवां सिर अपना कटवा कर चले गए।
ऐह आसमां! वहु कौण थे? आ कर जो धर में,
बारे सितम सिरों पर उठा कर चले गए।
उठती जवानीउं की उमंगें हज़ार हा,
मिट्टी मैं आप ही वहु मिला कर चले गए।
थी मुनतज़िर बरात फरिशतों की अरश पर,
ज़ोरावर जो सिहरे बंधा कर चले गए।
सातों समुंदरों से बुझाई न जा सके,
ऐसी दिलों में आग लगा कर चले गए।
आए थे कारे ज़ार मुबबत में दे के जान,
मिहरो वफा का ऐहद निभा कर चले गए।
सुंदरी के लाल शेर दिलवार अजीत सिंह,
कुशतूं के पुशते रण में लगा कर चले गए।
मनसूर इन पै रहिमतें परवरदगार की,
उजड़ा हुआ वतन जो बसा कर चले गए।

युद्ध रुक गया। गुरु महाराज जी के साथ 11 सूरमा शेष रह गये, 29 वहीं पर शहीद हो गये। गुरु महाराज जी के विचार दर्शन के अनुसार काल अवश्य आता है। गिने चुने श्वांस पूरे होने के पश्चात शरीर छोड़ कर जीव चला जाता है। जैसा कि फ़रमान है -

डणि घाले सभ दिवस सास नह बढन घटन तिलु
सार।

जीवन लोरहि भरम मोह नानक तेऊ गवार॥

अंग - 254

जो कहूं काल ते भाज कै बाचयत तौ चहु कुंट बिखे
भज जयै।

आगे हूं काल धरे असि गाजत छाजत है जिहतो नस
अयै।

ऐसो न कै गयो को ऊसु दावरे जाहि उपाव सो घाव

बचयें।

जाते न छूटीए मूड़ कहुँ हस ताकी न किउं सरनागत पयै।

गढ़ी को घेरा डालने वाले नामी सरदार जिनकी शूरवीरता की धांक भारत वर्ष में मानी जाती थी वे थे नाहर खां, हैबत खां, इस्माईल खां, उस्मान खां, सुलतान खां, ख्वाजाखिज़र खां, जहान खां, जबरदस्त खां, नज़ीब खां, मीयाँ खां, दिलवार खां, सैद खां, वज़ीद खां, गुलबेग खां आदि। गुरु महाराज जी के महान सूरमा आलम सिंह, मान सिंह, दया सिंह, मोहकम सिंह आदि एक से एक बढ़ चढ़ कर थे। अब रात हो चुकी थी, सिखों ने सोच विचार कर प्रस्ताव पास किया तथा पाँच प्यारों के रूप में गुरु महाराज जी के पास प्रार्थना की कि आप इस युद्ध में से चाहे शक्ति का प्रयोग करके, चाहे मानवीय ताकत का प्रयोग करके, जैसे भी हो, बाहर चले जाओ और पंथ की पुनः रचना करो। बार बार प्रार्थना करने पर आपने प्रार्थना स्वीकार कर ली जो एक हुक्मनामे के रूप में थी।

गुरु महाराज जी ने भाई संगत सिंह जी को, जो हू-ब-हू गुरु महाराज जी के स्वरूप से मिलते जुलते थे, अपने स्थान पर बिठाया, अपनी पोशाक पहना दी। उस समय आपने वचन किया कि पाँच सिख पीरों के पीर, गुरु के स्वरूप, मेरे साथ अभेद रहेंगे। जब तक उच्च आदर्शों से गिरावट नहीं हो जाती, मैं पन्थ खालसा की रक्षा करूँगा -

पन्थ खालसा खेती मेरी। करहुँ संभाल मैं तिस केरी।

उस समय गुरु महाराज जी ने भाई संगत सिंह जी को अपना धनुष तथा कई सौ तीर सौंपे और कहा कि आप यहाँ बैठ कर धीरे धीरे तीर छोड़ते रहना। भाई राम सिंह, केहर सिंह, सन्तोख सिंह, देवा सिंह, इन चारों को चारों बुर्जों में बिठाकर धीरे धीरे बन्दूकें चलाते हुए और जीवन सिंह मज़हबी, काठा सिंह रविदासिये को नगाड़ा बजाने का हुक्म दे दिया। भाई दया सिंह, धर्म सिंह, मान सिंह इन तीनों सहित दीवार तोड़कर गढ़ी के छोटे द्वार से निकल कर शाही लश्कर में शामिल हो गये। गुरु महाराज जी ने उस समय चोरी छिपे निकल कर जाने को अच्छा न समझा। शूरवीरता के नियमों को और मानवता के अति उच्च आदर्शों को सन्मुख रखते हुए ऊँची आवाज़ में कहा कि 'हिन्द का पीर जा रहा है।' अन्धेरी रात थी, हाथ को हाथ भी दिखाई नहीं देता था, फौज

आपस में ही लड़कर मर गई। गुरु महाराज जी माछीवाड़े पहुँचते हैं वहाँ उच्च के पीर होकर चारपाई पर बैठ कर माछीवाड़े से बाहर निकल जाते हैं पर पाँच हजार फौज ने घेरा डाला हुआ था, उन्होंने यह सन्देश करते हुए कि कहीं गुरु गोबिन्द सिंह जी न हों, इन्हें रोक लिया। दूसरे दिन काज़ी पीर मोहम्मद सलोह वाले, जिसने गुरु महाराज जी को फारसी पढ़ाई थी, को बुलाया गया। सैयद इनायत अली नूरपुरिया, सैयद हसन अली मोटू माजरिया बुलाये गये। इन्होंने कहा कि 'पीरान पीर' जा रहे हैं, तुमने बहुत बुरा किया इन्हें रोक कर। तुमने कामल पीर जी का अपमान किया है जो अल्लाह की दरगाह में भी माफ नहीं होगा। गनी खां, नबी खां साथ थे। उस फौजी अफसर ने याचना की, गुरु महाराज जी की पलंग की सवारी पाँच कोस की दूरी पर जाकर नीचे रख दी। इस प्रकार चलते हुए आप राय कल्ले के पास रायकोट पहुँचते हैं। राय कल्ले ने जिस समय गुरु महाराज जी का सारा हाल सुना, उस समय उसने बहुत ही वैराग किया। गुरु महाराज जी ने छोटे साहिबजादों की खबर लाने के लिए माही को सरहन्द भेजा, उसने आकर सारा हाल रो रोकर बताया। साहिबजादों तथा माता जी की शहीदी के बारे में सुनकर राय कल्ला तथा अन्य लोग जो गुरु महाराज जी की हज़ूरी में बैठे थे उनके नेत्रों से इतना जल बह चला कि रूकने में ही न आता। गुरु महाराज जी ने कहा वाहिगुरु जी की नेत है, जिसे हम भावी कहते हैं, यह तो जो कुछ होना है, वह होकर ही रहता है, चाहे छोटा हो या बड़ा, भावी होकर ही रहती है। उस माही ने बताया कि सच्चे पातशाह! आपके पास रहने वाला सेवादार गँगू खेड़ी वाला, बेईमान हो गया और उसने जो धन माता गुजरी जी के पास था वह छिपा लिया। इतना ही नहीं बल्कि मोरिन्डे खबर भेज कर माता जी तथा साहिबजादों को गिरफ्तार करवा दिया। उस समय सभी श्रोताओं के समक्ष माही ने कहा कि दोनों साहिबजादों तथा माता जी को बिना कोई कम्बल कपड़ा दिये, पहने हुए कपड़ों सहित ही बुर्ज में कैद कर दिया, जहाँ पर हवा से बचने के लिये भी कोई सहारा नहीं था। माता जी की गोदी में साहिबजादे जिनकी आयु 5-7 वर्ष की बताई जाती है, वह लेते हुए थे तथा माता जी के साथ बातचीत कर रहे थे, "माता जी! पिता गुरु जी का क्या हाल है, भाई कहाँ होंगे? हम यहाँ कहाँ आ गये हैं?" माता जी उन्हें सुखमनी साहिब

की बाणी सुना कर समझा रही थीं कि “बेटे! संसार में धर्म की रक्षा करना सबसे बड़ी चीज़ है। संसार में से जाना तो सभी ने है पर अपने धर्म पर शहादत दे देना, यह महान जीवन के सौभाग्य में ही हुआ करता है। तुम्हारे पिता की चादर बेदाग है। मुझे नहीं लगता कि ये हमें छोड़ देंगे। हो सकता है हमें ये इस्लाम धर्म अपनाने के लिए कहें। तुमने अपने पिता की चादर पर दाग नहीं लगाना और साबत कदम रह कर संसार से जाना है।” साहिब जोरावर सिंह ने कहा, “माता जी! परमेश्वर तो एक ही है, वह स्वयं ही पसर रहा है जैसा कि आपने अभी पढ़ा था -

पारब्रह्म के सगले ठाउ।
जितु जितु घरि राखै तैसा तिन नाउ।
आपे करन करावन जोगु।
प्रभ भावै सोई फुनि होगु।
पसरिओ आप होइ अनत तरंग।
लखे न जाहि पारब्रह्म के रंग।
जैसी मति देइ तैसा परगास।
पारब्रह्मु करता अबिनास।
सदा सदा सदा दइआल।
सिमरि सिमरि नानक भए निहाल॥ अंग - 275

अज्ञान के कारण यह जीव हउमै रोग से ग्रसित, वाहिगुरु जी से टूट कर जीव उपाधि धारण करके दुखी हो रहा है। सभी धर्म यही बताते हैं कि समरथ गुरु द्वारा ज्ञान प्राप्त होने पर यह वाहिगुरु जी का ही रूप हो जाता है। इस्लाम, आर्य धर्म, गुरमत मार्ग सभी एक ही हैं फिर मृत्यु का डर दिखाकर ये खींच तान क्यों करते हैं?

माता जी ने कहा, “पुत्रो! यही बात तो गुरमत समझाती है। प्रहलाद को उसका पिता हरिणाक्ष प्रभु भक्ति से जबरदस्ती मौत का भय दिखा कर हटाता था पर प्रहलाद के दिव्य नेत्र खुले होने के कारण उसे हर घट में प्रभु ही दिखाई देता था। प्रभु ने उसकी रक्षा की। बच्चो! सभी प्रसार की आत्मा एक ही है, एक ब्रह्म हर जगह है। वह स्वयं ही अनेक रूप धारण करके अपनी खेल खेल रहा है। आपके पिता जी ने फ़रमान किया है -

एक मूरति अनेक दरसन कीन रूप अनेक।
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिर एक॥

जापु साहिब

यहाँ जन्मता मरता कुछ भी नहीं। सभी जगह निरंकार की ज्योति अनेक रूपों में खेल कर रही है जैसे -

जिमी जमान के बिखै समसति एक जोत है।
न घाट है न बाढ है न घाटि बाढि होत है॥

अकाल उस्तति

संयम तथा मर्यादाहीन जीवन मुर्दा है, केवल नामी ही जीवित है क्योंकि उसके अन्दर से अज्ञान का खातमा हो गया। ये लोग महा अन्धकार में हैं। ये कहते हैं अपना धर्म छोड़कर हमारा धर्म अपना लो, यह इनकी महान भूल है। मौत का भय दिखाते हैं। ज्ञानी को पता है कि आत्मा सदा सदा जीवित है, मौत उसके अन्दर है ही नहीं। वे अपने नियमों पर अपना जीवन व्यतीत करते हैं और शरीर का बलिदान देने से कभी भी संकोच नहीं करते। तुम्हारे दादा गुरु जी ने हिन्दुओं के धर्म, तिलक तथा जनेऊ की रक्षा करते हुए महान साका किया। शीश दे दिया पर अपने नियम नहीं छोड़े, उनके दादा जी, गर्म गर्म तवी पर बिठाये गये, पानी के अन्दर उबाले गये पर कोई शाप देने की बजाये, प्रभु की रज़ा को, इच्छा को मीठा समझते हुए महान बलिदान कर गये। बेटे! प्रत्येक बलिदान मुर्दा हो चुके समाज में ज्ञान तथा नरोयापन पैदा करता है। इसलिये डरना नहीं। शीश यदि जाता है तो चला जाये पर सत्य धर्म को कभी भी भय, लालच में आकर त्यागना नहीं। तुम्हारे दादा जी, तुम्हें लेने आ रहे हैं, अमरापुरी में हम सभी ने जाना है। तुम्हारे पिता जी एक बिचित्र नाटक कर रहे हैं, सर्व कला समरथ हैं, एक फुरना कर देने से सभी कुछ भ्रष्ट कर दें, पर यहाँ एक ही वाहिगुरु सभी जगह परिपूर्ण है, शाप किसे दें। इसलिए वह कष्ट उठाकर भी अति उच्च सूक्ष्म गुणों को उभार रहे हैं। उन्होंने आदर्श मनुष्य, जिस में और प्रभु में कोई भेद नहीं, उसे खालसा आदर्श का धारणी बना कर अति उत्तम मनुष्य ‘खालसा’ के रूप में सृजन किया है। अपने पिता के महान बडप्पन गौरव को मौत के भय का दास नहीं बनाना बल्कि हंसते हंसते मौत को गले लगाना है। इसी मृत्यु में से ही अमर जीवन प्रकट होता है।”



बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक अक्टूबर, अंग - 24)

सो राजा जनक सभी दृष्टिमान से विरक्त होकर अपने आत्म स्वरूप में समाधिस्थ हो गया। काफी समय बीतने के बाद अष्टावक्र जी ने उसे कहा कि जिस सत अवस्था का तूने अनुभव किया है तथा चेतन रूप में परमानन्द अनुभव किया है, यह सत्त-चित्त-आनन्द ही तेरा अपना रूप है। इस अपने रूप को पहचान तथा जिसके बारे में फ़रमान है -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु।

अंग - 441

हे राजन! जो तुझे हमने अनुभव करवाया है यह परम तत्व है। यही आत्म ब्रह्म है, इसी में हम अपने चित्त वृत्तियों को लीन करके तथा राज, धर्म के अनुसार जब तक शरीर में प्राण चलते हैं, उन्हें निभा। उस समय अष्टावक्र ने पाँच श्लोकों के द्वारा ज्ञान करवा दिया, यह सारा उपदेश अष्टावक्र गीता में अध्याय 2, पाँचवें श्लोक में तथा दसवें और पन्द्रहवें श्लोक में विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है जिसका सार इस प्रकार है -

हे राजन! यह शरीर, इन्द्रियाँ, प्राण, देह, मन, बुद्धि यह सभी एक वाहन (vehicle) है। यह शरीर के अपने धर्म हैं - यह काला है, गोरा है, दुखी है, सुखी है, तू इन धर्मों को अपने से अलग समझ। तेरा स्वरूप परिपूर्ण है और तेरा अपना ज्योति स्वरूप सब का प्रकाशक है। हर जगह परिपूर्ण है जैसे कि -

जिमी जमान के बिखै समसत एक जोत है।

न घाट है न बाढ है न घाट बाढ होत है॥

अकाल उस्तति

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई।

रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई॥

ईत ऊत नही बीछुइँ सो संगी गनीऐ।

बिनसि जाइ जो निमख महि सो अल्प सुखु भनीऐ॥

प्रतिपालै अपिआउ देइ कछु ऊन न होई।

सासि सासि संमालता मेरा प्रभु सोई॥ अंग - 677

हे राजन! तू सभी का प्रकाशक होने के कारण स्व प्रकाश है, सैभं है, माया रहित है, शुद्ध है, यही तेरे बन्धन हैं जो तू अपने आपको कर्ता मानकर कर्म करता है, तू अपने स्वरूप में सदा ही समाधिस्थ है, सदा ही तेरी सहज अवस्था यह तेरी परम समाधि है जहाँ कोई दुख सुख नहीं पहुँच सकता। हे राजन! तेरा कोई वर्ण नहीं है, न ही तू क्षत्रिय हैं न ही तू शूद्र हैं, न ही तेरा कोई देश है; तू सर्व परिपूर्ण ज्योति हैं, न ही तू ब्रह्मचारी हैं, न त्यागी हैं, न गृहस्थी हैं, न सन्यासी हैं, न ही तू किसी इन्द्रिय का विषय है, तू अगम है, अगोचर है, अथाह है, इन इन्द्रियों में से कोई इन्द्रिय तुझे अनुभव नहीं कर सकती। तू इनसे न्यारा है, तू दिखाई देने वाला नहीं है। तू दृष्टा (देखने वाला) है। धर्म-अधर्म, पाप-पुण्य, सुख-दुख, कर्ता-भोक्ता यह मन, बुद्धि के विषय हैं, तू इनसे निसंग है, निवृत्त है। तू व्यापक परिपूर्ण है, इनमें से कोई भी तेरा धर्म नहीं है, तू केवल दृष्टा होकर देखने वाला है। न तू कर्ता है, न तू भोक्ता है, न तू किसी यौनि में आता है, तेरे अनेक नाम हैं, तेरे रूप को कोई नहीं जानता।

चक्र चिहन अरु बरन जाति अरु पाति नहिन जिह।

रूप रंग अरु रेख भेख कोऊ कहि न सकति किह।

अचल मूरति अनभउ प्रकास अमितोज कहिजै।

कोटि इंद्र इंद्राणि साहि साहाणि गणिजै।

त्रिभवण महीप सुर नर असुर नेत नेत बन त्रिण कहत।

तव सरब नाम कथै कवन करम नाम बरणत सुमति॥

जापु साहिब

तेरे अनेक नाम लेकर, संसार तुझे नमस्कार कर रहा है जैसा

कि -

नमसतं अकाले। नमसतं क्रियाले॥

नमसतं अरूपे। नमसतं अनूपे॥

..... ॥

तू सदा मुक्त अवस्था है, अपने इस स्वरूप को जानकर इसमें स्थित रहे। हे राजन!

जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जल ते भिन न होई।

अंग - 485

पानी की लहरें, झाग बुलबुले, पानी से अलग नहीं हुआ करते, वे पानी का ही रूप हुआ करते हैं। इस प्रकार यह विश्व तेरे रूप से अलग नहीं है क्योंकि इस संसार को प्रकट रूप देने वाला तू स्वयं ही है, देखने वाला भी तू ही है, दिखाई देने वाला भी तू ही है। तेरा स्वरूप 'आदि सच्चु जुगादि सच्चु। है भी सच्चु नानक होसी भी सच्चु॥' है।

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी

हरि बिनु अवरु न देखहु कोई।

हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ।

एहु विसु संसारु तुम देखदे

एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ।

गुर परसादी बुझिआ जा वेखा हरि इकु है

हरि बिनु अवरु न कोई।

कहै नानकु एहि नेत्र अन्ध से

सतिगुरि मिलिऐ दिब द्रिसटि होई॥ अंग - 922

सो यह निश्चय पूर्वक सारे संसार को अपना स्वरूप समझ। जब हम विचार करते हैं कि वस्त्र क्या है? यह एक ही रूई के धागे विधि पूर्वक बुनने के बाद कपड़ा कहलाते हैं पर यह सूत है ऐसे ही विचार करने पर यह सारा संसार आत्मा स्वरूप ही है। ऐसा निश्चय कर -

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ।

आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ।

अंग - 846

ऐसा विचार सुनकर राजा जनक सहज अवस्था में स्थिर हो गए तथा अपना अनुभव बताते हुए फ़रमान करने लगे, बड़े आश्चर्य की बात है, यह जगत मिथ्या है, मुझे वास्तविक रूप का अज्ञान होने के कारण मेरे अन्दर ही अलग प्रतीत हो रहा है जैसे सिष्पी के बारे में अज्ञान होने के कारण

सिष्पी में चान्दी प्रतीत होती है और अन्धेरे में रस्सी का ज्ञान न होने के कारण साँप दिखाई देती है। सूर्य की किरणों के कारण खुले रेतीले मैदान में जल की धारा दिखाई देती हैं। यह सब क्या हुआ? सारा संसार मुझ से ही पैदा होता है और मेरे अन्दर ही लीन हो जाता है। मैं ही संसार में प्रकट होकर दिखाई देने वाला बन जाता हूँ। मैं ही अपने स्वरूप में इसे दृष्टा होकर अलग देखता हूँ पर दोनों तरफ मैं ही हूँ जैसे जल में से लहरें उठकर जल में लीन हो जाती हैं। हैरानी की बात है कि सोना कुठाली में गर्म करके जब अनेक रूपों में ढाला जाता है तो वही सोना हार कहलाता है, कड़े-चूड़ियाँ कहलाता है। नथ, लोंग, मछलियाँ कहलाता है तथा और अनेक प्रकार के गहने बनकर उपाधि धारण करता है। यह सब मिथ्या दृष्टि के कारण होता है, वास्तव में सोने ने ही अनेक रूप धारण किये होते हैं। ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय-ध्याता-ध्यान-ध्येय; प्रमाण, प्रमेय, प्रिमाता अनेक त्रिकुटियों के द्वैत रूप, वास्तव में भासित हो रहे हैं और तत्व की कसौटी पर यह अज्ञान क्षण भंगुर हो जाता है। गुरु महाराज जी इस अवस्था के बारे में फ़रमान करते हैं -

मिले नराइण आपणे मानोरथो पूरा राम राजे।

ढाठी भीति भरम की भेटत गुरु सूरु राम राजे।

पूरन गुर पाए पुरबि लिखाए सब निधि दीन दइआला।

आदि मधि अंति प्रभु सोई सुंदर गुर गोपाला।

सूख सहज आनन्द घनेरे पतित पावन साधू धूरा।

हरि मिले नराइण नानका मानोरथो पूरा॥ अंग - 454

तू पेडु साख तेरी फूली। तू सूखमु होआ असथूली।

तू जलनिधि तू फेनु बुदबुदा तुधु बिनु अवरु न भालीऐ जीउ॥

तू सूतु मणीऐ भी तू है। तू गंठी मेरु सिरि तू है।

आदि मधि अंति प्रभु सोई अवरु न कोई दिखालीऐ जीउ॥

तू निरगुणु सरगुणु सुखदाता। तू निरबाणु रसीआ रंगि राता।

अपणे करतब आपे जाणहि आपे तुधु समालीऐ जीउ॥

तू ठाकुरु सेवकु फुनि आपे। तू गुपतु परगटु प्रभ आपे।

नानक दासु सदा गुण गावै

इक भोरी नदरि निहालिऐ जीउ॥

अंग - 102

सो सन्त महाराज जी ने फ़रमान किया है कि माया का प्रभाव बहुत ही प्रबल है जैसा कि गुरु ग्रन्थ साहिब

जी में अंकित है -

सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ।
जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ॥
मारु मारु स्रपनी निरमल जलि पैठी।
जिनि त्रिभवणु डसीअले गुर प्रसादि डीठी॥
स्रपनी स्रपनी किआ कहहु भाई।
जिनि साचु पछानिआ तिनि स्रपनी खाई॥
स्रपनी ते आन छूछ नही अवरा।
स्रपनी जीती कहा करै जमरा॥
इह स्रपनी ता की कीती होई।
बलु अबलु किआ इस ते होई॥

अंग - 480

गुरू महाराज जी इसके बल को स्वीकार करते हुए,
साथ ही इलाज भी बताते हैं -

माइआ भुइअंगमु सरपु है जगु घेरिआ बिखु माइ।
बिखु का मारणु हरिनामु है गुर गरुड़ सबदु मुखि पाइ।

अंग - 1415

गुरू का शब्द पूरे सतगुरू से प्राप्त होता है। पूरा
सतगुरू पूर्व लिखे लेखों के फलस्वरूप ही मिलता है।
गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

जिन कउ पूरबि लिखिआ तिन सतिगुरु मिलिआ आइ।
मिलि सतिगुर निरमलु होइआ बिखु हउमै गइआ बिलाइ।
गुरमुखा के मुख उजले हरि दरगह सोभा पाइ।
जन नानकु सदा कुरबाणु तिन
जो चालहि सतिगुर भाइ॥

अंग - 1415

साधु संगत पर माया का बल नहीं पड़ता क्योंकि
वहाँ नाम का मण्डल हुआ करता है -

सतसंगति कैसी जाणीऐ। जिथै एको नामु वखाणीऐ।
एको नामु हुकमु है नानक सतिगुरि दीआ बुझाइ जीउ॥

अंग - 72

गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं -

ब्रहम लोक अरु रुद्र लोक आई इंद्र लोक ते धाइ।
साध संगति कउ जोहि न साकै मलि मलि धोवै पाइ॥
अब मोहि आइ परिओ सरनाइ।
गुहज पावको बहुतु प्रजारै मोकउ सतिगुरि दीओ है बताइ॥
सिध साधिक अरु जख्य किंनर नर रही कंठि उरझाइ॥

जन नानक अंगु कीआ प्रभि करतै

जाकै कोटि ऐसी दासाइ॥

अंग - 500

जहाँ नाम का प्रकाश हो जाता है वहाँ माया की
कोई ताकत काम नहीं किया करती क्योंकि माया की
उत्पत्ति हउमै में से हुई है जैसा कि फ़रमान है -

जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई।
जनम मरणु उसही कउ है रे ओहा आवै जाई॥

अंग - 999

हउमै और नाम का सदा ही विरोध रहता है। हउमै
संसार की वह अवस्था है जहाँ जीव पूरी तरह से अपने
आपको भूल जाता है, फिर परमेश्वर की भी कोई पहचान
नहीं रखता। वाहिगुरू जी को अपने आपसे अलग ही
समझता है। यह उसका भ्रम किसी प्रकार भी दूर नहीं
होता, चाहे पुस्तकों से भरी हुई सारी दुनियाँ की लाइब्रेरी
की सारी किताबें क्यों न पढ़ जाए तब भी भ्रम दूर नहीं
होता क्योंकि हउमै के अन्दर ही पढ़ाई लिखाई सम्बन्ध
रखती है, तत्व की बात पुस्तकों से बाहर होती है जैसा
कि फ़रमान है -

पड़ि पड़ि गडी लदीअहि पड़ि पड़ि भरीअहि साथ।
पड़ि पड़ि बेड़ी पाईऐ पड़ि पड़ि गडीअहि खात।
पड़ीअहि जेते बरस बरस पड़ीअहि जेते मास।
पड़ीऐ जेती आरजा पड़ीअहि जेते सास।
नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख॥

अंग - 467

सो लेखे में आने वाली बात नाम के मण्डल में
जाग्रत रूप में निवास करना है। जहाँ नाम का प्रकाश हो
गया, वहाँ हउमै का कोई अंश भी शेष नहीं रह जाता,
यही जीव प्रभु रूप होकर आप ही विचरता है, इसका
जीव भाव पूर्णतया नाश होकर यह ब्रह्म को पहचान कर
ब्रह्म रूप ही हो जाया करता है जैसा कि -

कबीर जाकउ खोजते पाइओ सोई ठउरु।
सोई फिरि कै तू भइआ जाकउ कहता अउरु॥

अंग - 1369

कबीर तूं तूं करता तू हुआ मुझ महि रहा न हूँ।
जब आया पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू॥

अंग - 1375

सभी कर्म, धर्म, जप, तप, नाम साधना एक ही बिन्दु पर केन्द्रित हुआ करते हैं वह यह है कि युगों युगान्तरों से पड़ी हुई द्वैत का पूर्ण रूप में अभाव होकर यहाँ केवल एक प्रभु ही अपने कौतुक स्वयं करता हुआ अनुभव हो। ये अवस्थाएं ब्रह्म वेत्ताओं को प्राप्त हुआ करती हैं। इसी अवस्था के मालिक को 'सन्त' कहा जाता है। वह अपने स्वरूप को कभी भी नहीं भूलता और सन्त की पदवी उस शरीर में प्रकट होकर सन्त कहलाती है -

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामां मनि मंतु।

धनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु॥ अंग - 319

संक्षेप में इस सारे उपदेश को महापुरुषों ने दर्शाते हुए फरमाया है कि पहली माया जड़ है जिसमें धन-धाम, ज़मीन जायदाद, जड़ चीज़ों के साथ जुड़ा हुआ सम्बन्ध कहा जा सकता है। यह माया की बहुत अन्धकारपूर्ण अवस्था है। दूसरी माया चेतन है जिसमें स्त्री, पुत्र, परिवार का मोह तथा पर स्त्री भोग आदि आ जाते हैं। इसमें जीव अपनी हडमै को घास डालता है और सांसारिक प्राप्तियाँ प्राप्त करके फूला नहीं समाता। इस अवस्था में अपने स्वरूप का किञ्चित मात्र भी ज्ञान पैदा नहीं हुआ करता। तीसरी अवस्था में इस जीव की मानसिक शक्तियों का प्रकटीकरण है जिनमें रिद्धियाँ सिद्धियाँ बुद्धि के करिश्में विद्या आदि शामिल हैं। चौथी माया वह है जिसके फलस्वरूप वह प्रभु अनेक रूपों में होता हुआ अलग अलग प्रतीत होता है। पूर्ण ज्ञान में सत्य अनुभव करके शारीरिक मति जान जाती है कि प्रभु अपनी खेल खेलते जीवों को माया के प्रभाव में रखकर अपने से अलग अनुभव प्रतीत करवाता है। विराट रूप में (समष्टि) वह स्वयं ही है। पर व्यष्टि (अलग अलग) रूप में वह अलग अलग प्रतीत होता है। इसी माया के वश में पड़ा हुआ जीव अरबों-खरबों वर्षों से कर्मों का बन्धा हुआ जन्मता और मरता है। जब तक इसकी हडमै का अभाव न हो जाए तब तक इसका अलगपन दूर नहीं हुआ करता। पूरे तत्व वेत्ता महापुरुषों की संगत इसके अन्दर नाम प्राप्ति की रुचि पैदा करती है और यह कर्म उपासना, ज्ञान, विज्ञान के कर्मों द्वारा नाम रस, नाम रंग का आनन्द लेता हुआ तत्व वेत्ता महापुरुषों पर पूर्ण, श्रद्धा रखता हुआ

इस माया के अन्धकार में से निकल जाया करता है। दुनियाँ में सारे मायावी जीव, माया के प्रभावाधीन अपने आपको अनेक सम्प्रदायों के अनुयायी मानते हुए मुख से ऊट पटांग बोलकर अज्ञानमयी भावना का प्रकटीकरण करते हुए स्वयं भी फंसे रहते हैं तथा दूसरों को भी निकलने नहीं दिया करते। सन्त महाराज जी ने कहा कि तुम सभी इस लम्बे साधन में जिसका समय तीन साल मापा गया था तथा फिर तीन साल और बढ़ा दिया गया था, में प्रवेश कर रहे हो तथा रिद्धियों-सिद्धियों रूपी माया से बचकर चेतन माया पर संकोच रखकर अज्ञान के बन्धन काटने हैं, यह लक्ष्य लेकर तुम साधन सम्पन्न हो तथा अपना जीवन सफल करो। सन्त महाराज जी इसी समय का जिक्र करते हुए एक बार मुझे बता रहे थे कि हमने इस साधना के समय महापुरुषों को मिलने के उपरान्त 9 वर्ष तक धरती पर पीठ नहीं टिकाई थी, हैरानी होती है कि -

सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी, ओह कर अराम नहीं बहिंदे।

निहुं वाले नैणां की नींदर ओह दिने रात पए वहिंदे।

इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी

वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे।

भाई वीर सिंह जी

ये कहानियाँ हैं जिन्हें हम प्रकाश स्तम्भ (Light houses) कह सकते हैं तथा जो संसार को पानी में डूबी हुई पथरीली पहाड़ियों (rocks) से बचाकर पार होने के लिए सुरक्षित रास्ते का मार्ग दर्शन करती हैं। आप ही सोचो ऐसे महापुरुषों की निन्दा करके सचमुच ही वह गति नहीं मिलेगी जो गुरु महाराज जी ने सुखमनी साहिब की तेहरवीं अष्टपदी में वर्णन की है।

इस प्रकार के वचन महापुरुषों ने उन 18 मौन व्रतियों के प्रति समय समय पर किये थे तथा आज्ञा दी की मायिक स्वरूप में से उठकर अपने आत्म स्वरूप की पहचान आत्म चिन्तन द्वारा करो। यह भजन की आखिरी अवस्था है जहाँ पहुँच कर दो से एक हो जाया करता है। जब तक जीव का मैं भाव अलग रहता है तब तक दुख की निवृत्ति नहीं होती क्योंकि यह द्वन्द में फंसा हुआ है। जीव के बस की बात भी नहीं है क्योंकि यह अधिकार रूपी चाबी तत्व वेत्ता महापुरुषों को दी हुई है -

'चलता'



सभ ते वडा सतिगुरु नानकु जिनि कल राखी मेरी

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक नवम्बर, पृष्ठ - 37)

अब क्या कोई निरोगी भी है? क्योंकि एक वातावरण तो वह है जहाँ पर हम लोग श्वास ले रहे हैं और हम लोग तो वृक्षों को काटने की तबाही ही मचा रहे हैं। यदि पृथ्वी पर 33 प्रतिशत वृक्ष रहें तभी सन्तुलन बना रहता है और आज हमारे देश में तो 3 प्रतिशत वृक्ष ही शेष रह गए हैं तथा पंजाब की धरती तो रेगिस्तान में परिवर्तित होती जा रही है। पानी गहरा चला गया है। ये वृक्ष महापुरुषों ने स्वयं लगवाए थे। आपने तो कोई भी जगह ऐसी नहीं छोड़ी जहाँ पर कि वृक्ष न लगवाए हों, यही कारण है कि आज इस जगह पर मोर नृत्य करते हैं तथा पक्षी चहचहाते हैं -

बलिहारी कुदरति वसिआ ॥

तेरा अंतु न जाई लखिआ ॥ अंग - 469

हम बलिहार जाते हैं ऐसी कुदरत से और ऐसी कुदरत के बारे में सोचकर बिसमाद में चले जाते हैं लेकिन आजकल हमारे प्रदेश की स्थिति ऐसी हो गई है कि हमारी आक्सीजन में भी कार्बनडाइआक्साइड की बहुलता हो गई है। वातावरण दूषित हो गया है, दूसरी तरफ सतगुरु जी, जो हमें उपदेश दे रहे हैं वे रोग रहित हैं। यथा -

रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी ॥ अंग - 1140

सतगुरु योगी जो है वह युक्ति के द्वारा हमारी मुक्ति करवा देता है। गुरु बाबा जी, इस कल्युग के समय के अन्दर एक ऐसा ठोस गुरुमन्त्र, छत्तीस युगों की कमाई के बाद, लेकर आए, जिसके द्वारा सारे दुख व रोग समाप्त हो जाते हैं। आज गुरु बाबा जी वैद्य को उपदेश दे रहे हैं कि -

पहिलै पिआरि लगा थण दुधि ॥

दूजै माइ बाप की सुधि ॥

तीजै भया भाभी बेब ॥

चउथै पिआरि उपंनी खेड ॥

पंजवै खाण पीअण की धातु ॥

छिवै कामु न पुछै जाति ॥

सतवै संजि कीआ घर वासु ॥

अठवै क्रोधु होआ तन नासु ॥

नावै धउले उभे साह ॥

दसवै दधा होआ सुआह ॥

गए सिगीत पुकारी धाह ॥

उडिआ हंसु दसाए राह ॥

आइआ गइआ मुइआ नाउ ॥

पिछै पतलि सदिहु काव ॥

नानक मनमुखि अंधु पिआरु ॥

बाझु गुरु डुबा संसारु ॥

अंग - 137

गुरु बाबा जी ने सारा नक्शा खींच दिया कि तुम्हारी आयु किस प्रकार से बीतती जा रही है -

बारह बरस बालपन बीते

बीस बरस कछु तपु न कीओ ॥

तीस बरस कछु देव न पूजा

फिरि पछुताना बिरधि भइओ ॥ अंग - 479

बुढ़ापे को जरा रोग कहा गया है -

जरा जीवन जोबनु गइआ किछु कीआ न नीका ॥

अंग - 856

गुरु नानक पातशाह जी सगुण स्वरूप में आए और वाहिगुरु मन्त्र को लेकर आए, जो कि सारे दुखों व रोगों को दूर कर देता है। पहली बात तो यह है कि हम लोग विधिपूर्वक गुरुमन्त्र को ग्रहण ही नहीं करते हैं और यदि ले लेते हैं तो फिर हम उसका सही प्रयोग नहीं करते हैं क्योंकि-

बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै ॥

अंग - 954

शब्द हैं 'धुन'। अब एक फिल्म आई थी - 'अलीबाबा चालीस चोर'। महापुरुषों ने कहा कि यह कहानी किसी अनुभवी महापुरुष ने लिखी है। जब वे कहते थे कि 'खुल जा सिम सिम' तो ताला खुल जाता था। दरअसल वे आन्तरिक अवस्था का भेद खोलते हैं क्योंकि यह दवाई तो साधू ही प्रदान करते हैं अन्यथा यह दवाई प्राप्त ही नहीं होती है और इसका पता ही नहीं चल पाता है -

हरि अउखधु सभ घट है भाई ॥

गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई ॥

अंग - 259

जब तक हमें उस विधि का ज्ञान ही नहीं है, तब तक हम उस अमूल्य नाम तक पहुँचेंगे कैसे? गुरुमन्त्र ने ही हमें वहाँ तक पहुँचाना है। नाम को कोई बाहर से नहीं देता है बल्कि नाम तो हमारे अन्दर से ही प्राप्त होता है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु ॥

देही महि इस का बिसामु ॥

अंग - 293

बाहर से फिर क्या मिलता है? बाहर से प्राप्त होता है - मन्त्र। हमारे घर का मन्त्र है - 'वाहिरु'। पाँच प्यारे अमृत ग्रहण करवाते समय 'मूलमन्त्र' दृढ़ करवाते हैं जबकि नाम तक पहुँचने की विधि सत्संग के माध्यम से हमें प्राप्त होती है-

सतसंगति कैसी जाणीऔ ॥

जिथै एको नामु वखाणीऔ ॥

अंग - 72

साधू लोग युक्ति बतला देते हैं कि इस प्रकार से कर लिया करो। वह युक्ति क्या है? महापुरुष युक्ति के बारे में बहुत बार बतलाया करते थे और सातवें समागम के अवसर पर महापुरुषों ने उस युक्ति को सार्वजनिक रूप से बतलाया लेकिन उसे कितने लोगों ने अपनाया? अब यदि चाभी तो मिल गई लेकिन यदि हमने उसका प्रयोग ही नहीं किया तो फिर नाम तक पहुँचेंगे कैसे -

गुरि पूरै संजमु करि दीआ ॥

नानक तउ फिरि दूख न थीआ ॥

अंग - 259

पूरा प्रभु आराधिआ पूरा जा का नाउ ॥

नानक पूरा पाइआ पूरे के गुन गाउ ॥

अंग - 295

बाबा जी, वैद्य को कह रहे हैं कि तुम अपने अन्दर से ही दवाई को ढूँढो, मन्त्र का अभ्यास करो, जिसके द्वारा तुम्हारे सारे दुख व रोग दूर हो जाएँगे। अतः हमें थोड़ा सा समय 'वाहिरु' मन्त्र के अभ्यास के लिए भी रखना चाहिए न कि उठते ही खाने-पीने में जुट जाओ -

करि इसनानु सिमरि प्रभु अपना

मन तन भए अरोगा ॥

अंग - 611

गुरु बाबा जी जहाँ पर रात को ठहरते थे तो सबसे पहले स्नान करने के बारे में सोचते थे ताकि ब्रह्ममुहूर्त के समय को सम्भाल लिया जाए -

तिना दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ ॥

अंग - 146

अब तो हम लोग ब्रह्ममुहूर्त को भी भूल गए हैं और अमृत को भूल गए हैं। यदि गुरु जी कोढ़ी के पास दीपालपुर जाते हैं तो आप गाँव से बाहर, कुएँ पर ही ठहरते हैं ताकि स्नानादि की सुविधा हो। वहाँ पर आपने स्वयं भी स्नान किया और उस कोढ़ी को भी स्नान करवाया तथा उसे मन्त्र बल के द्वारा स्वस्थ कर दिया। दरअसल वह मन्त्र ही ऐसा है जिसके द्वारा सारे रोगों और दुखों का इलाज किया जा सकता है। आप इसे आजमा कर देख लो, फिर किसी डाक्टर की या वैद्य की जरूरत नहीं रह जाती है।

दो मिसालें हैं। एक संस्कृत कालेज का शिलान्यास मस्तुआणे वाले महापुरुषों ने किया था और दूसरी मिसाल रतवाड़ा साहिब की है जब रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुषों ने देहरादून जॉलीग्रान्ट मैडिकल कालेज का शिलान्यास किया।

संस्कृत कालेज बन गया हिन्दू विश्वविद्यालय और मैडिकल कालेज बन गई हिमालयन मैडिकल यूनिवर्सिटी। जिस समय मैडिकल कालेज का शिलान्यास किया गया तो उस समय वहाँ पर संसार के कोने-कोने से आए हुए डाक्टर बैठे हुए थे जिन्होंने बहुत बड़ी बड़ी डिग्रियाँ ली हुई थीं, बड़े-बड़े दार्शनिक बैठे हुए थे। महापुरुष कहने लगे, आप लोगों को combination therapy कर लेनी चाहिए ताकि सही दवा, सही कार्य कर सके क्योंकि -

अउखद आए रासि विचि आपि खलोइआ ॥

अंग - 1363

दवा बहुत ही बेहतरीन परिणाम देती है। जब हम एलोपैथी के साथ-साथ आवश्यकतानुसार होम्योपैथी आयुर्वेदिक व नैचुरपैथी का भी प्रयोग कर लें। ये सारी चिकित्सा पद्धतियाँ बहुत ही उपयोगी हैं, इनके खोजकर्ताओं ने बहुत कड़ी मेहनत के बाद इन्हें जन कल्याणार्थ प्रस्तुत किया है, अतः कोई भी पद्धति खराब नहीं हुआ करती है। इसी प्रकार से जो वाहिरु मन्त्र रूपी दवा है, यह हमें नाम तक पहुँचा देती है और जब हम नाम में स्थित हो जाते हैं तो फिर हमारे सभी दुख व रोग दूर हो जाते हैं।

अतः गुरु बाबा जी ने उस वैद्य को इस प्रकार का उपदेश दिया। अब बाबा नानक जी का उपदेश तो सारी

(शेष पृष्ठ 52 पर)

उन शहीदों को प्रणाम है जिन्होंने अपना जीवन धर्म पर न्यौछावर कर दिया
- सन्त बाबा लखबीर सिंह जी

साहिब श्री गुरु नानक देव जी के पाँच सौ पचासवें प्रकाश पर्व को समर्पित
समागम का प्रथम दिन

गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में आयोजित किए गए पांच दिवसीय गुरुमति समागम का आज प्रथम दिवस दिनांक 30 अक्टूबर दिन बुधवार को बड़ी ही श्रद्धा भावना व धूमधाम से मनाया गया। आज का गुरुमति समागम समस्त शहीदों को समर्पित था। विश्व गुरुमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट के मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी ने अपने प्रवचनों में छोटे व बड़े साहिबजादों की धर्म, देश व मानवता की आजादी हेतु दी गई महान कुर्बानियों को याद करते हुए समस्त श्रद्धालुजनों को याद करवाया कि रूहानी प्रेम के खेल में सिर को तली पर रखना पड़ता है -

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥

सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥

इतु मारगि पैरु धरीजै ॥

सिरु दीजै काणि न कीजै ॥

अंग - 1412

आपने इतिहास में से महान शहादतों के उदाहरणों को प्रस्तुत करते हुए यह सिद्ध किया कि परमात्मा के द्वार पर पहुँचने के लिए या उसके द्वार पर स्वीकार्य होने के लिए सदैव ही कुर्बान होने के लिए तत्पर रहना पड़ता है -

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस ॥

होडु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि ॥

अंग - 1102

ऐसा ही जीवन बड़े व छोटे साहिबजादों का था जिन्होंने मुगल शासकों के अत्याचार के विरुद्ध चल रहे संघर्ष में अपने प्राणों की बाजी लगा दी। बड़े साहिबजादे चमकौर साहिब के मैदान-ए-जंग में अपने युद्ध कौशल का परिचय देते हुए शहादत का जाम पी गए जबकि छोटे साहिबजादों को सरहिन्द में जीवित ही दीवार में चिन कर शहीद कर दिया गया। आज सारी दुनिया इन महान शहीदों को प्रणाम कर रही है।

आज का दीवान ब्रह्ममुहूर्त में गुरुद्वारा साहिब में आसा दी वार के साथ आरम्भ हुआ तथा हुक्मनामे की विचार के उपरान्त गुरुद्वारा साहिब का दीवान समाप्त हुआ। 9.00 बजे प्रातः से दीवान हाल के बड़े पण्डाल में दीवान सजा जिसमें गुरुमति विचारें, शहीदों का गौरवमयी इतिहास तथा प्यार भरी कथाओं को भाषणों के माध्यम से तथा ढाडी वारों के माध्यम से बखूबी प्रस्तुत किया गया।

प्रारम्भ में गुरु गोबिन्द सिंह विद्या मन्दिर तथा सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल रतवाड़ा साहिब के बच्चों ने सुरीली आवाज में शब्द कीर्तन किया। इसके बाद भाई गुरुजीत सिंह - रुद्रपुर वाले, भाई गुरुचरन सिंह, भाई परमप्रीत सिंह, बहन राजविन्दर कौर तथा भाई जसविन्दर सिंह जी ने अपने अमृतमयी कीर्तन के माध्यम से संगत को कृतार्थ किया।

इसके पश्चात मिशन के मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी ने अपने शब्द-कीर्तन व्याख्यान के माध्यम से महान शहीदों की कुर्बानियों का जिक्र करते हुए फुरमान किया कि श्री गुरु अरजन देव जी, श्री गुरु तेग बहादर जी, बड़े तथा

छोटे साहिबजादे व श्री गुरु गोबिन्द सिंह महाराज जी ने अपना सारा जीवन जुल्म के विरुद्ध मानवता के सम्मान व स्वाभिमान को कायम रखने के लिए कुर्बान कर दिया जिसकी बदौलत आज सारा संसार, उनको सादर प्रणाम कर रहा है। इस प्रकार का सन्देश गुरवाणी में बार-बार दिया गया है -

**जिन हरि अरथि सरीरु लगाइआ गुर साथु बहु सरधा लाइ मुखि धूड़ा ॥
हलति पलति हरि सोभा पावहि हरि रंगु लगा मनि गूड़ा ॥**

अंग - 698

अरदास तथा हुक्मनामे के बाद आज के दिन का गुरुमति समागम समाप्त हुआ। इसके बाद शाम का दीवान रहिरास साहिब के पाठ के साथ ही प्रारम्भ हो गया। रात के दीवान में सन्त मनजीत सिंह - मुल्लापुर गरीबदास, सन्त सुरिन्दर सिंह - मोहाली, ज्ञानी इकबाल सिंह, बहन जसप्रीत कौर - आस्ट्रेलिया तथा भाई गुरदेव सिंह - यू.पी. वालों ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवाई।

दिनांक 31.10.2019 रतवाड़ा साहिब

परमात्मा के प्यारे, उनके द्वारा किए गए कार्यों के माध्यम से, सदा के लिए ही अमर रहते हैं -
बाबा लखबीर सिंह जी।

रतवाड़ा साहिब में श्री गुरु नानक देव जी के पाँच सौ पचासवें प्रकाश पर्व को समर्पित पाँच दिवसीय गुरुमति समागम का दूसरा दिन, पाँच प्यारों की मधुर स्मृति तथा विश्व गुरुमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट के संचालक सन्त बाबा वरियाम सिंह जी की पावन स्मृति को समर्पित था। ट्रस्ट के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी ने आज समागम के दौरान संगत को सम्बोधन करते हुए तथा पाँच प्यारों की अद्वितीय कुर्बानी को याद करते हुए फुरमाया कि ये पाँचों प्यारे जो कि गुरु-प्रेम में सराबोर थे, भारत के पृथक-पृथक प्रान्तों से गुरु जी के बुलावे पर सन् 1699 ई. की बैसाखी को दीवान में आए थे। दशमेश पिता की नंगी तलवार के आगे इन पाँचों ने अपने शीश अर्पित किए। गुरु जी ने इन्हें अपने वक्ष से लगाकर तथा इन्हें प्यारा कहकर सम्बोधित किया और इन्हें अमृतपान करवा कर खालसा पन्थ की नींव रखी। ये पाँचों प्यारे आजीवन गुरु जी की संगत में रहते हुए उनके दुख-सुख के साथी बने तथा कुर्बानियां दीं। बाबा जी ने, रतवाड़ा साहिब मिशन के संचालक व मुखी सन्त बाबा वरियाम सिंह जी के अनेकों परोपकारों का संक्षेप में व्याख्यान करते हुए बतलाया कि किस प्रकार से आप जी ने श्री गुरु नानक देव जी के आशय के अनुसार नाम जपो, किरत करो तथा मिलबाँट कर ग्रहण करो के सुनहरी उसूलों को न केवल स्वयं निभाया वरन् लाखों प्राणियों को नाम-सिमरन में जोड़कर उन्हें अमृत गृहण करवाया। आप गुरु मर्यादानुसार गृहस्थाश्रम में रहे। आपने सश्रम जीविकोपार्जन करते हुए खेतीबाड़ी का कार्य भी किया, सरकारी नौकरी भी की और पुनः कृषि कार्य को किया तथा मिल बाँटकर ग्रहण किया। मिशन के उसूलों के साथ जुड़े लाखों प्रेमीजनों को आपने नाम सिमरन के साथ जोड़ा उन्हें निरर्थक मान्यताओं से मुक्त किया तथा मानवीय सेवा के लिए तैयार किया। प्राकृतिक आपदाओं के समय आपने दूर-दूर तक खाद्य सामग्री के अतिरिक्त कपड़े, कम्बल, रजाइयाँ, स्कूली बस्ते व पुस्तकें आदि जरूरतमन्दों को प्रदान करते हुए उनकी हर सम्भव मदद की। रतवाड़ा साहिब में दो गुणवत्तायुक्त स्कूल, तकनीकी कालेज, नर्सिंग कालेज, अस्पताल, वृद्धाश्रम तथा अनेकों सेवाएं शुरू की जो कि निरन्तर बुलन्दावस्था में चल रही हैं।

आज का दीवान मुख्य पण्डाल में प्रातः चार बजे आसा दी वार के साथ आरम्भ हो गया जिसमें स्कूल के बच्चों, कीर्तनी जत्थों तथा ढाडी जत्थों ने वारों के माध्यम से गायन करके संगत को निहाल किया। बाबा जी के द्वारा, सन्त बाबा वरियाम सिंह जी के जीवन की कठिन साधना व मेहनत तथा उनके द्वारा धार्मिक, सामाजिक व साहित्यिक क्षेत्र में पाए गए बहुमूल्य योगदान का जिक्र विस्तारपूर्वक किया। आज भी रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट, उनके द्वारा शुरू किए गए विभिन्न सेवा कार्यों को बुलन्दावस्था में आगे लेकर जा रहा है। लाखों श्रद्धालुजन आज भी जीवन के लाभ प्राप्त कर रहे हैं। आज हमें आवश्यकता इस बात की है कि हम परमात्मा के प्यारों के जीवन से दिशा निर्देश लेकर, उनके द्वारा दृढ़ करवाई गई

जीवन युक्ति को अपने जीवन में ढालने का प्रयत्न करें। आज के माया के चकाचौंध वाले दौर में परमात्मा के प्यारों के जीवन हम सबके पथ प्रदर्शक हैं। भाई हरपाल सिंह 'स्नेही' द्वारा बनाई गई लघु फिल्म 'सच बोलूं कि झूठ' रिलीज की गई। महापुरुषों के शरीर के परित्याग करने के समय यानि कि 1.10 बजे उनके द्वारा दर्शाई गई जीवन युक्ति के अनुसार उनकी बेटी, बहिन 'रूपी' जी ने 'वाहिगुरू' का सिमरन करवाया।

महापुरुषों के बेटे स. मनजीत सिंह जी यू.एस.ए. ने भी उनकी स्मृति को ताजा किया। बाबा हरपाल सिंह जी ने भी महापुरुषों द्वारा किए गए परोपकारों पर प्रकाश डाला। इसके बाद ट्रस्ट के वर्तमान मुखी, सन्त बाबा लखबीर सिंह जी ने वैराग्यमयी कीर्तन प्रवचनों द्वारा संगत को नाम वाणी के साथ जोड़ा। वैराग्यमयी धारणा 'जिथे वसियाँ प्यारे तेरियां यादां, ओहियो तेरा रूप बण गए' के द्वारा गुरुवाणी के प्रमाण देकर आपने कीर्तन की शुरुआत की। उन्होंने बतलाया कि परमात्मा के प्यारे सदैव जीवित रहते हैं तथा उनकी अमरता उनके द्वारा किए गए जन कल्याण के कार्यों द्वारा सदैव रूपमान होती नजर आती है।

आज के समागम में ट्रस्ट के जत्थों, बहन नरिन्दर कौर, बहन जगनप्रीत कौर, भाई रूपिन्दर सिंह, बहन रजनीश कौर, रागी भाई राजबीर सिंह - खड्डर साहिब, भाई बलविन्दर सिंह - पट्टी, भाई मक्खन सिंह - विरसा, ज्ञानी जसविन्दर सिंह भूतपूर्व मुख्य ग्रन्थी श्री दरबार साहिब, भाई मनजीत सिंह - आल इंडिया रेडियो, भाई प्रभजोत सिंह - रतवाड़ा साहिब, बाबा गुरपाल सिंह यू.पी. वाले, भाई बलविन्दर सिंह - कुराली तथा भाई जसविन्दर सिंह 'घोला' ने हाजिरी भरी।

दिनांक 01.11.2019 रतवाड़ा साहिब

1) महिलाएँ सिक्ख इतिहास का गौरव - बाबा लखबीर सिंह जी

2) आज के समाज में महिलाएँ उन्नतिशील व रचनात्मक भूमिका अदा करें - बाबा लखबीर सिंह जी

श्री गुरु नानक देव जी के पाँच सौ पचास वर्षीय प्रकाश पर्व को समर्पित रतवाड़ा साहिब में हो रहे पाँच दिवसीय गुरुमति समागम का आज तीसरा दिन, सिक्ख इतिहास में महिलाओं द्वारा की गई सेवा, सिमरन, परोपकार तथा कुर्बानियों को तथा महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी की जीवन संगिनी सम्माननीया माता रणजीत कौर जी की पावन याद को समर्पित था। आज के प्रातःकालीन दीवान की शुरुआत मुख्य पण्डाल में प्रातः आसा दी वार के साथ जो कि बहिन चरनजीत कौर जी के जत्थे द्वारा गायन की गई। कीर्तन के बाद शब्द व्याख्या के साथ आसा दी वार के कीर्तन की समाप्ति हुई।

इसके बाद दिन के समागम की शुरुआत, दीवान हाल के पण्डाल में नौ बजे हुई, जिसकी सम्पन्नता रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के वर्तमान मुखी बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा कीर्तन तथा मनोहर विचारों द्वारा हुई। आप जी ने आज के प्रकरण में बोलते हुए स्पष्ट किया कि सिक्ख गुरुओं ने गुरुवाणी रचना के माध्यम से, गुरु घरों की नित्य की मर्यादा के माध्यम से देश व परदेश में किए गए प्रचार के माध्यम से तथा महिलाओं को ऊँचा व सम्मानजनक रुतबा प्रदान किया। गुरु नानक देव जी की जगत प्रसिद्ध रचना में कहा गया है कि स्त्री सबका पालन पोषण करने वाली, घर को सम्भालने वाली, सामाजिक रिश्तों को प्रफुल्लित करने वाली, राजाओं-महाराजाओं, शूरवीरों व शहीदों की जननी है। इसलिए उसे बुरा कहना कितने बड़े उपद्रव वाली बात है।

सिक्ख गुरुओं ने केवल गुरुवाणी के माध्यम से ही अथवा सत्संग के माध्यम से ही प्रचार नहीं किया अपितु आपने परिवार में, संगत में, सिक्ख मर्यादाओं और रीति-रिवाजों में, स्त्रियों को गौरवपूर्ण सम्मान प्रदान किया। आज भी कुछ गुरु परिवारों की महिलाओं की कथा-कहानियाँ, कितने प्यार व सम्मान सहित सुनी व सुनाई जाती हैं जैसे कि गुरु नानक देव जी की बहिन नानकी जी, जिसे कि भाई नानक की रूहानियत की झलक सबसे पहले प्राप्त हो गई थी। श्री गुरु अंगद देव जी की धर्मसुपत्नी माता खीवी जी, जो कि लंगर की देखभाल करती थी और जिनका गुरुवाणी के अन्दर भी जिक्र है।

इसी प्रकार से श्री गुरु अंगद देव जी की बेटी अमरो जी, जो कि गुरु अंगद देव जी तथा गुरु अमरदास जी के परिवारों को परस्पर जोड़ने का माध्यम बनी।

ट्रस्ट के मुखी बाबा लखबीर सिंह जी ने अपने कीर्तन की शुरूआत 'चुम्मां पैर मूँ, जिना पछाता सच्च' के शब्द द्वारा की। उनके द्वारा सिक्ख इतिहास में महिलाओं व माताओं के योगदान के बारे में सविस्तार प्रकाश डाला गया। सिक्ख महिलाओं की कुर्बानियाँ भी पुरुषों की अपेक्षा किसी भी प्रकार से कम नहीं हैं, तभी तो आज भी हमारी पंथक अरदास में सिंहनियों का विशेष प्रकार से जिक्र आता है। सिक्ख इतिहास में समय-समय पर विषम से विषम मार्गों पर महिलाओं ने सदैव ही उन्नत व रचनात्मक भूमिका अदा की है और आगे होकर शहीदियाँ भी प्राप्त की हैं।

इसी प्रकार से रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट के संस्थापक महापुरुषों की जीवन संगिनी सम्माननीया माता रणजीत कौर जी की कठिन साधना, उनकी नाम कमाई व उनके द्वारा गुरुमति प्रचार के क्षेत्र में महापुरुषों को दिए गए साथ को भी कभी भुलाया नहीं जा सकता है। रतवाड़ा साहिब के द्वारा आरम्भ किए गए समस्त कार्यों में सन्त माता रणजीत कौर जी का बहुमूल्य योगदान रहा।

आज के समागम में भाई हरपाल सिंह - यू.पी. वाले, ज्ञानी इकबाल सिंह जी - लुधियाना, ज्ञानी रतन सिंह - यू.पी., भाई गुरुमुख सिंह जी, बहिन जसप्रीत कौर जी, भाई सिमरनजीत सिंह, ढाडी जत्था प्रेम सिंह 'प्रेमी', भाई रणजीत सिंह मुल्लानपुर, बहिन सुरिन्दर कौर, कवीशरी जत्था भाई रुपिन्दर सिंह, ढाडी जत्था लोहियाँ वाला, बहिन रजनीश कौर - रतवाड़ा साहिब, रागी जसविन्दर सिंह - पलसौरा, रागी जत्था (महिलाओं का) - पटना साहिब, भाई मक्खन सिंह - मनीला, रागी गुरुमीत सिंह 'शान्त', डा. बलविन्दर कौर चाहल, बाबा गुरुदेव सिंह - बनूड, श्रीमान सन्त सेवा सिंह - रामपुर खेड़ा ने विशेष रूप से हाजिरी भरी।

दिन के समागम में विशेष रूप से भूतपूर्व जत्थेदार, श्री अकाल तख्त साहिब, ज्ञानी रणजीत सिंह जी ने भी गुरुमति विचारों संगत के समक्ष प्रस्तुत कीं। उन्होंने समस्त संगत को सिक्ख संस्थाओं की उत्तरोत्तर दयनीय होती जा रही दशाओं के बारे में अवगत करवाया तथा गुरु धामों की सेवा-सम्भाल के लिए पंथक अकाली लहर का साथ देने की अपील व प्रेरणा की। इसी प्रकार से बाबा सरबजोत सिंह जी बेदी (अंशवंश श्री गुरु नानक देव जी, सरपरस्त पंथक अकाली लहर तथा सन्त समाज) ने भी आज के दीवान में विशेष रूप से हाजिरी भरी। उन्होंने श्री गुरु नानक देव जी द्वारा प्रदत्त जीवन-युक्ति पर पहरा देने की ताकीद की तथा कहा कि आज के समय में धार्मिक संस्थाओं के सिद्धान्तों तथा प्राचीनता की सम्भाल करना हम सबका परम दायित्व है। समागम के दौरान स्टेज की सेवा स. जसवन्त सिंह तथा स. गुरुदेव सिंह जी ने बाखूबी निभाई तथा अरदास की सेवा भाई सुखविन्दर सिंह जी ने बाखूबी निभाई।

रात्रि के दीवान में भाई मक्खन सिंह - मनीला, भाई मनप्रीत सिंह - मुंडी खरड़, कवीशर महल सिंह, भाई जसविन्दर सिंह 'घोला', बाबा गुरपाल सिंह जी - यू.पी. तथा बाबा हरपाल सिंह जी रतवाड़ा साहिब ने हाजिरी भरी।

दिनांक 02.11.2019 रतवाड़ा साहिब

- 1) सम्पूर्ण मानवता, श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की अगुवाई को कबूल करे - बाबा लखबीर सिंह जी
- 2) सम्पूर्ण मानवता श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी में से ही सुख-शान्ति प्राप्त कर सकती है - बाबा लखबीर सिंह जी

श्री गुरु नानक देव जी के पाँच सौ पचास वर्षीय प्रकाश पर्व को समर्पित रतवाड़ा साहिब में हो रहे पाँच दिवसीय गुरुमति समागम का चौथा दिन श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के गुरुगद्दी दिवस के तौर पर मनाया गया। देश-विदेश से आई हुई संगत को सम्बोधन करते हुए, ट्रस्ट के वर्तमान मुखी बाबा लखबीर सिंह जी ने श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी की महानता के बारे में उल्लेखनीय विचार प्रस्तुत किए। आपने फुरमाया कि श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी को, श्री गुरु गोबिन्द सिंह जी द्वारा

गुरुगद्दी पर सुशोभित करके भविष्य में शरीरधारी गुरु की प्रथा को हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त करना, न केवल सिक्ख कौम के लिए ही और न केवल भारतवर्ष के लिए ही वरन सारे संसार व सारी मानवता के लिए एक विलक्षण व महान कार्य था जो कि सारे संसार की मनुष्य जाति को एक परिवार की भांति जोड़ता है। यह परमात्मा के प्यार व नाम सिमरन का ऐसा रूहानी बेड़ा है, जिसमें बैठकर संसार भर के अमीर-गरीब, ऊंची व नीची जाति वाले, काले व गोरे, स्त्री व पुरुष यानि कि सारी मानवता, संसार रूपी समुद्र को पार कर सकती है। भारतवासियों के लिए यह कितनी विलक्षण बात है कि गुरु रूप इस गुरु ग्रन्थ साहिब में केवल छः गुरुओं की वाणी है तथा इसके साथ ही इसमें अन्य परमात्मा के प्यारे भी, गुरु साहिबानों के साथ बिराजमान हैं। इस प्रकार से श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी सारी मनुष्य जाति का पूजनीय ग्रन्थ है, जो कि सबको पारस्परिक बन्धुत्व भावना व प्रेम भावना में जोड़ता है। यह काव्य रूप में है जो कि 31 रागों में है तथा प्रत्येक जगह इसका गायन होता है। इसका सन्देश एक ही है कि 'ना को वैरी नाहि बेगाना'।

आज का समागम प्रातः आसा दी वार के कीर्तन के साथ जो कि बहिन उजागर कौर के जत्थे द्वारा गायन किया गया, आरम्भ हुआ। कीर्तन के उपरान्त शब्द की व्याख्या ट्रस्ट के मुखी बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा की गई। अपनी व्याख्या के दौरान बाबा जी ने श्री गुरु ग्रन्थ साहिब को दसवें पातशाह जी द्वारा गुरुता गद्दी देने से सम्बन्धित अमूल्य विचार प्रस्तुत करते हुए बतलाया कि उस समय दशमेश जी ने फुरमाया, खालसा जी! तुम लोगों को जुगो-जुग अटल गुरु साहिब के साथ जोड़कर हम जा रहे हैं। इनके माध्यम से ही आप हमारे दर्शन भी कर सकते हो, वचन भी कर सकते हो तथा दिशा निर्देश सम्बन्धी अगुवाई भी प्राप्त कर सकते हो। ज्ञानी बलजिन्दर सिंह परवाना, ज्ञानी साहिब सिंह कनाडा, ज्ञानी रतन सिंह - यू.पी. ढाडी जत्था भाई तरसेम सिंह मोरांवाली, बाबा गुलजार सिंह जी, बाबा कशमीरा सिंह जी - अलहौरां वाले, बाबा सुखजीत सिंह जी - संगरूर वाले, भाई जसविन्दर सिंह घोला तथा बाबा हरपाल सिंह जी रतवाड़ा साहिब वालों ने कथा कीर्तन द्वारा हरियश करके संगत को गुरु शब्द के साथ जोड़ा। सन्त हरी सिंह जी रंधावा वालों ने बड़े ही विद्वतापूर्ण ढंग से विचारें करते हुए दसवें पातशाह जी के ब्रह्मलीन होने के प्रसंग को सुनाकर संगत को प्रेम व वैराग्य से शरशार कर दिया। इस दौरान सभी के नेत्र सजल हो उठे। सन्त बाबा बलजिन्दर सिंह जी राड़ा साहिब वालों ने भी कीर्तन द्वारा संगत को कृतार्थ किया।

समागम के दौरान आज भी भारी मात्रा में अमृत संचार हुआ जिसमें अनेकों प्रेमीजन खण्डे-बाटे का अमृतपान करके गुरु वाले बने। समागम के दौरान देश व विदेश से आने वाली संगत की रिहायश तथा लंगर के अतिरिक्त पार्किंग, साफ सफाई तथा सुरक्षा के अत्यन्त सुन्दर प्रबन्ध किए गए ताकि श्रद्धालुजनों को किसी भी प्रकार की मुश्किल का सामना न करना पड़े। समागम के दौरान स्टेज की सेवा स. जसवन्त सिंह तथा स. गुरुदेव सिंह जी ने तथा अरदास की सेवा भाई सुखविन्दर सिंह जी ने बखूबी निभाई।

1500 के करीब मरीजों के चेकअप हुए तथा निःशुल्क दवाइयाँ प्रदान की गई तथा आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की मैनरशिप संगत ने उत्साहपूर्वक प्राप्त की।

रात्रि के समय कवि दरबार सजाया गया तथा कवि दरबार के अतिरिक्त भाई चरनजीत सिंह भेडवाल, ज्ञानी साहिब सिंह जी - कनाडा तथा सन्त बाबा भूपिन्दर सिंह जी जरग वालों ने भी हाजिरी भरी।

दिनांक 03.11.2019 रतवाड़ा साहिब

- 1) श्री गुरु नानक साहिब जी ने समस्त पृथकताओं को दूर करके, सबको एक प्रेम के धागे में पिरोया - बाबा लखबीर सिंह जी
- 2) श्री गुरु नानक साहिब जी द्वारा प्रदत्त सिद्धान्तों में ही मानवता का कल्याण सम्भव है - बाबा लखबीर सिंह जी
- 3) श्री गुरु नानक साहिब जी के सिद्धान्तों में इहलोक की जीवन जीने की कला तथा परलोक का टिकाव, विद्यमान

है - बाबा लखबीर सिंह जी

रतवाड़ा साहिब के समागम की विलक्षण पहचान, हजारों श्रद्धालुजनों ने की शिरकत

श्री गुरु नानक देव जी के पाँच सौ पचास वर्षीय प्रकाश पर्व को समर्पित रतवाड़ा साहिब में हो रहे पाँच दिवसीय गुरुमति समागम का आज पाँचवाँ व अन्तिम दिन था। देश व परदेश से आई हुई संगत को सम्बोधित करते हुए ट्रस्ट के वर्तमान मुखी बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा गुरु जी के आधारभूत सन्देशों के विचारों को प्रस्तुत करते हुए यह बतलाया गया कि आज भी मनुष्य जाति के अन्दर विश्व बन्धुत्व की भावना स्थापित करने के लिए तथा जन साधारण के कल्याणार्थ गुरु जी की शिक्षा अत्यन्त सार्थक है। नाम जपो, किरत करो, मिल बाँट कर ग्रहण करो और आत्मिक आनन्दानुभूति करो। सच्ची सुच्ची किरत करके अपने परिवार का पालन-पोषण करो तथा इस जीविकोपार्जन का कुछ भाग गरीब व जरूरतमन्द लोगों में, रंग-रूप व जाति-पात के भेदभाव से रहित होकर बाँटो। इसके साथ ही प्राप्त हुई रूहानियत को भी अपने संगी-साथियों में बाँटो। आप जी ने बताया कि गुरु जी की महान वाणी, सारी मानवता के लिए है और यह सबके लिए कल्याणकारी है। इसके द्वारा लोक और परलोक दोनों का ही कल्याण होता है। सारी वाणी रागों में है और इसका इलाही कीर्तन रूहानी आनन्द प्रदान करता है।

आज के अमृत वेले का दीवान प्रातः आसा दी वार के कीर्तन के साथ शुरू हुआ। यह कीर्तन बहिन चरनजीत कौर जी के जत्थे द्वारा किया गया तथा कीर्तन के उपरान्त शब्द की व्याख्या ट्रस्ट के मुखी बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा की गई।

इसके बाद दिन के दीवान की शुरूआत हुई जिसमें भाई प्रभजोत सिंह, बहिन परमजीत कौर-दिल्ली, भाई इन्द्रजीत सिंह - सोहाना, भाई मनिन्दर सिंह जी - हुजुरी रागी श्री दरबार साहिब, भाई रतन सिंह - यू.पी., बाबा गुरपाल सिंह - यू.पी., ज्ञानी साहिब सिंह - कनाडा, बाबा सुखवन्त सिंह - निरमले, डा. सरबजिन्दर सिंह पटियाला, सिंह साहिब ज्ञानी इकबाल सिंह, बाबा हरपाल सिंह जी रतवाड़ा साहिब तथा भाई जसविन्दर सिंह घोला जी ने कथा कीर्तन द्वारा संगत को गुरु शब्द के साथ जोड़ा। सन्त हरी सिंह जी रन्धावे वालों ने गुरु नानक साहिब द्वारा दर्शाए गए सिद्धान्तों की विचार की।

ट्रस्ट के वर्तमान मुखी बाबा लखबीर सिंह जी ने फुरमान किया कि आजकल के अशान्ति वाले वैश्विक वातावरण में केवल और केवल श्री गुरु नानक साहिब जी के सिद्धान्त ही मानवता को शान्ति देने में समर्थ हैं। इन सिद्धान्तों में इहलोक में जीवन जीने की कला भी है तथा परलोक का शाश्वत टिकाव भी है। आज के समय में मानवता के इसलिए बात की आवश्यकता है कि वह पारस्परिक भाईचारे को कायम रखने के लिए श्री गुरु नानक के सिद्धान्तों पर पहरा दे। संसार भर के धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक अलम्बरदार गुरु नानक साहिब द्वारा प्रदत्त सिद्धान्तों का पालन करें तथा जन साधारण को इनके साथ जोड़ने का प्रयत्न करें। यदि हमारे ये विशिष्ट लोग इस प्रकार का व्यवहार बना लें तो सारे संसार को बेगमपुरा बनने में तनिक सा भी समय नहीं लगेगा। फिर कोई भी बेगाना या अपना, छोटा या बड़ा अथवा ऊँचा व नीचा दिखाई नहीं देगा। फिर तो सभी बेगमपुरा के वासी बन जाएँगे जहाँ पर कि पारस्परिक प्यार, शान्ति व अपनेपन का अहसास होगा। समागम के दौर स्टेज की सेवा स. जसवन्त सिंह तथा स. गुरुदेव सिंह ने तथा अरदास की सेवा भाई सुखविन्दर सिंह जी ने बखूबी निभाई।

आज के समागम में स. रणजीत सिंह गिल, सारे पत्रकार बन्धु, स. हरभाग सिंह देसूमाजरा, स. मनजीत सिंह - यू.एस.ए., बहिन रूपी जी - यू.एस.ए., अरविन्दर पुरी जी - मुल्लापुर गरीबदास, स. जरनैल सिंह चाहल - भूतपूर्व ए.डी.जी.पी., भाई हरजीत सिंह जी हरमन, भाई रविन्दर सिंह - वजीदपुर व बाबा गुरुदेव सिंह - बनूड़ हाजिर थे।

आत्म मार्ग की मैंबरशिप, संगत ने उत्साहपूर्वक प्राप्त की।



गुरु नानक आगमन (श्री गुरु नानक चमत्कार)

पद्म भूषण डा. भाई वीर सिंह जी

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक नवम्बर, पृष्ठ - 40)

29. भाई रामदास

अब श्री सतगुरु जी आगे चल पड़े। पहले आप जी ने दक्षिण का रुख किया और आप जी कृष्णागंज जा निकले। कुछ दिनों तक आप जी सतिनाम का उपदेश करते हुए चलते-फिरते उत्तर-पूर्व की दिशा में श्री राजगंज पहुँच गए और यहाँ पर आपने टिकाना किया। कुछ दिन यहाँ पर ठहरने के बाद, चलते-फिरते एक ऐसी जगह पर आप जी जा पहुँचे जहाँ पर कि जल ही जल दिखाई पड़ रहा था और उसका कुछ भी ओर-छोर दिखाई नहीं पड़ रहा था। यहाँ पर आप जी वाहिगुरु जी के रंग में मग्न खड़े थे और मरदाना आप जी से पूछ पड़ताल कर रहा था। गुरु जी बोले, देखो भाई मरदाना! करतार के रंग देखो, वही सब कुछ कर रहा है। इसी बीच वहाँ पर एक बड़ी सारी नाव आ गई और मल्लाह कहने लगे कि हम लोग आप जी को लेने के लिए आए हैं। गुरु जी मुस्कराते हुए उस नाव में सवार हो गए। काफी समय बाद वह नाव जल के फैलाव को पार करके एक टिकाने पर जा पहुँची। जो साधू नाव में से आपको ले जाने के लिए आया था, वह आप जी को एक पहाड़ी पर ले गया, जहाँ पर जाकर सभी लोग एक गुफा के अन्दर प्रवेश कर गए जहाँ पर कि बहुत ही घनघोर अन्धकार था। मरदाना इस घने अन्धकार में चलते हुए घबराहट महसूस कर रहा था कि न जाने ये लोग हमें कहाँ पर लेकर जा रहे हैं। कुछ समय बाद अन्धकार समाप्त हो गया और एक खुली जगह आ गई, जहाँ पर कि कई साधुओं की धूनियाँ लगी हुई थीं। तपस्वी साधू लोग विभिन्न प्रकार के आसनों में बैठे हुए थे। सतगुरु जी को देखकर वे सभी लोगों ने उठकर गुरु जी का सम्मान किया और सबसे शिरोमणि साधू ने तो बहुत ही आदर सहित मत्था टेक कर आपका सम्मान किया। श्री गुरु जी ने भी आदर सहित उसे गले लगाया उसके बाद दोनों लोग बहुत ही प्यारपूर्वक बिराज गए। इस शिरोमणि तपस्वी साधू का नाम 'रामदास' लिखा हुआ है। गुरु जी कुछ दिनों तक यहीं पर टिके रहे। खाने-पीने के लिए यहाँ पर फल व कन्द मूल

मिलते थे जो कि बहुत ही स्वादिष्ट थे। यहाँ पर बाबा जी की कोई भी विचार-गोष्ठी को सुनने का अवसर मरदाना जी को प्राप्त नहीं हो सका क्योंकि रात होते ही श्री गुरु जी तथा रामदास जी वहाँ से भी और आगे किसी तपोभूमि पर चले जाते थे तथा ध्यान मग्न टिक जाते थे एवं सुबह होने पर ही अपने टिकाने पर वापिस आते थे। कई दिन एकान्त में रहने के बाद श्री गुरु जी वहाँ से भी प्रस्थान कर गए। मरदाना जी ने पूछा कि आप जी अब कहाँ पर जा रहे हो? गुरु जी ने उस समय फुरमाया -

सबदि रंगाए हुकमि सबाए ॥

सची दरगह महलि बुलाए ॥

अंग - 109

इस प्रकार से कुछ समय तक स्वयं को पूर्णतः एकान्त में रखने के बाद आप जी आगे चल पड़े और आप ढाका शहर पहुँच गए। यहाँ पर शहर से बाहर ही आप जी ने अपना टिकाना कर लिया। ब्रह्ममुहूर्त में तथा सायंकाल में नित्य-प्रतिदिन की भाँति दोनों समय कीर्तन का रंग उत्पन्न होने लग पड़ा। आस पास के लोग भी आने लगे तथा शनैः-शनैः श्रोतागण बढ़ने लग पड़े। एक दिन यह शब्द किसी अलौकिक स्वाद में गाया गया -

मनु कुंचरु काइआ उदिआनै।

श्रोतागणों में दो-चार सयाने पुरुष थे। उनके ऊपर गुरु जी के वचनों का ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे सतगुरु जी के चरणों पर गिर पड़े। सतगुरु जी ने नामदान देकर उन्हें सुख मार्ग पर डाल दिया। अब वहाँ के उस समय के कई नामी साधुओं तक भी ये चर्चाएँ पहुँची। दूर-नजदीक के सिद्धों व तपस्वियों के टिकानों तक भी ये खबरें पहुँच गई कि ऐसी ईश्वरीय ज्योति वाला पुरुष ढाका के बाहर आकर बैठा हुआ है जो कि मृतकों को जीवन दान देने वाला तथा सबको मानसिक ठंडक प्रदान करने वाला है। इन खबरों को सुनकर एक-एक करके उस प्रकार के सारे लोग आने लग पड़े। शहर के मेहनतकश लोग तथा परमात्मा के मार्ग पर चलने वाले विभिन्न लोग भी वहाँ पर आने लग पड़े। श्री बाबा जी के उपदेश तथा कीर्तन का ऐसा प्रभाव पड़ा कि सारे तपस्वी

तथा साधू लोग, बाबा जी के प्रेमी हो गए। सबसे अधिक जो गुरु का प्रेमी हुआ वह नथेशाह फकीर था, जिसने कि नामदान लेकर अपना कल्याण किया। इसके बाद आपके पास लूणिया नामक सिद्ध आया। यह हठयोगी था। सतगुरु जी ने इसे नाम सिमरन में लगाकर उसकी तपस्या को फलदाई कर दिया। इसी प्रकार से शेख अहमद फकीर को, जो कि चिले काट-काट कर थक चुका था और मन शान्त नहीं हो पा रहा था, नाम सिमरन की भक्ति में दृढ़ किया। इसके अतिरिक्त रेवादास, शामल नाथ, चन्दन नाथ, नैरणदास आदि की तपस्याओं को सुन-सुनकर उनके ठहराव को दूर करके वाहिगुरु जी के साथ जोड़ दिया। इन लोगों के नाम व टिकाने आज तक भी कायम बताए जाते हैं।

वास्तविक बात यह है कि साधू जन अपने साधनों में तपस्या के बल की श्रृंखला में कुछ ऐसे भ्रम में फँस जाते हैं कि वे तप को ही सिद्धि समझने लग जाते हैं। तप ने तो मन को विकारों से छुड़ा कर वैराग्य में लगाना था। वैसे तपस्या ने सिद्धि के द्वार पर कब पहुँचाना है। इस प्रकार से करामातों की प्राप्ति तथा अन्य कठिन साधनों में लगे रहते हैं जबकि कई साधक यहाँ से फिसल कर तान्त्रिक बन जाते हैं। कई लोगों को शारीरिक साधनाएँ करते-करते उनके शरीर में बहुत बल आ जाता है और वे उसी को इतिश्री समझ बैठते हैं यानि कि उनके मन में परमात्मा जी के साथ मिलने का व जुड़ने का ख्याल ही नहीं आ पाता है। इस प्रकार से जप-तप करने वालों तथा तपस्वियों को गुरु बाबा जी ने सद्मार्ग पर डाला तथा ढाका में सत्संग की नींव रखी।

इससे आगे चलते-चलते सतगुरु जी एक अन्य टिकाने की तरफ जा निकले जिसका जिक्र अगले प्रसंग में प्रस्तुत किया जाएगा।

30. नूरशाह निस्तारा

मनीवाद नानक मनु समझाईऔ

गुर कै सबदि सालाह ॥

अंग - 23

मरदाना अपने मन ही मन सोच रहा है कि मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि गुरु जी न जाने मुझे इस नगर में जाने से क्यों मना कर रहे थे। जब ढाका से चलने लगे थे तो मैंने कहा था कि यह जगह तो बहुत ही अच्छी है क्योंकि यहाँ पर समय पर भोजन प्राप्त हो जाता है, समय पर सोने को मिल जाता है, यानि कि यहाँ पर कोई भी परेशानी नहीं है, इसलिए यहाँ पर यदि कुछ दिन और ठहर जाते तो बहुत अच्छा होता। लेकिन गुरु जी कहते हैं कि नहीं, हमें बहुत

जरूरी कार्य है। एक भारी उपद्रव को समाप्त करना है इसलिए जल्दी प्रस्थान करना आवश्यक है। सारे शहर में सत्संग का प्रवाह शुरू हो गया था और अनेकों घनाढ्य लोग वाहिगुरु जी के प्रेमी बन गए थे, सारे आदर करते थे और गुरु बाबा जी को प्रस्थान की बात को सुनकर आँसू बहाने लगते थे लेकिन वहाँ से गुरु जी हठ करके उठ आए। अब यहाँ पर तीन दिन से उजाड़ में ही बैठे हैं, न कोई रोटी न पानी यहाँ पर मिल सका है। गुरु बाबा जी तो पूर्ण पुरुष हैं उन्हें तो भूख व प्यास का कुछ भी फर्क नहीं पड़ता है लेकिन मैं क्या करूँ? मुझे एक तो भूख के दुख ने दुखी कर रखा है और दूसरा मेरा स्वभाव घबराहट वाला है। यह ठीक है कि मैं उनका निकटवर्ती हूँ और उनकी कृपा का पात्र हूँ, मैं यह भी जानता हूँ कि वे परमात्मा की ज्योति हैं लेकिन फिर भी मेरे मन में शंकाएँ आ ही जाती हैं और भूख के कारण भी दुखी हो जाता हूँ। मैं गुरु जी की पूरी कद्र नहीं कर पाता हूँ और यदि करता भी हूँ तो बार-बार भूल जाता हूँ। उनके निकट रह कर भी शंकाग्रस्त हो जाना मेरे लिए सबसे बड़ा दुख है। पटना के अन्दर सालसराएँ का मिलाप करवा कर गुरु बाबा जी ने मुझे दिखला भी दिया था कि कद्र न करने के कारण, पहचान न करने के कारण, सही मूल्य न आँक कर, जगत किस प्रकार से दुखी हो रहा है। उस समय मैंने कसम भी खाई थी कि मैं आज के बाद शंका नहीं करूँगा और निरंकार की ज्योति समझ कर सदैव ही रजा में चलूँगा लेकिन अफसोस इस बात का है कि मेरा विश्वास ही बहुत कच्चा है और इसलिए वह बार-बार विचलित हो जाता है। अब तीन दिनों से चल रही भूख ने मेरी हालत खराब कर दी है। अतः मैं अब करूँ तो क्या करूँ? यदि मैं भूख प्यास पर विजय प्राप्त कर लूँ तो फिर तो हो सकता है कि मैं परमात्मा की रजा में चल पडूँ और कभी भी घबराहट में न आऊँ। आप जी ने फुरमाया -

मरदाना! मर जाना! याद करो कि तुमने कल कौन सा शब्द गाया था -

दादर तू कबहि न जानसि रे ॥

भखसि सिबालु बससि निरमल जल

अंम्रितु न लखसि रे ॥

अंग - 990

बस यह शब्द मेरे ऊपर ही लागू होता है मैं निर्मल जल में रहते हुए भी मेंढक की भांति रोटी-पानी व आराम मण्डल के पीछे ही पड़ा रहता हूँ जबकि मुझे तो पतंगे की भांति ज्योति में मिल जाना चाहिए था।

लेकिन मैं करूँ क्या? हे भगवान! तुम्हारी माया बहुत

ही शक्तिशाली है और फिर जिसका गला ही भूख-प्यास के कारण सूख जाए तो वह कीर्तन कैसे कर सकता है? नहीं, कुछ भी हो उसे तो पतंगे की भांति, शमा पर कुर्बान हो जाना चाहिए। वह आगे भी अपने मन से बातें करते हुए कहने लग पड़ा कि देखो! मरदाना! तुम्हारी माँ के पाँच पुत्र होकर मर गए, जब तुम पैदा हुए थे तो उसे आभास हुआ कि यह भी मर जाएगा। वैसे ही यह भी मुझे दुखी करने के लिए आया है और मोह का चिमटा लगाकर भाग जाएगा। यही कारण था कि उसने तुम्हारा नाम ही 'मरजाणा' रख दिया। यदि कोई उसे कहता कि हाय-हाय पुत्र का नाम क्या रखा है? भला चंगा पुत्र है और नाम किस प्रकार का रहा है? तब वह कहने लगती कि मेरे भाग्य में पुत्र नहीं है। ये सब तो मेरे घर छलावे आते हैं और अब तो मैंने इनके जीने की उम्मीद ही छोड़ रखी है और इसीलिए मैंने इसका नाम 'मरजाणा' ही रख दिया है ताकि यदि वह मर जाएगा तो मुझे तकलीफ कम होगी क्योंकि इसका मर जाना स्वाभाविक ही है। इसलिए मर गया तो मर गया, कोई बात नहीं। अतः इस प्रकार के अनावश्यक नाम वाले मर जाणे! जब तुम (गुरु) नानक के साथ खेले तथा गाए तो उस इलाही दाते ने तुम्हारा घृणा वाला नाम बदल कर मर्दों की मर्दानगी वाला 'मरदाना' रख दिया तथा मेरी माँ को कहा कि माता! तुम्हारे मरजाणे को हमने मर्दों वाला नाम 'मरदाना' प्रदान कर दिया है। यह अब तुम्हारे भाग्य से नहीं जाएगा बल्कि साधु संगत के भाग्य से जाएगा, जिन्होंने कि इसके द्वारा हरियश श्रवण करके जीना है, यह जाएगा और जीवदान देने का एक सुदृढ़ माध्यम बनेगा। अतः ऐ मरजाणे! जिसने तुम्हें मरे हुए को जीवित किया, जीवदान देकर जीवित किया, तुम उसके ऊपर क्यों नहीं मर मिटते हो और फिर जिसके बिना तुम क्षण भर भी रह नहीं पाते हो तथा जिसके अन्दर तुम निरंकार को देखते हो। तुम क्यों नहीं उनके शब्द पर शहीद हो जाते हो?

मेरा तो मानो कलेजा ही बाहर की तरफ आ रहा है। मैं किस दरवाजे पर जाकर अन्न माँगूँ? कोई परमात्मा की तरफ से ही भोजन के थाल आ जाते लेकिन अब तो मैं भोजन के लिए द्वार-द्वार पर भटक रहा हूँ, यह शहर भी अजीब किस्म का है। यहाँ तो केवल औरतें ही औरतें हैं। खेतों में, दुकानों पर, यानि कि प्रत्येक जगह पर औरतें ही औरतें घूर-घूर कर देखती रहती हैं। कोई भी कलमुँही मुँह से नहीं कहती है कि अरे भाई मुसाफिर! आ जाओ खाना खा लो। लगता है कि कोई मुझे नजर ही न लगा दे लेकिन मुझे नजर कैसे लग सकती है क्योंकि मेरे सिर पर तो नजरोँ पर भी कृपा करने वाला बैठा हुआ है।

यह बाजार भी खूब है। यहाँ पर तो मानो चहुँओर चुप्पी ही छाई हुई है। इधर यह मन्दिर भी अजीब प्रकार का है, इसके सारे ही दरवाजे बन्द हैं और बाहर की तरफ एक शेर की डरावनी मूर्ति लगा रखी है। पता नहीं यह सचमुच ही शेरों की जोड़ी खड़ी हुई है या फिर उनकी मूर्तियाँ ही हैं। घर को भी काला व नीला रंग मिलाकर न जाने किस तरह से डरावने रूप में किया हुआ है। उधर ऊपर की खिड़की में से किसी ने झाँककर आवाज लगाई है कि लो भैया! खाना! (वह वहीं पर खड़ा हो गया) लेकिन कोई भी कुछ बोला नहीं है और न ही किसी ने यह कहा है कि कुछ खा लो। चलो आगे चलते हैं लेकिन अब कदम आगे की तरफ नहीं बढ़ रहे हैं। न जाने यह क्या माजरा है। लगता है कि भूख की वजह से मेरे अन्दर तनिक सा भी बल शेष नहीं रह गया है। लेकिन बल तो मेरे अन्दर है फिर भी कदम आगे क्यों नहीं बढ़ रहे हैं?

मरदाना स्वयं से ही वार्तालाप करता हुआ बोला मरदाना! तगड़े होओ! तुम्हें गुरु बाबा जी ने कहा था कि थोड़ी देर अभी और रुको, अभी शहर की तरफ मत जाओ लेकिन मैंने हठ किया और गुरु बाबा जी की बात को नहीं माना। फिर बाबा जी ने वचन किया था कि सम्भल कर जाना, स्वयं को सम्भाल कर रखना और जलाल में रहना। तुम कोमल हो, सूक्ष्म गुणों की कारीगर हो, चित्त में ऐसी कोमलता रखते हो कि जिसके कारण हृदय पर चोट खा बैठते हो। यदि चले हो तो जलाल में रहना। अब मैं जलाल में क्या रहूँ? मेरे तो कदम भी आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं? यहाँ जलाल क्या करेगा? (अपने कलेजे को मुक्का मारते हुए) हाय मेरा पेट! मैंने अपने दाता जी के ऊपर शक किया। क्या भूखा भी जलाल में रह सकता है? अवश्य रह सकता है, वचन-शक्ति के आश्रय से। तभी तो गुरु नानक ने कहा था जलाल में रहना। यदि भूखा व्यक्ति जलाल में रह सकने में सक्षम न होता तो गुरु जी क्यों कहते? और फिर प्रत्यक्ष बात यह है कि गुरु स्वयं भी तो भूखा रहकर जलाल में रहता है। सत्य बात है। गुरु सच्चा है और मैं कच्चा हूँ।

भयभीत करने वाले आश्चर्य

कची कंध कचा विचि राजु॥

मति अलूणी फिका साद॥

इतने में एक भयभीत करने वाले घर का दरवाजा खुला लेकिन दरवाजा खोलने वाला कोई भी दिखाई नहीं पड़ा। मरदाने ने अन्दर की तरफ झाँक कर देखा वहाँ पर एक

ड्योढ़ी है और उसके आगे सूना आंगन है। इसके बाद ऐसे दिखाई पड़ा जैसे कि एक चादर बिछी हुई है और उसके ऊपर पुलाव पड़ा है जिसमें से भाप उठ रही है, फलस्वरूप भीनी-भीनी केसर व संतरे की सी सुगन्ध आ रही है। अब वह (मरदाना) खाने की सुगन्ध से प्रभावित होकर जल्दी से अन्दर दाखिल हुआ लेकिन अन्दर प्रवेश करते ही दरवाजा बन्द हो गया। अब वहाँ पर भी कोई व्यक्ति दिखाई नहीं पड़ा कि दरवाजा किसने बन्द किया है। इस बात को समझने के बाद भी मरदाना पुलाव की सुगन्ध का खिंचा हुआ और आगे बढ़ा लेकिन वहाँ पर पुलाव तो था ही नहीं वहाँ पर तो केवल एक आँगन था जिसके एक तरफ दीवार में एक खूँटी लगी हुई थी तथा खूँटी में किसी मनुष्य का अस्थिपिंजर लटका हुआ था। एक बार तो इस दृश्य को देखकर मरदाना पूरी तरह से घबरा गया लेकिन दूसरे ही क्षण वाहिगुरु कहते हुए उसने स्वयं को सम्भाला। अभी उसने स्वयं को सम्भाला ही था कि उसकी निगाह आंगन के आगे दलान (लॉबी की तरह का एक खूब बड़ा सा बरामदा) पर पड़ी जिसके बीचो बीच में दो खम्भे लगे हुए थे। उन दोनों खम्भों के साथ शेर के बच्चे बँधे हुए थे और ये दोनों बच्चे घर पर आए आंगतुक को बहुत ही घूर-घूर कर देख रहे थे। अब मरदाने के अन्दर पुनः भय की लहर दौड़ पड़ी लेकिन भयग्रस्त होती जा रही बुद्धि ने दृष्टि को अतिशीघ्रता और तीव्रता से यह देखने की तरफ लगाया कि ये शेर के बच्चे बँधे हुए हैं, अथवा वे खुले ही हैं। भाग्यवश वे बच्चे बँधे हुए थे, फलस्वरूप मन में कुछ हौंसला बढ़ा लेकिन फिर भी कदम आगे न बढ़कर वहीं पर रुक गए। दूसरी तरफ जहाँ पर मरदाना खड़ा होकर यह सब कुछ गौरपूर्ण देखने व समझने की कोशिश कर रहा था वहीं पर उसने देखा कि उसके पैरों के बीच से ही दो फनधारी साँप सरर-सरर करते हुए अन्दर की तरफ जा रहे हैं। अब मरदाना इस प्रकार की मानसिक स्थिति में पहुँच गया कि अब न तो वह होश में है और न ही बेहोशी में है। अब न तो वह उन साँपों से स्वयं को बचाने के लिए आगे की तरफ यानि कि शेरों की तरफ ही बढ़ रहा है और न ही शेर किसी अन्य तरह हट रहे हैं। अतः उसे न तो अब आगे बढ़ने में ही सलामती प्रतीत हो रही है और न ही पीछे हटने में ही सलामती लग रही है। इस स्थिति में मरदाना जी के सिर को एक चक्कर सा आया और घबराहट में उसके नेत्र बन्द हो गए। कुछ क्षणों बाद जब उसके नेत्र खुले तो साँप वहाँ से गुजर चुके थे तथा शेर के बच्चे भी कहीं पर लुप्त हो चुके थे। अब उसने क्या देखा कि एक संगमरमर की चौकी उसके आगे रखी हुई है और उसके ऊपर चावलों का पुलाव एक

थाली में रखा हुआ है जिसमें से बहुत ही उम्दा सुगन्ध आ रही है। एक पतली व खूबसूरती सुन्दरी आई और चुपचाप एक पानी का गिलास वहाँ पर रख गई। एक अन्य सुन्दरी आई, उसने मरदाना जी के पीछे, एक चौकी, उसे बैठने के लिए रख दी। एक अन्य सुन्दरी आई वह चम्मच रख गई, एक और आई, वह दूध का गिलास रख गई। न कोई सुन्दरी कुछ बोली और न किसी ने कोई इशारा किया। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि 'सिंहासन बतीसी' की पुतलियाँ अपना-अपना कार्य करके गई हों। तृप्ति -

बाबा होरु खाणा खुसी खुआर॥

मरदाने ने अब गौरपूर्ण ढंग से देखा कि दरवाजा तो अब बन्द है, दीवार पर लगी हुई खूँटी पर से अस्थिपिंजर भी गायब है बल्कि उसकी जगह पर पर्दे की भांति एक चद्दर लटक रही है दूसरी तरफ दलान की दिशा में भी कुछ नजर नहीं आ रहा है। कुल मिलाकर अब किसी भी प्रकार की भयावह वस्तु का दृश्य दिखाई नहीं पड़ रहा था। अब भूख, जो कि भयावह स्थितियों के कारण लुप्त हो गई थी, चावलों के पुलाव की खुशबू के कारण पुनः अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई। मरदाना जी अब चौकी पर बैठ गए और धन्य गुरु नानक कहकर खूब डटकर भोजन ग्रहण किया। कई प्रकार के पकवान उसके सामने आए और उसने खूब खाए साथ ही साथ मरदाना यह भी सोच रहा है कि अजीब है यह शहर! न यहाँ कोई बोलता है और न ही कोई किसी को कोई कुछ कहता है। या खुदा! खैर ही रखना! ऐसा तो नहीं कि यह कोई जादू है या फिर मैं कोई सपना देख रहा हूँ? यह सब वास्तविक स्थितियाँ हैं या फिर मैं किसी भ्रम की स्थिति में हूँ? दूसरी तरफ उसने सोचा कि यह वास्तविकता ही है क्योंकि मैं भोजन ग्रहण कर रहा हूँ, फलस्वरूप मेरा पेट भर रहा है और भूख दूर हो रही है। सपनों और टोने टोटकों के द्वारा पेट तो नहीं भरा सकता है न?

मरदाने ने पेट भर कर खाया और अब नींद भी आ रही थी लेकिन मरदाने को वापिस लौटने का भी ख्याल आया। उसने नजर उठाकर पीछे की तरफ देखा और वह वापिस चल पड़ा। जिस ड्योढ़ी में से आप अन्दर आए थे, वहाँ पर एक चारपाई बिछी पड़ी है चारपाई पर सफेद चद्दर बिछी हुई है। उसके ऊपर आप बैठ गए बैठने के बाद लेट गए और उसके बाद आप सो गए।

'चलता'



भाई नन्द लाल जी गजलें

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक सितम्बर, पृष्ठ - 54)

मा ब-यादि हक हमेशाँ जिंदा-एम
दाइम अज इहसानि उ शरमिंदा-एम।

हम परमात्मा की याद में सदा जीवित रहते हैं क्योंकि हम सदा ही उसके एहसानों के कारण शर्मिन्दा हैं।

मा ब-यादि हक हमेशाँ जिंदा-एम
दाइम अज इहसानि उ शरमिंदा-एम।

अपना निजत्व दिखा देने वाले को, भजन-बन्दगी स्वीकार्य नहीं होती है, वह परमात्मा तो सदैव मालिक है और हम उसके बन्दे हैं।

दर वजूदि खाकीआँ पाकी अजोसत
मा खुदाइ पाक रा बीनिंदा-एम।

मिट्टी के पुतलों के अन्दर उसी की पवित्रता है, हमने तो पाक परवदिगार को देख लिया है।

मा बपाइ शाह सर अफगंदा-एम
अज दो आलम दसत रा अफशाँदा-एम।

हमने तो उस बादशाह के चरणों पर अपना सिर रख दिया है और दोनों जहाँ यानि कि लोक व परलोक को सफल कर लिया है।

नीसत दर हर चशम गैर अज नूरि उ
सुहबति मरदानि हक जोइंदा-एम।

जबसे हमने उसका पल्ला पकड़ा है, हम तो उसके चरणों की धूल का एक कण बन गए हैं।

कीसत गया जाकरि नामि खुदा
हमचू खुरशीदि जहाँ रखशंदा एम।

गोया कौन है परमात्मा का नाम लेने वाला हम तो संसार के सूर्य की भांति चमक गए हैं।

मा बंदाइ इशकेम खुदा रा ना-शानासेम
दुशनाम न दानेम दुआ रा न शनासेम।

हम तो प्यार के बन्दे हैं, इसलिए हम परमात्मा को भी कुछ नहीं समझते हैं। न तो हम दुआओं को जानते हैं और न ही बददुआओं को जानते हैं।

आशुफताइ आनेम कि अशुफताइ मा हसत
मा साह न दानेम ओ गदा रा न शलासेम।

हम तो उस प्यारे के दीवाने हैं जो कि हमारा मतवाला है न तो हम बादशाह को जानते हैं और न ही फकीर को जानते हैं।

चूँ गैरि तू कस नीसत बतहिकीक दरीजा
ई तफ्रकाइ मा ओ शुमा रा न-शनासेम।

सच्ची बात तो यह है कि तुम्हारे बिना यहाँ पर अन्य कोई है ही नहीं, इसलिए हमें तो 'मेरी' और 'तेरी' का अन्तर समझ में आता ही नहीं है।

सर पा शुद पा सर शुदा दर राहि मुहबत
गोइम व लेकन सरो पा रा न-शनासेम।

प्रेम के मार्ग पर सिर, पैर बन गया है और पैर, सिर बन गए हैं, जबकि हम तो पैर और सिर दोनों को ही नहीं पहचानते हैं।

मा नीज चू गोया जि अजल मसत ईसतम
ई काइदाइ जुहदो रिआ रा ना शनासेम।

गोया की भांति हम भी शुरू के दिन से ही मस्त हैं और भजन-बन्दगी तथा पाखण्ड के उसूलों के बारे में हमें कुछ भी पता नहीं है।

हरगाह नजर बजानिबि दिलदार मी कुनेम
दरिआइ हर दो चशम गुहर-बार मी कुनेम।

जब भी हम अपने प्यारे की तरफ निगाह उठाकर देखते हैं तो मोतियों की वर्षा करने वाली दोनों आँखों के दरिया बहा देते हैं।

हर जा कि दीदाएम रुखि यार दीदाएम
मा कै नजर बजानिबि अगयार मी कुनेम।

जहाँ पर भी हमने देखा है, हमने अपने साजन का मुखड़ा ही देखा है, हम कब पराए लोगों की तरफ देखने वाले हैं?

जाहिद मरा जि दीदानि खूबाँ मनआ मकुन
मा खुद नजर बसूइ रुखि यार मी कुनेम।

हे भजन करने वाले महात्मा! मुझे सुन्दर लोगों को देखने से मत रोको क्योंकि हम तो अपनी नजर साजन के मुखड़े की तरफ लगाकर बैठे हुए हैं।

मा जुज हदीसि रुइ तू कूते ना खुरदाएम
दर रहि इशक ई हमा तकरार मी कुनेम।

हमने तो तुम्हारे मुखड़े के अतिरिक्त अन्य कोई खुराक नहीं खाई है और प्रेम के मार्ग पर, इसी को बार-बार दोहराते रहते हैं।

गोया जि चशमि यार कि मखमूर गशताएम
कै खाहशि शराबि पुर असरार मी कुनेम।

हम तो प्यारे की दृष्टि पाकर ही मस्त हो गए हैं तो फिर भला हम क्यों किसी रहस्य भरी शराब की कोई इच्छा रखें।

रुबाईआँ

हर कस जि शौकि तू कदम अज सर साखत,
बर नहु तबक आलम सर अफराखत,
शुद आमदनश मुबारिक रफतन हम,
गोया आँ कस कि राहि हक ना बिशनाखत।

तुम्हारे शौक के कारण प्रत्येक सिर के बल चला और उसने नौवें आसमान पर अपना झंडा गाड़ दिया है। उसका आना भी मुबारिक है और उसका जाना भी मुबारिक है, जिसने परमात्मा के मार्ग को पहचान लिया है।

कूर असत हर आँ दीदा कि हक रा न-शनाखत,
ई उमरि गिराँ माया ब-गफलत दरबाखत,
उ गिरीआँ कुनाँ आमद ब-हसरत मुरद,
अफसोस दरि आमद शुद कारे न साखत॥

प्रत्येक वह आँख जिसने परमात्मा को पहचाना नहीं है, वह मानो अन्धी है और उसने इस कीमती आयु को लापरवाही में ही गंवा दिया है। वह रोता हुआ आया और इच्छाओं के चक्रव्यूह में ही फँसकर मर गया है। अफसोस! उसने इस आने और जाने में अपना कुछ भी संवारा नहीं है।

ई चशमि तू खाना दारि जानानसत,
ई तखति वजूदि मसनदि सुलतानसत,
हर बूअलहवसे बसूइ उ राह न बुरद,
कि ई राह तअलकि मंजलि मरदानसत॥

यह तुम्हारी आँख प्यारे सज्जन के घर है, यह हस्ती का तख्त सच्चे पातशाह का सिंहासन है।

जो व्यक्ति इच्छाओं और वासनाओं में फँसा हुआ है,

वह परमात्मा तक नहीं पहुँच सकता है क्योंकि यह मार्ग तो परमात्मा के शूरवीर भक्तों का है।

हर दिल कि बराहि रासत जानाँ शुदा असत,
तहिकीक बिदाँ कि औनि जानाँ शुदा असत,
यक जूरा जि फैजि रहिमतश खाली नीसत,
नूकाश दरुनि नकश पिनहाँ शुदा असत।

प्रत्येक वह दिल जो कि सीधा ही प्रियतम बन गया है, यकीन जानो कि वह पूर्णतः प्रियतम का ही रूप बन गया है। एक कण भी उसकी कृपा से खाली नहीं है। चित्रकार अपने चित्रों के रंगों में ही छिपा हुआ है।

ई आमदो रफत जुज दमे बेश न बूद,
हर जा कि नजर कुनेम जुज खेश नबूद,
मा जानबि गैर चूं निगाह बिकुनेम,
चूं गर तू हीच कस पसो पेश नबूद।

यह आना व जाना एक श्वास भर से अधिक नहीं होता है। हम जहाँ पर भी अपनी निगाह दौड़ाते हैं, सिवाए अपने वहाँ पर अन्य कोई नहीं होता है। हम किसी दूसरे की तरफ निगाह भी उठाकर कैसे देख सकते हैं, क्योंकि तुम्हारे बिना हमारे आगे-पीछे कोई भी नहीं होता है।

दर दहिर कि मरदानि खुदा आमदा अंद,
बर गुम-शुदगानि रहिनुमा आमदा अंद,
गोया अगर ई चशमि तू मुशताकि खुदा असत,
मरदानि खुदा खुदा-नुमा आमदा अंद।

संसार के अन्दर जब परमात्मा के भक्त आते हैं वे भूले-भटकों को सही मार्ग दिखाने के लिए आते हैं। गोया! यदि तुम्हारी यह आँख परमात्मा की लालसा वाली हो तो समझ लो कि परमात्मा के भक्त, परमात्मा को दिखाने के लिए आते हैं।

दर मजहबि मा गैर-परसती न कुन्द,
सर ता बकदम बहोश ओ मसती न कुन्द।
गाफिल नशवंद यक दम अज यादि खुदा,
दीगर सुखन अज बुलंदो पसती न कुन्द।

हमारे धर्म में गैरों की पूजा नहीं करते हैं, वे एक होश में रहते हैं तथा कभी मदहोश नहीं होते हैं। वे क्षण भर के लिए भी परमात्मा को भूलते नहीं हैं, साथ ही वे ऊंच व नीच की कोई बात भी नहीं करते हैं।

‘चलता’



गुरवाणी अर्थ भण्डार

सन्त हरी सिंह जी 'रन्धावे वाले'

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक अक्टूबर, पृष्ठ - 55)

सिरीरागु महला 3
किरपा करे गुरु पाईअै
हरि नामो देइ दिड़ाइ॥

यदि परमात्मा कृपा करे तो गुरु = सतगुरु को पाईअै = प्राप्त कर लिया जाता है भावार्थ गुरु की प्राप्ति होती है और सतगुरु जी कृपा करके हमें हरिनामो = प्रभु के नाम को दिड़ाइ = दृढ़ करवा देते हैं।

बिनु गुर किनै न पाइओ
बिरथा जनमु गवाइ॥

गुरु के बिना कोई भी प्रभु जी को प्राप्त नहीं कर सका है तथा जीव अन्य कर्मों में लगे हुए अपने जन्म को व्यर्थ में गंवा रहे हैं।

मनमुख करम कमावणे दरगह मिलै सजाइ॥

मनमुख लोग जो नित्य, नमिक्त, प्रायश्चित तथा निषिद्ध कर्म भी राजसी, सांतकी तथा तामसी स्वभाव में ही कमावणे = करते हैं, तो इन कर्मों की हंगता के कारण ही दरगह में सजाइ = सजा मिलै = मिलती है।

मन रे दूजा भाउ चुकाइ॥

हे मन! तुम अपने अन्दर से द्वैतभाव को चुकाइ = समाप्त कर दो।

अंतरि तेरे हरि वसै गुर सेवा सुखु पाइ॥ रहाउ॥

तुम्हारे अन्दर ही प्रभु निवास कर रहा है जिसे तुम गुरु की सेवा द्वारा प्राप्त करो, आत्मिक सुख प्राप्त करो।

सचु बाणी सचु सबदु है; जा सचि धरे पिआरु॥

गुरु की वाणी सच्ची है तथा गुरु का सबदु = उपदेश भी सच्चा है। यदि सत्य के साथ प्यार को धरे = धारण किया जाए तभी यह दात प्राप्त की जा सकती है।

हरि का नामु मनि वसै हउमै कोधु निवारि॥

जब परमात्मा का नाम मन में बस जाए तो गुरु की

कृपा द्वारा हउमै = अहंभाव तथा क्रोध की निवारि = निवृत्ति कर ली जाती है।

मनि निरमल नामु धिआईअै
ता पाए मोख दुआरु॥2॥

जब नाम का सिमरन करने से मन निरमल = शुद्ध हो जाता है तो फिर मोख दुआरु = मुक्ति का द्वार भावार्थ ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है।

हउमै विचि जगु बिनसदा मरि जंमै आवै जाइ॥

हउमै = अहंभाव में यह जगु = संसार बिनसदा = नष्ट होता रहता है। माया व वासनाओं का बँधा हुआ यह जीव बार-बार जंमै = जन्म लेता रहता है तथा मरि = मरता रहता है भावार्थ वह संसार में आता जाता रहता है।

मनमुख सबदु न जाणनी; जासनि पति गवाइ॥

मनमुख = मन की ही बात मानने वाले साक्त पुरुष सतगुरु जी के सबदु = उपदेश को जाणनी = जानते ही नहीं हैं। वे अपनी पति इज्जत को गवाइ = गंवा कर दुनिया से जासनि = चले जाते हैं।

गुर सेवा नाउ पाईअै सचे रहै समाइ॥3॥

हे भाई! सबदि = गुरु उपदेश को मनिअै = मान कर ही सतगुरु को प्राप्त किया जाता है। जब शब्द द्वारा अन्दर से आपु = अपने अहंभाव को समाप्त कर डालें अथवा जब शब्द द्वारा अपने अहंभाव को गंवा कर गुरु-उपदेश का पालन कर लिया जाता है तो ही सतगुरु जी की पूरी प्रसन्नता को प्राप्त किया जाता है।

अन दिनु भगति करे सदा साचे की लिव लाइ॥

हे भाई! अपने अहंभाव को समाप्त करने के लिए हमें नित्य प्रतिदिन या दिन-रात ही उस प्रभु जी की भक्ति करनी चाहिए। सच्चे प्रभु जी में अपने वृत्ति को जोड़कर ही हमें भक्ति करनी चाहिए तो ही अविद्या रूपी रात समाप्त होकर ब्रह्मज्ञान रूपी दिन का उदय हो पाता है।

नाम पदारथु मनि वसिआ नानक सहजि समाइ॥4॥19॥52॥

हे भाई! जिन भाग्यशाली लोगों के मनों में प्रभु जी का नाम रूपी पदारथ बस गया है। सतगुरु जी फुरमान करते हैं कि वे गुरुमुख सहजि = सहज स्वभाव ही ब्रह्म स्वरूप में समाइ = समा जाते हैं अथवा वे सहजि = सन्तोष अथवा धैर्य अथवा शान्ति सहित प्रभु जी के अन्दर समा जाते हैं।

सिरीरागु महला 3॥

जिनी पुरखी सतगुरु न सेविओ

हे भाई! जिन पुरुषों ने सच्चे सतगुरु जी की सेविओ = सेवा नहीं की, से = वे चार युगों (सत्युग, त्रेता, द्वापर, कल्युग) में भी दुखी रहते हैं अर्थात् वे हमेशा दुखी ही रहते हैं अथवा वे चारों खाणियों (अंडज, जेरज, सेतज, उत्भुज) अथवा वे चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र) अथवा चारों अवस्थाओं (उत्तम, मध्यम, कनिष्ठ व अधम) में भी भावार्थ वे जहाँ भी होते हैं, दुखी ही रहते हैं।

घरि होदा पुरखु न पछाणिआ अभिमानि मुठे अहंकारि॥

जो उस घर में होदा = बसते हुए पुरखु = सतगुरु जी को पहचान नहीं सके बल्कि द्वेष में ही मारे-मारे फिरते रहे अथवा घर में रहते हुए ही यदि दातू व दासू जी श्री गुरु अंगद देव जी को पहचान नहीं सके अथवा अन्तःकरण रूपी घर में समाए हुए पुरखु = प्रभु जी को पहचान नहीं सके क्योंकि आप अपने जप, तप, हठ व साधनों का अहंकार करते रहे बल्कि अभिमानि = अहंकार द्वारा ही ये अहंकारी मुठे = ठगे गए भावार्थ किसी ने गुरु को नहीं पहचाना जैसे कि मरवाहों ने अहंकारवश पहचाना नहीं था।

सतगुरु किआ फिटकिआ मंगि थके संसारि॥

जो सतगुरु जी से फिटके हुए हैं, भावार्थ जो बेमुख हैं, वे संसार में मांगते-मांगते थक गए फिर भी उन्हें कोई आश्रय प्राप्त नहीं हो सका।

सचा सद्दु न सेविओ सभि काज सवारणहारु॥1॥

उन्होंने सतगुरु जी के सच्चे सबदु = उपदेश का पालन नहीं किया, जो गुरुशब्द मुक्ति व पदारथ आदि सभि = सारे ही काज = कार्यों को सवारणहारु = संवारने वाला है।

मन मेरे सदा हरि वेखु हदूरि॥

हे मेरे मन! तुम सदैव ही उस हरि = प्रभु जी को हदूरि = हाजिर-नाजर वेख = देखो।

जनम मरन दुखु परहरै सबदि रहिआ भरपूरि॥1॥रहाउ॥

जो सबदि = ब्रह्म सारे संसार में भरपूरि = परिपूर्ण हो रहा है अथवा व्याप्त है, यदि तुम उसके ऊपर निश्चय कर लोगे तो फिर तुम्हारे जन्म-मरण का दुखु = कष्ट परहरै = दूर हो जाएगा।

सचु सलाहनि से सचे सचा नामु अधारु॥

हे भाई! जो सचु = सच्चे प्रभु जी के नाम का सलाहनि = गुणगान करते हैं वे सच्चे पुरुष हैं क्योंकि सच्चा नाम ही उनके मन का अधारु = आसरा है।

सची कार कमावणी सचे नालि पिआरु॥

वे सच्ची भाउ = भक्ति रूपी कार करते हैं, उनका सच्चे प्रभु जी के साथ ही पिआरु = स्नेह है।

सचा साहु वरतदा कोइ न मेटणहारु॥

सचा साहु = वह सच्चा शाहूकार रूपी सतगुरु सारे संसार में नाम का दाता होकर वरतदा = व्याप्त हो रहा है। उसके = द्वारा दी गई दात को कोई भी भेटणहारु = नष्ट करने वाला नहीं है।

मनमुख महलु न पाइनी कूड़ि मुठे कूड़िआरु॥2॥

मनमुख पुरुष वाहिगुरु जी के महलु = स्वरूप को नहीं पा सकते हैं क्योंकि वे कूड़िआरु = झूठे पुरुष, कूड़ि = झूठे पदारथों के मोह में ही मुठे ठगे जाते हैं अथवा झूठ बोलने या कूड़ि = झूठे विषय-विकारों में लूट लिए जाते हैं।

हउमै करता जगु मुआ गुरु बिनु घोर अंधारु॥

सारा जगु = संसारु हउमै = मैं-मैं करता हुआ मुआ = मर रहा है क्योंकि सतगुरु के ज्ञान के बिना घोर = भयानक अज्ञानता का अंधार = अन्धकार है।

माइआ मोहि विसारिआ सुखदाता दातारु॥

हे बन्धु! जो सुखों का दाता दातारु = प्रभु है, उसे जन साधारण ने माया के मोह में पड़कर पूरी तरह से विसारिआ = भुला दिया है।

सतगुरु सेविहि ता उबरहि सचु रखहि उर धारि॥

जिन्होंने सतगुरु की सेवा की है ता = वे माया के मोह अथवा यमदूतों की मार से उबचहि = बच गए हैं, उन्होंने सचु

= परमात्मा के नाम को हृदय में धारण करके रखा हुआ है।

**किरपा ते हरि पाईअै
सचि सबदि वीचारि॥3॥**

सचि = सच्चे सबदि = उपदेश द्वारा सत्य व असत्य का वीचारि = निर्णय करके सतगुरु जी की कृपा के द्वारा ही हरि = परमात्मा को पाईअै = प्राप्त किया जाता है।

सतगुरु सेवि मनु निरमला हउमै तजि विकार॥

जिन्होंने सतगुरु की सेवा की है उनका मन निरमला = उज्वल या शुद्ध हुआ है तथा उन्होंने हउमै = देह हंगता और कामादिक विकारों का तजि = त्याग कर दिया है।

आपु छोडि जीवत मरै गुरु कै सबदि वीचार॥

वे अपने अहंभाव अथवा देह अध्यास को छोड़कर भावार्थ जीवित ही मरणातुल्य हो गए हैं क्योंकि उन्होंने गुरु साहिब के सबदि = उपदेश की विचार की है।

धंधा धावत रहि गए लागा साचि पिआरु॥

हे बन्धु! जिनका प्यार सचि = सच्चे प्रभु में लग गया है, उनका मन धंधा धावत = सांसारिक धन्धों में दौड़ने से रुक गया है भावार्थ वे योनियों के चक्रव्यूह से बाहर आ गए हैं।

सचि रते मुख उजले तितु साचै दरबारि॥4॥

फिर वे सचि = सच्चे प्रभु जी के नाम-रंग में रते = रंगे हुए, यश रूपी उजले = उज्वल मुख सहित तितु = उस सच्चखण्ड रूपी साचै = सच्चे दरबार में प्रवेश कर जाते हैं।

**सतगुरु पुरखु न मनिओ
सबदि न लगो पिआरु॥**

हे बन्धु! जिन मनमुखों ने पुरखु = पूर्ण सतगुरु के उपदेश को माना ही नहीं है तथा न ही उनका गुरु-शब्द के साथ प्यार ही लगो = लगा है।

**इसनानु दानु जेता करि
दूजै भाइ खुआरु॥**

वे चाहे जितना भी तीर्थादिक पर स्नान करके दान आदि कर्म भी कर लें फिर भी वे दूजै भाइ = द्वैत भावना के कारण खुआरु = ख्वार होते ही हैं भावार्थ वे वासनाग्रस्त होने के कारण आवागमन में पड़कर द्वैत रूप में किए गए कर्मों के फल को भोगते फिरते हैं।

हरि जीउ आपणी कृपा करे

ता लागै नाम पिआरु॥

हे भाई! जब हरि जीउ = प्रभु जी अपनी कृपा दृष्टि कर दे तो फिर नाम के साथ पिआरु = स्नेह लग ही जाता है।

**नानक नामु समालि तू
गुरु कै हेति अपारि॥5॥20॥53॥**

सतगुरु जी फुरमान करते हैं कि हे भाई तुम भी उस प्रभु जी का नाम सिमरन करो। नाम सिमरन करना किस प्रकार है? नाम सिमरन गुरु के साथ प्यार करके करना है अर्थात् सतगुरु जी के साथ खूब प्यार करके प्रभु जी के नाम का सिमरन करो ताकि तुम्हारा यह मनुष्य जन्म सफल हो सके।

‘चलता’



(पृष्ठ 37 का शेष)

मानवता के लिए साझा ही है और गुरु कभी कहीं जाता नहीं है, वह तो हमेशा हमारे अंग-संग है। गुरुवाणी जो कि युगों-युगों तक अटल है, सदैव हमारा मार्गदर्शन करने के लिए हमारे पास विद्यमान है -

बाणी प्रभ की सभु को बोलै ॥

आपि अडोलु न कबहू डोलै ॥

अंग - 294

विडम्बना यह है कि हम इस बहुमूल्य गुरुवाणी को अपने प्रयोग में ही नहीं लाते हैं। हम तो इसे पूर्णरूपेण भूल ही चुके हैं। सारे सन्तजन व वेद शास्त्र चीख-चीख कर यह बतला रहे हैं कि नाम के बिना यहाँ सब कुछ असत्य ही है-

सिम्रिति बेद पुराण पुकारनि पोथीआ ॥

नाम बिना सभि कूडू गाली होछीआ ॥ अंग - 761

आज इस गुरुपर्व के सुअवसर पर आप सबको कोटि-कोटि मुबारकबाद। जिस प्रकार से वैद्य ने गुरु जी के उपदेश को धारण कर लिया, फलस्वरूप स्वयं भी सुखी हुआ और आम लोगों का भी सुख प्राप्ति के लिए मार्ग दर्शन किया, उसी प्रकार से हम सबको भी इस दिशा में निरन्तर आगे बढ़ना चाहिए।

वाहिगुरु जी का खालसा, वाहिगुरु जी की फतहि।

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार (Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल', एम. ए., एम. फिल.

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक अक्टूबर, पृष्ठ - 54)
भक्ति व सिमरन में मैडिटेशन के अभ्यास का आरम्भ

एकाग्र (meditation) होने की विधि, अन्तर्ध्यान होने की प्रक्रिया है जिसे शुरू करके आप जीवन प्रकाश के श्रोत तक पहुँचते हो। वास्तव में यही चेतना का केन्द्र है, चेतना का बिन्दु है और यहीं से चेतना पृथक-पृथक मात्रा में व पृथक-पृथक अवस्थाओं में सारे शरीर में जाती है। दरअसल मनुष्य दो देशों का वासी है, एक है अन्दर का संसार और दूसरा है बाहर का संसार। इन दोनों देशों को जोड़ने के लिए एक सेतु (पुल) की आवश्यकता है और जिसके लिए प्रयत्नों की नितान्त आवश्यकता है। यह बिल्कुल सम्भव है कि हम इस संसार में रहते हुए, इसमें न भीगें लेकिन ऐसा करने के लिए तुम्हें मैडिटेशन की आवश्यकता पड़ती है। हमारी आज की शिक्षा पद्धति हमें यह करना नहीं सिखाती है और इसीलिए इसे अभ्यास के द्वारा ही सीखा जा सकता है। आज के समय में न तो हमें कोई भी पद्धति शान्त होने की कला सिखाती है और न ही हमारे पास शान्त होने के लिए कोई समय ही है। मैडिटेशन करने के लिए शान्त होना आति आवश्यक है और शान्त होने के बाद ही हमारे अन्दर सत्य प्रकट हो सकता है। वास्तव में मैडिटेशन उस सत्य को जानने का एक मात्र मार्ग है जो कि हम सबके अन्दर विद्यमान है। मैडिटेशन बहुत छोटी सी तकनीक है जिसे कि कुछ ही मिनटों में सीखा जा सकता है लेकिन यह एक बहुत ही प्रायोगिक विषय है। मैडिटेशन के अनेकानेक लाभ हैं।

चेतनता की उत्तम अवस्था तक पहुँचने की बहुत सारी सीढ़ियाँ हैं। जो भी कोई व्यक्ति उत्तम अवस्था को प्राप्त करना चाहता है अथवा इच्छा रखता है वह कुछ ही महीनों के अभ्यास के द्वारा उस अवस्था को प्राप्त कर सकता है। मैडिटेशन का सबसे पहला लाभ है मानसिक दबाव से, बोझ

से, खींचतान से मुक्त होना। दूसरा लाभ है - मन की स्पष्टता। तीसरा है - अपने अन्तर का ज्ञान होना। इसके बाद ही मनुष्य अपने आप में स्थिरता की अवस्था में आ जाता है और यही है आनन्द की, कृपा की, मैडिटेशन की, स्थिरता की या शान्ति की अवस्था। इस अभ्यास को जारी रखने से ही साधक तुरियावस्था तक पहुँच पाता है।

इन समस्त लाभों को प्राप्त करने के लिए यह समझना भी नितान्त आवश्यक है कि समस्त ज्ञान हमारे अन्दर ही है, बस जरूरत है अभ्यास करने की। अभ्यास के द्वारा ही परिपक्वता आती है। अभ्यास के बिना अनुभव प्राप्त नहीं हो सकता है और बिना अनुभव के तुम्हारा मार्गदर्शन नहीं हो सकता है। वास्तव में तुम्हारा अनुभव ही तुम्हारा मार्गदर्शक होना चाहिए। इसके लिए स्वयं को अनुशासन में लाने की बहुत जरूरत है। अनुशासन का तात्पर्य यह नहीं है कि कोई दूसरा तुम्हारे ऊपर कानूनों को थोपे बल्कि स्वयं अपने आप को अनुशासन में रखना ही अत्युत्तम होता है। अमेरिकन लोगों का जीवन बहुत ही खुशहाल व अमीर है लेकिन वे लोग अनुशासन को नहीं जानते हैं वे तो सोचते हैं कि उन्हें कुछ भी करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। अनुशासन को तो वे लोग अपनी आजादी में बाधक समझते हैं। यहाँ पर माता-पिता अपने बच्चों को अनुशासन में नहीं लाते हैं क्योंकि वे स्वयं ही अनुशासन में नहीं रहते हैं। वे अपने बच्चों के लिए कोई नमूना ही प्रस्तुत नहीं करते हैं। वे अपने घर में भी किसी प्रकार की कोई शिक्षा नहीं देते हैं। इसका सीधा तात्पर्य यह है कि बच्चों को जो भी शिक्षा मिलती है वह स्कूलों, कालेजों व विश्वविद्यालयों से ही मिलती है और वह शिक्षा पर्याप्त नहीं है।

आज सारे संसार के अन्दर जो भी शिक्षा दी जाती है, वह केवल समाचारों या सूचनाओं को एकत्र करने की तरह से ही है। आजकल, लोग कुछ भी समझते नहीं हैं बल्कि वे सूचनाओं को केवल संग्रह ही करते हैं कि उन्हें क्या करना

है और क्या नहीं करना है। उन्हें यह कोई भी नहीं बताता है कि उन्होंने जीवन को जीना कैसे है। वास्तविक शिक्षा वही होती है जब मनुष्य स्वयं ही स्वयं को शिक्षा देता है। तुम जो कुछ भी सीखते हो वह पूरी तरह से कसौटी पर परख कर ही सीखना चाहिए। जो कुछ तुमने ढंग से सीखा ही नहीं है उसका प्रयोग तुम कैसे कर सकते हो? मनुष्य के अन्दर बहुत सारी सम्भावनाएँ छिपी होती हैं। वह बहुत कुछ कर सकता है। इतिहास बताता है कि मनुष्यों ने किस प्रकार से सामूहिक वर्ग का मार्ग दर्शन किया है और किस प्रकार से अपने आप की बलि दी है तथा किस प्रकार से मनुष्य स्वार्थहीन हो सकता है। अनुशासन मनुष्य को निःस्वार्थ होना सिखाता है।

अन्दर का तरीका - जब तक मनुष्य छोटा रहकर जीता है भावार्थ वह छोटी बुद्धि और छोटे दिल वाला रहता है और अपने शरीर में ही उलझा रहता है तब तक वह कभी भी जीवन के आनन्द को अनुभव नहीं कर सकता है क्योंकि वह तो स्वार्थी है यानि कि वह जो कुछ भी करता है अपने स्वार्थ के लिए ही करता है जबकि आनन्द तो तभी आता है जब तुम दूसरों के लिए त्याग करते हो अर्थात् जब तुम यह कहते हो कि मुझे यह नहीं चाहिए, मुझे इसकी जरूरत नहीं है, तुम इसका प्रयोग करो। किसी भी रिश्ते के लिए निःस्वार्थ होना बहुत आवश्यक है। आज के समाज में इसीलिए रिश्ते टूटते जा रहे हैं क्योंकि आज प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी हो चुका है। आज का व्यक्ति सत्य को समझ ही नहीं पा रहा है। दरअसल मैडिटेशन के द्वारा ही चेतना का विस्तार किया जा सकता है।

बहुत सारे लोग आज जहाँ पर भी हैं वे उससे सन्तुष्ट नहीं हैं, वे अभी किसी कमी को पूरा करने के लिए कुछ तलाश कर रहे हैं लेकिन वे तलाश करने से डरते भी हैं। यदि डरते नहीं हैं तो कम से कम उन्हें इस बात का ज्ञान ही नहीं है कि तलाश करनी कैसे है। तलाश अपने अन्दर करनी है या बाहर करनी है। लोगों की आदत है कि वे बाहर की तरफ ही तलाश करते हैं क्योंकि उन्हें अन्तर्मुखी होना तो सिखाया गया है, फैसला या निर्णय किस प्रकार से लेना है यह तो उन्हें सिखाया ही नहीं गया है। अपना निर्णय लेकर उस पर काम किस प्रकार से करना है, यह बात तो उन्हें बताई ही नहीं गई है। वास्तव में सारे मनुष्यों को अपने अन्दर और बाहर के बारे में भली प्रकार से पता होना चाहिए। निःशंक रूप से हमारे समाज की शिक्षा पद्धति में संसार को समझने के बारे में अनेकानेक तरीके सिखाए जाते हैं लेकिन स्वयं को देखने के बारे में तो उन्हें कुछ भी नहीं बताया जाता

है।

मैडिटेशन तुम्हें यह बताती है कि तुमने अपने अन्दर किस प्रकार से जाना है। इस तरीके में कोई भी रहस्यात्मक बात नहीं है बल्कि यह तो एक प्रायोगिक व नियमबद्ध तकनीक है जिसके द्वारा तुम शान्ति व ज्ञान प्राप्त कर सकते हो। यदि तुम्हें संसार की समस्त चीजों के बारे में ज्ञान तो है लेकिन तुम्हें अपने अन्दर के गुणों का ज्ञान नहीं है तो फिर तुम जीवनानन्द को प्राप्त नहीं कर सकते हो, जीवन मनोरथ को पूरा नहीं कर सकते हो। सर्वोत्तम आनन्दावस्था है - शान्ति जो कि मैडिटेशन करके ही प्राप्त की जा सकती है। बहुत बार जिज्ञासुजन उतावले हो जाते हैं और वे कुछ दिनों में ही उत्तम अवस्था को प्राप्त कर लेना चाहते हैं, वे इस बात को भूल जाते हैं कि आन्तरिक मार्ग बहुत लम्बा हुआ करता है, यह सांसारिक शिक्षा से पृथक मार्ग है। वास्तव में यह पहले से सीखे हुए को भूलने का कार्यक्रम है। बिना किसी गति के तुम्हें आगे बढ़ना होता है और स्थिर रह कर तुमने अपने लक्ष्य तक पहुँचना है।

मैडिटेशन, मजहब नहीं - मैडिटेशन तुम्हें अपने आप को पहचानने के बारे में बतलाती है और तुम्हें सारे स्तरों के बारे में भिन्न करवाती है तथा उत्तम चेतना तक लेकर जाती है। सबसे प्राथमिक शिक्षा मैडिटेशन है, स्थिर होना है, तुम्हें यह समझना है कि मैं ही परमात्मा हूँ। बाइबिल का भी यही केन्द्र बिन्दु है और यही उसकी धुरी है। मैडिटेशन किसी भी संस्कृति व महजब में बाधा नहीं डालती है। मैडिटेशन को किसी भी मजहब, संस्कार या धार्मिक रीति के साथ जोड़ना नहीं चाहिए। ऐसा करने से तुम्हारे अन्दर द्वन्द्व उत्पन्न होता है, तुम्हारी आदतों में संघर्ष पैदा होता है। इसके साथ ही संस्कृति के साथ और मजहब के रीति रिवाजों के साथ भी संघर्ष उत्पन्न होता है। यदि कोई शिक्षक, मैडिटेशन को किसी मजहब विशेष के साथ जोड़ता है, किसी रीति विशेष के साथ जोड़ता है, तो उससे मत सीखो।

मैडिटेशन का शब्द बहुत सारे मजहबों में प्रयुक्त हुआ है लेकिन उसके वास्तविक अर्थों को समझा ही नहीं गया है। संसार के पृथक-पृथक मजहब, लोगों को यह बताते हैं कि यह करो और यह मत करो। वे पृथक-पृथक प्रकार के कोड प्रदान करते हैं लेकिन जिस प्रश्न के बारे में सारे चुप हैं वह है कि मैडिटेशन किस प्रकार से करना है और आत्म-साक्षात्कार किस प्रकार से करना है।

‘चलता’



रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

(12.00 बजे से 3.30 बजे तक)

पूर्णमाशी - 12 दिसम्बर, दिन वीरवार, रतवाड़ा साहिब

(शाम 07.00 बजे से रात 10.00 बजे तक)

पौष, संक्रान्ति - 16 दिसम्बर, दिन सोमवार।

(प्रातः 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में होता है।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (<https://instagram.com/ratwara.sahib/>)

You Tube : <https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh>

Facebook : <https://www.facebook.com/ratwarasahib1>

Twitter : <https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13>

Live Audio Link 1 - [https://www.awdio.com/Ratwara Sahib](https://www.awdio.com/Ratwara%20Sahib)

Live Audio Link 2 - <https://mixlr.com/ratwara-sahib>

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magazine

S/B A/C No. 12861000000003

RTGS/IFSC Code - PSIB0021286

Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust

SB A/C No. 12861100000005

RTGS/IFSC Code - PSIB0021286

Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust

Punjab National Bank

SB A/C No. 0779000100179603

RTGS/IFSC Code - PUNB0077900

Branch Code - 077900

यदि बैंक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901 पर भेजने की कृपा करें। यदि Online राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर SMS भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृपया अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक बैंक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAZINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form



नई सदस्यता

 पुनर्नवीनीकरण

 आजीवन सदस्यता

within India

Annual

Life

| Subscription Period | By Ordinary Post/Cheque | By Registered Post/Cheque | U.S.A. | 60 US\$ | 600 US\$ |
|---------------------|-------------------------|---------------------------|-----------|-----------|------------|
| 1 Year | Rs. 300/320 | | U.K. | 40 £ | 400 \$ |
| 3 Year | Rs. 750/770 | | Europ | 50 Euro | 500 Euro |
| 5 Year | Rs. 1200/1220 | | Australia | 80 Aus \$ | 800 Aus \$ |
| Life | Rs 3000/3020 | | | | |

जनवरी



फरवरी



मार्च



अप्रैल



मई



जून



जुलाई



अगस्त



सितम्बर



अक्टूबर



नवम्बर



दिसम्बर



नाम/Name पता/Address.....

.....

.....Pin Code..... Phone E-mail :.....

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

| डा. का नाम | विशेषज्ञ | दिन |
|--------------------------|--|--------------------|
| 1. डा. जसबीर कौर | जनरल मैडिसन | सोमवार |
| 2. डा. गुरिंदर कौर कंग | एम. डी. (गाइनी) | सोमवार |
| 3. डा. कुलदीप सिंह कंग | एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ) | सोमवार |
| 4. डा. हरबंस सिंह | अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन | मंगलवार |
| 5. डा. तेजिंदर सिंह | जनरल मैडिसन | मंगलवार |
| 6. श्री माइकल जी | एक्स-रे विशेषज्ञ | मंगलवार तथा वीरवार |
| 7. डा. जे. एस. गुजराल | जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ | मंगलवार तथा वीरवार |
| 8. डा. आर. एस. संधू | अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन | वीरवार |
| 9. डा. संतोष अनेजा | जनरल मैडिसन | वीरवार |
| 10. डा. एस. के. बांसल | जनरल मैडिसन | शुक्रवार |
| 11. डा. बरिन्दर सिंह | जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन | शुक्रवार |
| 12. डा. जिंदल | जनरल मैडिसन | रविवार |
| 13. डा. गुरप्रीत कौर गिल | होम्योपैथिक | बुद्धवार |
| 14. डा. कुलदीप कौर | दाँतों के विशेषज्ञ | मंगलवार |

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4. किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

विश्व गुरुमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरु ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

| हिन्दी | | English Version | Price |
|------------------------------------|-------|---|-----------|
| 1. सुरति शब्द मार्ग | 70/- | 1. Baisakhi | Rs. 5/- |
| 2. किव कुड़ै तुटै पालि | 35/- | 2. How Rend The Veil of Untruth | Rs. 70/- |
| 3. बात अगम की - सात भागों में | 400/- | C. Discourses on the Beyond -1 | Rs 50/- |
| 4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला | 35/- | 4. Discourses on the Beyond -2 | Rs. 50/- |
| 5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा | 65/- | 5. Discourses on the Beyond -3 | Rs. 50/- |
| 6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा | 100/- | 6. Discourses on the Beyond -4 | Rs. 60/- |
| 7. होवै आनन्द घणा | 30/- | 7. Discourses on the Beyond -5 | Rs. 60/- |
| 8. बाबाणियाँ कहानियाँ | 50/- | 8. The way to the imperceptible | Rs. 80/- |
| 9. सुरतिआं उपजै चाउ | 40/- | 9. The Lights Immortal | Rs. 20/- |
| 10. सर्व प्रिय गुरु गोबिंद सिंह जी | 10/- | 10. Transcendental Bliss | Rs. 70/- |
| 11. भक्त प्रहलाद | 10/- | 11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1) | Rs. 80/- |
| 12. अमृत फुहार | 10/- | 12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2) | Rs. 80/- |
| 13. अगम अगोचर का मार्ग | 70/- | 13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3) | Rs. 110/- |
| 14. जपुजी साहिब सटीक | 15/- | 14. The Dawn of Khalsa Ideals | Rs. 10/- |
| 15. अमर ज्योतियाँ | 15/- | 15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji | Rs. 5/- |
| 16. अमर गाथा | 100/- | 16. Divine Word Contemplation Path | Rs. 150/- |
| 17. वैशाखी | 10/- | 17. The Story of Immortality | Rs. 260/- |
| 18. साजन चले प्यारिआ | 10/- | 18. Why not Contemplate the Lord | Rs. 200/- |
| 19. अविनाशी ज्योति - भाग 1 | 90/- | | |
| 20. रूहानी गुलदस्ता | 70/- | | |
| 21. चउथै पहरि सबाह कै | 60/- | | |

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमा करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magazine, S/B A/C No. 1286100000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

The Martyrdom of Sahibzadas

Ajit Singh Jujhar Singh

The Birth of Khalsa - On Baisakhi Day in 1699 Guru Gobind Singh Ji, the tenth Guru, initiated the Sikh community into the new order - the Khalsa - at Anandpur Sahib, the city of Divine Bliss.

A vast congregation of devotees had come from far and near. As the Asa di Var Kirtan concluded, Guru Gobind Singh went aside on a specially raised platform and unsheathed his sword and said in a thundering voice, "Is any one ready to sacrifice his head to protect his faith?". There was a stunned silence for sometime. The Guru repeated his challenge. One Daya Ram, a Khatri from Lahore stood up and offered his head. The Guru took him aside inside a tent. He returned after some time and again asked for another head. A Jat of Delhi, Dharam Das, got up. The third brave Sikh was a cook from Puri, Himmat Rai. A washerman Mohkam Chand from Saurashtra and a barber, Sahib Chand from Andhra also volunteered themselves. Guru Gobind Singh later returned with all those five devotees, dressed in new blue dresses. They were presented to the congregation by the Guru who called them 'My Five Beloveds'.

The Guru baptised them all in one common utensil and wiped out the distinction of caste and creed amongst them. They were named as Bhai Daya Singh, Bhai Dharam Singh, Bhai Himmat Singh, Bhai Mohkam Singh and Bhai Sahib Singh. Thereafter the Guru himself expressed the desire to be baptised by these Five Beloveds. Therefore, we call Guru Gobind Singh, *Ape*

Gur Chela, Master and disciple, all in one.

The tradition of baptism blazed a new trail. The Guru's young sons and thousands of devotees were baptised. Each one of them adopted the five emblems of a true Sikh - Kes (hair), Kirpan (sword), Kara (steel bracelet), Kachha (underwear), Kirpan (word). The five K's remind each Sikh that he belongs to God (Waheguru) who is the Protector. Now named by their Guru as Singh (lion), he will fear none and fight tyranny and injustice with all his might.

The two sons of Guru Gobind Singh, Sahibzada Ajit Singh and Sahibzada Jujhar Singh, were also initiated into holy order. Every evening they would gather their friends and form two battalions. They would fight mock battles with swords and arrows. Guru Gobind Singh occasionally watched with pride his sons at such military exercises. The moghul officials looked upon the setting up of the Khalsa Panth by Guru Gobind Singh with disfavour. The Sikhs addressed him as "Sache Patshah" - the True Lord. How could the Moghul Emperor Aurangzeb tolerate that in his kingdom any one else should have the right to this title? He thought that he was the supreme ruler. He commanded his generals to put a check on the ever-increasing following of Guru Gobind Singh.

Anandpur Sahib attacked - Under the orders of Aurangzeb Nawab Dilawar Khan and his son Rustam Khan were specially chosen for a massive attack on Anandpur Fort. Rustam Khan chose a winter night in November

1695 for an all-out attack when there would be less water flowing into the river so that his soldiers could go across to the fort easily.

He thought the tired Sikh soldiers would be fast asleep. The Guru's alert Pathan guard, Alam heard the footsteps of the galloping horses. In a few moments the Sikhs soldiers were in position. The arrows started flying all over. As the arrows and bullets hit the Moghul soldiers standing in the river water, they cried in anguish "Save us, O God!" and fled.

This was the first battle of Anandpur. Three other wars followed between 1700-1714 A.D. They used all the strategy to dislodge them from Anandpur. All their efforts, however, proved fruitless. The Moghul forces lost many of their Generals.

Bhai Bachitter Singh encounters drunk elephant - Once they sent a drunk elephant to force open the door of the Anandpur Fort. Guru Gobind Singh blessed Bhai Bachitter Singh, son of Bhai Mani Singh. With his *Nagni* he hit the elephant with a forceful shot. The wounded elephant ran amuck trampling scores of Moghuls under his feet, before he died writhing in pain.

The final battle of Anandpur Sahib - The fiercest battle of Anandpur Sahib was fought in 1704 which continued for a month. The Moghul armies had a trying time in the heat of summer followed by monsoon. They wanted to wriggle out of the war without losing face. They sent two emissaries - a *Maulvi* and a *Brahmin*, who swore by the Koran and the Geeta that if the Guru agreed to leave the fort, he would be allowed to go unharmed. The Guru knew this was a ruse. He decided to put their word to a trial. He got a few cart loaded with rags, bones and skeletons and had the material covered with silk and velvet cloth.

No sooner had these cart loads travelled a short distance from the fort, there was a sudden attack by the Moghul soldiers. They were, however, dumb-founded to see the contents. The Guru had scored over them. After a few days, the Moghuls apologized and sent to the Guru a copy of their holy book, the Koran signed by Aurangzeb, alongwith his letter, promising a safe exit, if the Guru left the fort. Guru Ji's Sikhs pleaded with him to accept Aurangzeb's assurances. On their repeated request, Guru Gobind Singh Ji agreed to leave the fort, just after midnight.

Guru Gobind Singh leaves Anandpur Sahib - On the 20th December, 1704, when the winter was at its peak, Guru Gobind Singh departed from Anandpur Fort along with Mata Gujri, his four sons and the five beloveds. The other Sikh soldiers followed in small bands. As they all reached the bank of the Sirsa river, they had their usual morning prayer and *Asa di Var* at dawn. Thereafter they crossed the river.

Gurur Ji's younger sons get separated - The two younger sons of the Guru, Sahibzada Zorawar Singh and Sahibzada Fateh Singh, got separated from their father on the banks of river Sirsa. In the company of Guruji's revered old mother mata Gujri Ji, they walked across hilly roads, for an unknown destination. Their grand mother related to them stories and episodes of Guru Nanak and other Sikh Gurus. They recited their holy psalms. They were feeling quite brave and fearless. Guruji's old domestic servant Gangu came to know that the younger Sahibzadas were seen going, along with their grand mother. He followed them and soon overtook them. He requested Mata Gujri Ji to go with him, to his village Khera, which

was near about. He assured them that they would be quite safe there and the Moghul authorities would never be able to locate them. Mata Ji agreed to do so and proceeded, along with Gangu, to his village Khera.

When the Moghul soldiers woke up in the morning they discovered that Guru Gobind Singh and his companions had left. They roused their companions from their sleep and rushed after them on horses. The Guru had already crossed Sirsa river. Some of his companions were still on the river bank. As the Moghul soldiers pounced upon them, a fierce battle started. In the darkness the Moghuls could not distinguish between friends and foes and killed some of their own men in utter confusion. The valiant Sikhs stemmed the tide of the advancing Moghul forces. They gave them a stiff fight.

Supreme sacrifice of Bhai Ude Singh & Bhai Jiwan Singh - Bhai Ude Singh held the Moghuls at bay single-handed. Scores of them were beheaded by the fearless warrior before he became a martyr on the battlefield.

Sahibzada Ajit Singh was about to cross the river when the Moghuls closed in on him. Bhai Jiwan Singh came to his rescue on his charger. He rushed at the Moghuls with his spear. Under the impact of his fierce onslaught the Moghul soldiers ran helter skelter. Baba Ajit Singh shipped his horse, swiftly crossed the river with a lightning speed and was soon beyond their reach. Bhai Jiwan Singh checked the onward march of the Moghuls for quite some time. A number of them fell down dead as his spear pierced their chests. They were no match for his fighting spirit. He displayed a unique spirit of matchless bravado, in spite of the heavy odds against him. Ultimately, however, he also joined the company of the illustrious

martyr Bhai Ude Singh.

A memorial stands to this day as a tribute to the valiant deeds of the brave Sikh army and to the martyrdom of Bhai Ude Singh and Bhai Jiwan Singh. Devotees come in large numbers to pay their homage to their sacred memory at this place.

The Moghuls lost the battle and returned to their camp completely exhausted. Guru Gobind Singh had been watching from a distance the valour and the fighting spirit displayed by his brave Sikhs.

Brick Klin at Ropar cools down - After crossing Sirsa river, Guru Gobind Singh, along with Sahibzada Jujhar Singh and a few Sikhs, proceeded further. Sahibzada Ajit Singh also joined them after some time. They headed towards the town of Ropar. The residents hesitated to offer them any place. They pointed towards a nearby brick kiln. Guru Ji and his soldiers rode to the kiln. When Guru Ji's horse stepped on the burning hot brick kiln, at once it cooled down. The workers got worried. They lifted one of the bricks to examine. They were taken aback. The brick was quite firm and fully made. They fell at Guru Ji's feet and prayed for his blessings. A beautiful Gurdwara 'Bhatha Sahib' stands on this spot as a monument to the miraculous act of Guru Gobind Singh's horse.

Guru Ji at Ropar - Guru Gobind Singh Ji, Sahibzada Ajit Singh and Sahibjada Jujhar Singh, along with forty brave Sikhs, arrived near Ropar by the evening. They set up their camp in an open and vast uncultivated piece of land. The Sikh soldiers put up tents in no time. The place looked like a small army cantonment. A Pathan of Kotla Nihang Singh, who was a great devotee of the Guru, took up the duty of the guard at the Camp. This

well-built stalwart Pathan looked a real imposing figure.

Guru Ji at Chamkaur di Garhi - After the day's ferocious and exhausting engagements with the Moghul forces, the brave Sikh soldiers fell asleep for a restful night after they had said their evening prayers. The next morning Chaudhri Budhi Chand, a zamindar of the town, who was a dedicated devotee of Guru Gobind Singh rushed to the camp and appeared before Guru Ji, paid his respects and very humbly requested Guru Ji to shift his forces to his house which was build like a fortress. This would provide them with adequate defence against the onslaught of Moghul armies who were in pursuit of Guru Ji. Guru Ji was pleased to hear Chaudhri Budhi Chand's proposal and directed his soldiers to shift their camp to Chaudhri Budhi Chand's fortress, called Chamkaur di Garhi. The arms and weapons, as also the other equipment, was loaded on the horses. It was transported to the fortress very quickly. Everything was arranged at the proper place. Under the direct command of their Lord and Master Guru Gobind Singh, they were ready for the battlefield.

Nawab Wazir Khan attacks Chamkaur - On hearing of the Guru's presence in Chamkaur, Nawab Wazir Khan led an army of ten lakh soldiers to Chamkaur. He had it announced with a drum beat that if the Guru surrendered along with his companions, his life will be spared. Guru Gobind Singh responded by flinging arrows upon arrows on the Moghul forces which hit quite a few of them and wounded them. None of them dared step forward.

General Nahar Khan & Ghani Khan killed - General Nahar Khan put up a ladder along one of the walls of the fortress and tried to step up. As he raised his head, Guru Ji

aimed at him with his arrow and killed him on the spot. The soldiers were terrified at this horrible sight and tried to run away from the battlefield. General Ghani Khan came forward. Guru Ji flung his gurj at him. His head was crushed with the fierce shot. He fell headlong and died instantaneously.

The battle scene - Sitting inside the fortress at a strategic point Guru Ji was watching the entire scene of the grim battle. He went up the top of the fort and took Sahibzada Ajit Singh Ji and Sahibzada Jujhar Singh Ji along with him. Selected Sikh soldiers were posted on duty in all the four directions near each pillar. Bhai Madan Singh and Bhai Ganda Singh were put on guard duty at the entrance of the fortress.

Complete preparations were thus made for facing the major onslaught of the adversary. The Sikh soldiers took change of their arms -arrows, spears, lances and swords. Both Sahibzadas also got ready for the battle.

Though their numbers were much smaller as compared to the large contingent of the Moghul army, the morale of the Sikh soldiers was very high. The very presence of Guru Gobind Singh in their midst infused a spirit of invincible courage. With Waheguru's support they were ready to face the enemy with determination and courage.

Standing calm and fully composed Guru Ji was carefully planning the strategy of the ensuing battle.

The historic battle of Chamkaur - The historic battle of Chamkaur took place on 22nd December, 1704. On one side were the Great Guru's forty brave soldiers whose supplier of food and water were cut off but they were still possessed of unlimited courage. They were facing an all-out

offensive from ten lakh Moghuls who were armed to the teeth. When the Moghuls launched their attack, Guru Gobind Singh started sending contingents of five Sikh soldiers one after the other, who shouted "Sat Sri Akal" at the top of their voices as they jumped into the battlefield.

The battle started in full force on both the sides. The Moghul and Sikh soldiers attacked each other with all strength at their command. Simultaneously arrows were aimed at the Moghuls from above the fortress in large numbers followed by gun fire. The fierce battle went on for over two hours. Swords and shields clanged against each other. Arrows were flying all over. Hundreds of Moghul soldiers lay dead on the battlefield. Blood streams were flowing and had covered the entire ground outside the fortress.

The first batch of five Sikh soldiers slaughtered hundreds of Moghuls before sacrificing their lives. The second and third batch followed in quick succession. They displayed similar feats of marvellous courage against heavy odds.

Sahibzada Ajit Singh enters the battlefield - Nawab Wazir Khan of Sirhind ordered his army to surround the fortress from all directions. Observing that the situation was getting serious, the remaining Sikhs pleaded with Guru Ji to leave the fortress along with his sons. As if the Guru had not heard their entreaties, he drew their attention to the volley of arrows being shot from both the sides and the way the soldiers were interlocked in the grim struggle. When the Sikhs repeated their request, to save the lives of the young Sahibzadas, Guru Ji asked them, "Which sons are you referring to? All of you are my dear sons." They were greatly

moved by the affection shown by Guru Ji and resolved to stand by their Lord and Master to the last. In a few moments Sahibzada Ajit Singh came close to his father and sought his permission to go to the battlefield. Guru Ji gave him his blessings and sent a batch of eight Sikh warriors with him.

As the 19 year old Sahibzada Ajit Singh and his companions came out of the gate of the Chamkaur fortress, their clarion call, "Sat Sri Akal" resounded all over the battlefield. The Moghul soldiers surrounded the young Sahibzada from all sides. The brave son, however, held them at bay and aimed a barrage of arrows at them. Shouting "Ya, Allah, O my God!" they beat a hasty retreat.

Other Moghuls jumped into the fray. Sahibzada Ajit Singh and his companions faced them bravely and courageously but they ran out of their stock of arrows. They started wielding the swords. Riding on a horse the Sahibzada rushed into the midst of the Moghul soldiers challenging them with his swords. One of the Moghul soldiers aimed at the Sahibzada with his lance. The Sahibzada warded off the attack but his horse was hurt seriously. Finding him alone, the Moghul soldiers closed in on him. As they pounced upon him all at once, the Sahibzada became a martyr on the battlefield.

Guru Gobind Singh was watching closely from the top of the fortress the brave fight that his valiant son had put up against his adversaries. As he sacrificed his life, Guru Ji shouted, "Sat Sri Akal" from inside the fortress and bowed his head to the Almighty in thankfulness.

Sahibzada Jujhar Singh enters the battlefield - On seeing his elder brother's brave sacrifice

on the battlefield, the younger brother, Sahibzada Jujhar Singh, just 15 years of age, came forward and beseeched his father to let him follow in the footsteps of his brother. The Guru blessed him too and sent five Sikhs with him. Sahibzada Jujhar Singh dashed out of the gate and challenged the Moghuls with the slogan "Sat Sri Akal", which reverberated all over. The Moghul soldiers were amazed, that Guru Gobind Singh had offered his second son also for sacrifice. The Moghuls advanced in full force. The Sahibzada and the five Sikhs resisted with all their might. As the sun set, Sahibzada Jujhar Singh also attained martyrdom, Guru Gobind Singh again thanked God that he had repaid the debt.

The four letters of Guru Gobind Singh Ji - Thereafter Guru Gobind Singh attached four letters to the arrows and aimed them at the Moghul Generals. The first arrow struck at the belt of Khwaja Mahmud Ali. The Guru wrote to him, "You have lost your honour both in the world and in your religion by taking an oath and then going back on it." The second arrow hit wazir Khan's horse. "He who swears and then does not abide by it, will be thrown in the burning fire in hell", wrote Guru Ji to him. The third arrow pierced the turban of Zabardast Khan, the Nawab of Lahore. "He who swears by the Holy Koran and then betrays will be burnt in the fire of hell. The time is not far off when our brave Singhs will create havoc for you and your kingdom", warned the Guru. In this letter attached to the fourth arrow which hit Ajmer Chand on his leg, the Guru said, "You will never have peace in life. God Almighty is our Protector and saviour."

The final address of Guru Ji at Chamkaur Di Garhi - Guru Gobind Singh then addressed his devotees in the fortress. "There is no

other course left to us but to fight the enemy bravely. Each drop of blood shed by us will lay firm foundations for our community. Streams of blood of the Moghuls will flow like river as your comrades wreak vengeance on them in due course. For his protection a devoted Sikh has full faith in God Almighty, his Guru, the Sadh Sangat (Sikh congregation) and in himself. This conviction sustains him through thick and thin in all situations. We have to struggle and strive, accept the challenge and face the enemy, and never back out. We have to stick to our faith ever at the cost of our lives." The Ten Sikhs who were left in Chamkaur Sahib fortress requested the Guru that in view of the critical situation, he should leave the fort. They chose five beloved (Panj Piaras) and passed a resolution that the Guru should leave the fortress the same night. The Guru and the disciple, all in one, bowed before their decision. He laid down one condition that while departing from the fortress, he will challenge the enemy and not escape stealthily.

Guru Gobind Singh decided to take some of his companions with him. He dressed Bhai Sangat Singh, whose face bore some resemblance to Guru Gobind Singh Ji, in his own dress, put on the plume to his turban and seated him on the top of the roof where he had been sitting before. Just after midnight Guru Gobind Singh got on the roof of the fortress, blew his trumpet and came out of the gate. Standing on a mound outside, he shouted thrice : "The Guru has escaped!" As these words echoed in the quiet dark night, some of the Moghul soldiers were awakened suddenly. They rushed after the Guru post haste. The torch bearer led them in the darkness. Guru Gobind Singh aimed his arrow, the torch was put out and fell

down. Unable to find their way further, the Moghul soldier returned crest - fallen. Guru Gobind Singh had travelled a long distance by day break.

The final fight - The seven Sikhs who were left in the fortress were determined to sacrifice their lives. As the day broke, the Moghul soldiers launched an all-out attack. The brave Sikhs flung open the gate and rushed forward to face the enemy with their swords unsheathed. They shouted Sat Sri Akal and engaged the enemy in a grim final struggle. Innumerable Moghuls were slaughtered by them before they became martyrs in the historic war of Chamkaur. One of the seven Sikhs, who laid down their lives at Chamkaur, resembled Guru Gobind Singh and had a plum attached to his turban. The Moghuls thought that Guru Gobind Singh was also among the seven killed that morning. They conveyed the news to their Generals. But they were mistaken.

Guru Gobind Singh at Machhiwara - Guru Gobind Singh had reached the ravine of Machhiwara after travelling on foot the whole night through wild jungles. It was in the forest of Machhiwara that he composed his well-known hymn -

Go tell the Beloved Lord, The condition of his yearning disciples; Without Thee, rich coverings are an agony to us; And to live in the comforts of our households is like living with snakes. Our water pots have become like pikes on which men are impaled. The cup we drink from has an edge like a dagger! Beloved, Thy turning away from us is like what a beast endures from the slaughters! With the Beloved, a mattress of straw would pleasure us; Without Him, in rich houses, we are burned alive!

His devoted Sikhs, Bhai Dharam Singh

and Bhai Man Singh, traced the Guru and reached his resort in Machhiwara. His attendant Gulaba also arrived. The two loyal pathans, Nabi Khan and Ghani Khan, who used to buy good quality horses for the Guru, also came there. In Machhiwara Guru Ji got the news that his younger sons, Sahibzada Zorawar Singh and Sahibzada Fateh Singh, had been bricked alive under the orders of Nawab Sirhind. Upto their last breath, they stuck to their faith and no inducement could shake their determination. The news of Mata Gujri Ji's passing away was also conveyed to the Guru.

The story of the supreme sacrifice of younger sons has no parallel in human history.

Supreme Sacrifice of Young Souls

On arrival at Sirhind, the young Sahibzadas were lodged for the night in a cold room in the tower. At a great risk to his life, one of the devotees of the Guru Bhai Moti managed to send milk for Mata Ji and the Sahibzadas. Sahibzadas Zorawar Singh and Fateh Singh listened to episodes from Sikh History related to them by their grandmother. On hearing about the ideals set by the Gurus the two Sahibzadas assured Mata Gujri Ji that they would stand by their faith and follow in the footsteps of their illustrious father. Mata Ji was pleased to hear this and admired her grand children's courage and firm determination.

Sahibzadas in the Royal Court - Next morning the Police constables told Mata Ji that they had orders for taking the two boys to he Nawab's Court. On an enquiry by Mata Ji as to why they were called there, they answered respectfully that they were not aware of the reasons, their duty was to obey orders only. Mata Ji embraced her grand-

sons, blessed them and asked them to uphold the sacred traditions of the Gurus. The two Sahibzadas pledged to do so and departed cheerfully.

The two Sahibzadas walked to the court boldly along with the constables. As they reached the Court, they noticed that the big gate was closed and there was only a small window for gaining entry to the Court. The intelligent Sahibzadas saw through the game. They put their feet forward and jumped inside through the window without bowing their heads. The Nawab's Court was in session. As the two Sahibzadas stepped inside, they greeted the courtiers with the Sikh salutation -

Waheguru Ji Ka Khalsa

Waheguru Ji Ki Fateh.

("The Khalsa is God's own; Victory be to God")

The Court resounded with their greeting. All the courtiers were greatly impressed by their fearless behaviour.

Dialogue with Nawab and Qazi - Dressed in saffron shirts with Kirpans worn round their waists, the fair-coloured Sahibzadas looked very sweet and lovely. Nawab Wazir Khan addressed them in an affectionate tone : *"What sweet and brave faces! Islam will be proud to have you within its fold. Just recite Kalma (Muslim benediction) and we shall welcome you in our midst. You will get any thing for the asking."*

The two Sahibzadas shouted back in one voice. "We care not for the worldly wealth. We shall not renounce our religion at any cost". The Nawab got quite annoyed at their reply but just kept quiet. Addressing the Qazi the Nawab said, "Have you observed the insolent behaviour of these boys! Don't regard

them as innocent. They are the rebellious sons of a rebel. They will have to be punished."

The Qazi told the Nawab that, according to Islamic Law, the two boys were not guilty of any crime. They could not be held responsible for their father's actions. The Nawab observed, however, *"They are rebels too. Haven't you heard their rude statements!"*

The Qazi answered, "But they have not committed any crime." Nawab Wazir Khan was taken aback at the Qazi's unexpected reply. He again tried to persuade them and said, "You are still young and innocent. It is your age for enjoyment and fun. If you listen to our advice, you will enjoy life to your heart's content in this world and be blessed with a glorious life in Paradise".

Sahibzada Zorawar Singh spoke fearlessly. *"We are fighting against tyranny and injustice. We are the sons of the Guru Gobind Singh, the grand sons of Guru Tegh Bahadur and descendants of Guru Arjun Dev. We shall follow in their footsteps. We are ready for all sacrifices for the protection of our faith"*.

In a low voice the Nawab observed, "How proud of their faith!"

Intervention of Dewan Sucha Nand - One of the officials of the Moghul government Dewan Sucha Nand, who happened to be there, walked up to the Sahibzadas and asked them, *"If you are released, where will you go?"*

Sahibzada Zorawar Singh said, *"We shall, gather together a few Sikhs, get hold of good horses and then come and face you and your army on the battlefield"*.

On hearing this, Dewan Sucha Nand observed, "Do you know that your father has been slain?" Both the brothers reacted in an

angry tone, "No one can kill our respected father. He will never fall into your hands." The two Sahibzadas shouted back, "We don't need any advice from you. Listen carefully. Until this tyrannical Government is completely wiped out, we shall go on fighting."

Dewan Sucha Nand was taken aback at their reply. Addressing the Nawab, he said, "Sir, killing the serpent and feeding his young ones would not be wise. When these young kids grow up, they will rebel against the Government. They must be punished and should, on no account, be released." The Nawab listened to what Dewan Sucha Nand said.

The courtiers were quite amazed at the lack of any fear or anxiety on their faces even though it was a question of life and death for them. The Nawab said to the Qazi again, "You have heard the impertinent answers given by them to Dewan Sucha Nand. It would not be safe to release them. They are sure to raise the banner of revolt, like their father, when they grow up."

The Qazi delivers his judgement - The Qazi had also listened to the conversation that took place between Dewan Sucha Nand and the two bold sons of Guru Gobind Singh. After some deliberation he pronounced his judgement and ordered that they be bricked up alive in a wall. Sahibzadas heard the sentence without dismay but the courtiers were taken aback on hearing the judgement. The Qazi advised the nawab further that they be handed over to the Nawab of Malerkotla for carrying out the sentence since his brother met his end at the hands of the Guru so that he can have his revenge by getting his sons buried alive.

Nawab of Malerkotla revolts - Nawab Wazir

Khan called Sher Mohammad Khan, the Nawab of Malerkotla, and conveyed the Qazi's orders to him, "Your brother lost his life at the hands of Guru Gobind Singh. Here is an opportunity for you to wreak your vengeance. The Qazi has sentenced these two sons of Guru Gobind Singh to death and has further ordered that they be bricked up alive. We are handing them over to you for doing the needful."

On hearing this Sher Mohammad was dumb founded. After some pause he said to the Nawab in a faltering voice, "*This is cruelty! My brother was killed on the battlefield. These innocent boys are not responsible for his death. If we have to take revenge it shall be from the father. God save us from this sinful act.*" Saying this he got up and remarked in a mournful tone, "O God, how cruel!"

Sahibzadas sent back to Tower - Thereafter the Nawab ordered that both the boys be sent back to the tower. He directed his officials to arrange for executioners who would brick them alive in between two walls, which may be constructed immediately. The Sahibzadas reached the tower and gave a report of the proceedings of the court to their grandmother. She embraced her grand sons, patted them on their backs for their courageous and bold stand and said, "You have rightly upheld the dignity and honour of your revered grandfather and your valiant father. May God ever abide with you."

Again in Nawab's court - Next morning they were taken to the Nawab's court. The Nawab asked them again, "I do hope you have made up your mind to embrace Islam, otherwise, as you know, you will be bricked up alive." Both the Sahibzadas proclaimed

fearlessly, "We shall never give up our faith, whatever may be the consequences. Death has no meaning for us."

The Nawab was simply amazed at their determined and firm reply. One of his officials stepped forward, and said to the Nawab, "Sir, the two royal executioners of Delhi, Shisal Beg and Vishal Beg, are present in the court for hearing of their case. They are prepared to carry out your orders for bricking up these boys alive if they are granted pardon." The Nawab called them and told them, "Your request for pardon has been granted on condition that you brick up these two sons of Guru Gobind Singh alive in a wall."

The reaction of the public - The constables took away both the Sahibzadas. A large crowd had collected outside. People were surprised on hearing of the orders of the Nawab that the two young innocent sons of Guru Gobind Singh were to be bricked alive.

"What crime have they committed?" said one. "How cruel and inhuman, O God!" exclaimed another. "But they are not terrified," remarked a lady in the crowd. "They are the brave sons of their brave father, Guru Gobind Singh", pat came the remark by her companion.

Sahibzadas bricked alive and martyred - The Sahibzadas were brought to the spot where a wall was being raised. Both of them were made to stand side by side. The Qazi arrived there soon after and tried to persuade them to accept Islam and not to cut short their lives. Even the executioners tried to prevail upon them but they were both unflinching in their determination and told the executioners, "Raise the wall fast and bury the Moghul Raj quickly. Don't delay for a minute."

Thereafter both of them started reciting Japji while the wall was going up brick by brick. The wall went up higher and higher until it reached their chests. The Nawab and Qazi approached them and said to them in an affectionate tone, "There is still time for you to save your lives, just recite the Kalma and the wall will be pulled down immediately."

The Sahibzadas shouted loudly, "We shall not give up our faith, death does not frighten us."

Both the Nawab and Qazi were amazed at their steadfast determination. Tears flowed from the eyes of onlookers, as they observed, "Blessed be their mother who gave birth to such children."

The wall went up still higher and it was shoulder high. Sahibzada Zorawar Singh said to his younger brother, "They are putting us to test. They do not know that the Sikhs of Guru Nanak are fearless. Our Fifth Guru Arjun Dev faced martyrdom cheerfully on burning iron pans. Whereas he guided humanity to the path of a truthful and noble life, he also set an example of facing death boldly and with full faith in God."

The younger brother Sahibzada Fateh Singh remarked, "The martyrdom of our revered grand father, Guru Teg Bahadur was also unique. We shall soon join him. He is waiting for us." Later both the Sahibzadas became unconscious.

The executioners became nervous and consulted each other. "They are now nearing their end. There is no need to raise the wall further. Why not cut short their agony by beheading them? It is already getting dark."

The wall was pulled down. They brought the unconscious Sahibzadas out laid

them flat on the ground and, in an instant, martyred them.

People in the crowd were shocked at this ghastly act. They sighed in dismay, "What cruelty! How shall they answer for their crime in Mohammad's Court."

Mata Gujri Ji breathes her last - As soon as the two Sahibzadas attained martyrdom, Mata Gujri Ji, who was sitting in meditation in the tower, breathed her last. The messenger who came with the news of the martyrdom of the Sahibzadas found that Mata Ji had already attained salvation.

There was great commotion in the town of Sirhind. Every one was furious at the atrocious crime. They were unanimous in their view that this heinous act would herald the doomsday of the Moghul Empire. They admired the courage and steadfastness of the brave sons of Guru Gobind Singh and remarked, "What determination at this young age! They did not budge an inch from their position in spite of several allurements by the Nawab and Qazi."

Dewan Todar Mal manages cremation - The same evening Dewan Todar Mal, a jeweller reached Nawab Wazir Khan's court for permission to cremate the dead bodies of the two Sahibzadas & Mata Gujri.

The Nawab agreed on condition that the Dewan paid for the required piece of land by spreading as many gold coins as would cover the entire spot. The Dewan accepted the terms and brought bagfuls of gold coins. He marked the site and spread coins on the entire piece of land he selected for cremation.

The two martyred young sons of Guru Gobind Singh were cremated with full honours along with their grand mother.

There is no parallel to the martyrdom of such young boys in the annals of human history. Sahibzada Fateh Singh was less than six years old (born 1699) and Sahibzada Zorawar Singh just over eight (born in 1696). They laid down their lives in December 1704. They were bricked up alive but did not bow before the tyranny of the Moghul government.

Guru Gobind Singh was at that time in the forests of Machhiwara, when the news of the martyrdom of his younger sons reached him. On hearing this he pulled out a plant with the tip of his arrow and forecast that this tragedy will herald the uprooting of Moghul Empire in India. And to the Emperor he wrote : "It matters little if a jackal through cunning and treachery succeeds in killing two lion's cubs, for the lion himself lives to inflict retribution on you."

Guru Gobind Singh addressed his followers thus : "I have sacrificed four sons for the survival of the thousands of my sons who are still alive."

Banda Singh Bahadur reduces Sirhind to ruins - A wave of anguish gripped the country at the news of the martyrdom of the Sahibzadas. After some time the recluse Banda Bairagi came under the influence of Guru Gobind Singh Ji, and was christened Banda Singh Bahadur. He shook the Moghul Empire and the town of Sirhind was reduced to utter ruins. The renowned Hindi Poet, Maithli Saran Gupta in his well known book *Bharat Bharati* said : "*Whatever their present position, the future of the community whose sons can thus lay down their lives for their faith, is bound to be glorious.*"

(Courtsey S.G.P.C. publications)

Martyrdom And The Sikhs - Concept And Tradition

Hazara Singh

Martyrdom stands for supreme sacrifice against tyranny, discrimination and exploitation perpetrated by the state or any oppressive system. It excludes the ventures for self-glorification and focuses mainly on a valiant trust with death for a cause leading to the greatest good of the largest number.

Literally Sikh means *shishu* i.e., a disciple, keen to learn. A Sikh is not superstitious or orthodox but an innovator. Being dynamic in approach through the combination of head, heart, and hands, he is not bound by divisive taboos and inhibitions.

Concepts are corollaries of the basic philosophy which lead to the evolution of a particular faith. Traditions get laid when the followers of that way of life display courage to stand by those precepts through enlightened conviction. Often a remedy for a contemporary malady has to be explored, when either no clue to the effect is available in the parent source or a suggestive precedent has been left by the founder. Tradition in Sikhism disfavours ritualism.

Concept And Tradition

Sikhism is a realistic philosophy which does not consider the life on earth as an illusory dream. It impresses that living should not be wasted in abstract expectations after death, but be devoted to self-improvement and selfless service of mankind for transforming the mortals into His image (*gurmukhs*).

Sri Guru Granth Sahib, the scripture of Sikhs, includes sermons of such preceptors as believed in the oneness of God, regarded all human beings as equal, and emphasized that worldly activities can be sanctified by leading a purposeful life.

A Sikh neither fears death nor shuns anyone due to imaginary prejudices. Being a believer in the Divine will, he strives for defending virtue from being debased by evil, even risking his life in the bargain.

Immortality, i.e., overcoming death, the theme of many an epic, is an unnatural wish and a biological impossibility. It is not to be invoked from any deity, but can be sought through virtuous deeds by leaving noble footprints on the sands of time. Accordingly, initiation in Sikhism is called *amrit chhakna*, i.e., partaking of nectar. God, in His Benevolence, reprieves worldly lapses, if they are sincerely regretted and firmly pledged to be redressed. Desperados get transformed as saints, and the deserters earn esteem as heroes after they switch on to virtuous and duteous way of life. Paying tribute to martyrs and complimenting the selfless devotees forms a conspicuous part of Sikh invocation (*ardas*).

To sum up, recitation (*SiMran*), service and sacrifice constitute the warp and woof of Sikh faith. Their co-ordination as a way of life, in due course, led also to other broad concepts like nationalism, humanism and the martyrdom for a cause in the caste-ridden,

fatalist and inert Indian society.

Historical Evolution

The divine revelation as epitomized by Guru Nanak (1469-1539), founder of Sikhism, in the *moot mantra*, preamble to Sri Guru Granth Sahib, conveys that:

- Common parenthood of God implies that all human beings, irrespective of their birth, gender, creed, colour and race, form a universal fraternity;

- The divine Image as Eternal Truth, free from fright and rancour, means that ignorance amounts to profanity and the prejudices created thereby are baseless;

- As God does not have any form, it is not right to worship Him as an idol; and

- The belief in His common parenthood as well as in His existence as unimpeachable truth keeps enthusing the human beings in their march towards excellence.

These precepts when put into practice illustrate:

‘Truth is great but greater still is truthful way of living’

The philosophy of Sikhism passed through four testing stages from the pronouncement of its gospel to its adoption as a way of life.

First, when its founder revealed Eternal Truth as explained afore.

Second, when Guru Arjun Dev (1563-1606) laid his life for upholding that truth. He blended an element of sacrifice with the persuasive approach of the founder.

Third, when Guru Hargobind (1595-1644)

complemented the rosary with sword by adopting the concept of Miri-Piri (saint soldier).

These three landmarks prepared the ground for the Sikh faith to enter its fourth and final stage; to practise truth as a way of life through the foundation of the Khalsa in 1699.

Weeding out of superstitions, observance of purposeful secular activities, practice of religious tolerance, love for mankind, respect for women and the recognition of worth instead of stress on status by birth have been the salient precepts propounded by Guru Nanak all over the subcontinent when modern means of transport and communication were not still available. As he rose from the grassroots, his knowledge about the plight of people was firsthand. His observations, as such, made a direct appeal to their emotions, notions and actions, stirring social awakening and moral transformation. The native priestly classes got alarmed as their grip on masses started loosening.

The contemporary rulers branded the Sikhs as atheists and idol breakers. They too began to feel occasionally perturbed when they found the common people, both Hindus and Muslims, getting favourably inclined towards the liberal order pursued by the spiritual successors of Guru Nanak. This is corroborated by the memoirs of Emperor Jehangir.* The Fifth Nanak, Guru Arjun Dev, on his declining to be converted to Islam, was persecuted through callous scorching.

Impact of Martyrdom

The martyrdom of Guru Arjun Dev marked the beginning of a new epoch in the

history of the East. Till then, the cult of non-violence preached by Lord Buddha (563-483 BC) had remained an academic creed. Guru Arjun Dev was the first to awaken the in-human conscience of wicked rulers through brave and patient suffering. It also impressed on the oppressed that non-cooperation with evil and the urge to uphold virtue are essential modes of conduct for maintaining self-respect.

Passive resistance was effectively practised by the Fifth Nanak more than two centuries before the American polemicist, Henry David Thoreau, who is regarded as the preceptor of both Leo Tolstoy and Mahatma Gandhi, wrote about it in his treatise, *Walden*

Miri Piri

Gautam Buddha denounced the caste system and preached social equality about two thousand years prior to the Sikh Gurus. But his stress on non-violence, which offers no effective alternative and poses threat to territorial integrity and political stability of the country, could not stand the test of times. Guru Hargobind, through the concept of *Min'-Piri*, put forth that the hand that holds rosary for praying, along with earning and sharing it with the needy, is under an equal obligation to defend itself as well as the weak against oppression. It conveyed that just as dependence on offerings is a sin, likewise it is sacrilegious to be cowed down by tyrants.

The preceptors in India had been given to tying a thread around the wrist of a local chieftain for seeking his protection. The concept of *Miri-Piri* implied that the intelligentsia, unable to defend themselves, cannot be independent in their thinking.

Guru Hargobind was also particular about the construction of temple for Hindus and mosque for Muslims wherever a gurdwara was built because he valued the right of people to profess and practise the religious faith of their choice. This was an effective way of demonstrating disagreement with the insular theocratic approach of the rulers. Thus, the ground was prepared for the Sikh faith to enter its final stage.

Foundation of the Khalsa

Meditation in seclusion had not proved useful to society; its blending with the service of fellow beings imparted a positive approach to life. The adoption of sacrifice as an element of faith gave a purposeful meaning to worldly pursuits by popularising death for a cause rather than impairing or ending oneself in a vain hope of salvation from the cycle of birth and death. The perusal of Indian Epics reveals that many preceptors and warriors threw away their weapons abandoning the cause for which they had taken up the cudgels on hearing correctly about the death of their sons. Bravery, lacking the sense of sacrificing personal affinities for a public cause, is an unsteady force. Guru Gobind Singh, tenth and the last in the series of Sikh Gurus, lent a new concept to sacrifice, when he got his near and dear ones martyred for upholding a noble cause. He was just nine when he heard his father, Guru Tegh Bahadur, observing that the Hindus could be saved from forcible conversion, if a virtuous person would be prepared to offer his sacrifice. He exhorted him to face the ordeal himself as none was holier than he. Imagine the lofty thinking and rare pluck of a lad depriving himself of

paternal protection for the welfare of the oppressed.

Guru Tegh Bahadur is adored as *Hind di Chadar* (protective cover of India), for he faced martyrdom to uphold that all human beings are equally entitled to freedom of conscience. After his father had laid his life but not given up his faith, Guru Gobind Singh resolved that not only the souls of people were to be purified but their muscles also required to be strengthened. He decided to evolve a new order which would not hesitate to wield sword against tyranny. On the Baisakhi day in 1699, he founded the contemplated order giving it the name of the pure. He declared:

The Khalsa shall not only be warlike but also sweeten the lives of those whom he is chosen to serve.

Social and political situation in India started undergoing a revolutionary change after the inception of Khalsa.

Guru Gobind Singh raised the concept of martyrdom to new heights when his two sons, in their teens, died fighting. He solemnly submitted:

“Oh! Lord, I have surrendered to Thee what belongs to Thee.”

Two factors helped the growth of nationalism in India; foundation of the Khalsa and the influence of western system of education. Both have their distinct contribution to the transformation of Indian society.

Sikhism released the soul of people from superstitions. The new order in fact marked the evolution of nationalism in India. For the first time, many people overlooked their castes, felt a sense of brotherhood,

realized their obligation towards fellow beings and forged themselves into a disciplined lot. Till then, whosoever invaded India found the victory waiting for him. But after the inception of Khalsa, the tide turned its course. Not only the foreign aggression was resisted but the Indian forces during the rule of Maharaja Ranjit Singh, established their supremacy beyond Peshawar. The invasions from north-west ceased thereafter.

Mahatma Gandhi subsequent to his return from South Africa got strengthened in his conviction about the effectiveness of passive resistance as a political tool after the successful non-violent campaign launched the Sikhs under the banner of Shiromani Gurdwara Parbandhak Committee, in 1920-21 for retrieving the control of gurdwaras from the hereditary *mahants*, who enjoyed the protective care of the then government. Mahatma Gandhi lauded the achievement as:

“First decisive battle of India’s freedom won. Congratulations.

The contribution of the Sikhs to the freedom struggle forms glorious chapter in its chronicles. Punjab was the last to be annexed by the British but the foremost to weaken the foreign domination as per an earlier observation of Mahatma Gandhi after the annual session of Indian National Congress held at Amritsar in December 1919.

“Plassey laid the foundation of British Empire. Amritsar has weakened it”. (1:71)

Hunger strike as a political tool often resorted to by Mahatma Gandhi was first effectively pursued by the Babbar Akali prisoners in April 1926. Their ordeal lasted six weeks. (3:177)

The Discourse of Sant Ji - Part 3

Sant Waryam Singh Ji

(Continued from P. 77, issue Nov., 2019)

Guru Ji also proclaims that those who are caught in the web of attachment and jealousy, love & enmity, who think in terms of mine and thine, due to their not having the knowledge of God, and those who talk ill of others, in be-little their; only waste their time in such evil propensities; the society of such avaricious charlatans is misleading and deceptive. Guru Maharaj has ordained that one should shun such persons.

Kabir associate thou not with the infidel and flee far away from him.

If thou touch a black vessel, then, some blot must attach to thee.

ਕਬੀਰ ਸਾਕਤ ਸੰਗੁ ਨ ਕੀਜੀਐ ਦੁਰਹਿ ਜਾਈਐ
ਭਾਗਿ॥

ਬਾਸਨੁ ਕਾਰੋ ਪਰਸੀਐ ਤਉ ਕਛੁ ਲਾਗੈ ਦਾਗੁ॥
ਅੰਗ - 1371

Nanak, break thou with the false and seek for the saints, who are the true friends.

They, the false, shall leave thee while alive and they, the saints, shall forsake thee not even when dead.

ਨਾਨਕ ਕਚੜਿਆ ਸਿਉ ਤੋੜਿ ਢੂਢਿ ਸਜਣ ਸੰਤ
ਪਕਿਆ॥

ਓਇ ਜੀਵੰਦੇ ਵਿਛੁੜਹਿ ਓਇ ਮੁਇਆ ਨ ਜਾਗੀ
ਛੋੜਿ॥ ਅੰਗ - 1102

Since it is beyond us to recognise men of God, the Gurus, saints, monks, mendicants, knowers of divine knowledge, and those who have been admitted to the house of God. Therefore, Guru Maharaj has given us some guide lines, by carefully following which it would be possible for us to identify such godly persons. The words of Guru Granth

Sahib at all times make us aware of realised souls and those who have been accepted and approved by God. The sacred words of our Guru the holy Guru Granth Sahib always remind us and insist upon us the necessity of ever having communion with such liberated and noble souls. Below we give the very key words of saint tradition, of the saint behaviour, of the thinking habits of the saints. Meditate on them with all care and make an attempt to arrive at the right judgement :

Throughout the eight watches, the saint realises the nearness of the Lord.

ਆਠ ਪਹਰ ਨਿਕਟਿ ਕਰਿ ਜਾਨੈ॥ ਅੰਗ - 392

Waheguru is all perfection and in this world, we can see no one other than the Absolute. Hence we get the hint from Gurbani that these worldly men, those who seek power, and those who are self-centered, cannot see Waheguru, because the thick cataract in their eyes has blinded them. This whole world is the manifestation of Waheguru. He is the only Reality behind this world.

The Guru has shown Thee to mine eyes, O Lord.

Here and there, in every soul and in every body, Thou, only Thou alone art present, O Bewitcher.

ਗੁਰਹਿ ਦਿਖਾਇਓ ਲੋਇਨਾ॥

ਈਤਹਿ ਉਤਹਿ ਘਟਿ ਘਟਿ ਘਟਿ ਘਟਿ॥

ਤੂੰਹੀ ਤੂੰਹੀ ਮੋਹਿਨਾ॥ ਅੰਗ - 407

O mine eyes, God has infused light in ye. Without the Lord, see ye not another, therefore.

Save the Lord, see ye not any other. The Merciful Master-Lord alone is worthy of beholding.

This entire world, which ye behold is the Lord's manifestation. God's image alone is seen in it.

ਏ ਨੇਤ੍ਰਹੁ ਮੇਰਿਹੋ ਹਰਿ ਤੁਮ ਮਹਿ ਜੋਤਿ ਧਰੀ
ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਦੇਖਹੁ ਕੋਈ॥
ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਅਵਰੁ ਨ ਦੇਖਹੁ ਕੋਈ ਨਦਰੀ ਹਰਿ
ਨਿਹਾਲਿਆ॥
ਏਹੁ ਵਿਸੁ ਸੰਸਾਰੁ ਤੁਮ ਦੇਖਦੇ ਏਹੁ ਹਰਿ ਕਾ ਰੂਪੁ
ਹੈ
ਹਰਿ ਰੂਪੁ ਨਦਰੀ ਆਇਆ॥ ਅੰਗ - 922

Because there is total absence of ignorance in the hearts of the saints, to them all persons - good or bad - look the image of God. The cataract of duality having been fully removed, they look at the world, but they see only one form in it - that of God. As is commanded :

In one person Thou art haughty, and in another person meek.

In one person, Thou art all by Thyself, and in another person Thou art poor.

In one person Thou art a scholar, and preacher, and in another Thou art a fool.

In one body Thou graspest at everything and in any body Thou acceptest nothing.

What can the poor wooden puppet do? The Play-master knows everything. As is the dress, the Puppeteer clothes the puppet with, so is the part which that puppet plays.

The Lord has fashioned various chambers of many descriptions, and Himself is their Guard.

As is the mansion, wherein the Lord places the mortal, in the likewise he abides. What can this poor mortal do?

He, who has made something, and who has created all this contrivance, understands it. Says Nanak, Infinite is the Lord.

The worth of His works He Himself knows.

ਏਕ ਮਹਲਿ ਤੂੰ ਹੋਰਿ ਅਫਾਰੋ ਏਕ ਮਹਲਿ ਨਿਮਾਨੋ॥
ਏਕ ਮਹਲਿ ਤੂੰ ਆਪੇ ਆਪੇ ਏਕ ਮਹਲਿ
ਗਰੀਬਾਨੋ॥

ਏਕ ਮਹਲਿ ਤੂੰ ਪੰਡਿਤੁ ਬਕਤਾ ਏਕ ਮਹਲਿ ਖਲੁ

ਹੋਤਾ॥

ਏਕ ਮਹਲਿ ਤੂੰ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਗ੍ਰਾਹਜੁ ਏਕ ਮਹਲਿ
ਕਛੁ ਨ ਲੇਤਾ॥

ਕਾਠ ਕੀ ਪੁਤਰੀ ਕਹਾ ਕਰੈ ਬਪੁਰੀ ਖਿਲਾਵਨਹਾਰੋ
ਜਾਨੈ॥

ਜੈਸਾ ਭੇਖੁ ਕਰਾਵੈ ਬਾਜੀਗਰੁ ਓਹੁ ਤੈਸੋ ਹੀ ਸਾਜੁ
ਆਨੈ॥

ਅਨਿਕ ਕੋਠਰੀ ਬਹੁਤੁ ਭਾਤਿ ਕਰੀਆ ਆਪਿ ਹੋਆ
ਰਖਵਾਰਾ॥

ਜੈਸੇ ਮਹਲਿ ਰਾਖੇ ਤੈਸੇ ਰਹਨਾ ਕਿਆ ਇਹੁ ਕਰੈ
ਬਿਚਾਰਾ॥

ਜਿਨਿ ਕਿਛੁ ਕੀਆ ਸੋਈ ਜਾਨੈ ਜਿਨਿ ਇਹ ਸਭ
ਬਿਧਿ ਸਾਜੀ॥

ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਅਪਰੰਪਰ ਸੁਆਮੀ ਕੀਮਤਿ ਅਪੁਨੇ
ਕਾਜੀ॥ ਅੰਗ - 206

The great Guru, the Tenth Master pointing unity in diversity ordains -

Just as from one fire millions of sparks arise dispersed separately they again merge into fire,

Just as from dust the whole space with dust is filled

And then those myriads of particles revert into dust.

Just as from one stream numerous waves arise

Waves of waters these, unto the water they subside again.

Similarly from the world various subtle forms arise

Born of the same world they relapse into it again.

ਜੈਸੇ ਏਕ ਆਗ ਤੇ ਕਨੁਕਾ ਕੋਟ ਆਗ ਉਠੇ,
ਨਿਆਰੇ ਨਿਆਰੇ ਹੋਇ ਕੈ, ਫੇਰਿ ਆਗ ਮੈ
ਮਿਲਾਹਿੰਗੇ॥

ਜੈਸੇ ਏਕ ਧੁਰ ਤੇ, ਅਨੇਕ ਧੁਰ ਪੂਰਤ ਹੈ,
ਧੁਰਿ ਕੇ ਕਨੁਕਾ ਫੇਰ ਧੁਰਿ ਹੀ ਸਮਾਹਿੰਗੇ॥

ਜੈਸੇ ਏਕ ਨਦ ਤੇ, ਤਰੰਗ ਕੋਟ ਉਪਜਤ ਹੈ
ਪਾਨ ਕੇ ਤਰੰਗ, ਸਬੈ ਪਾਨ ਹੀ ਕਹਾਹਿੰਗੇ॥

ਤੈਸੇ ਬਿਸੁ ਰੂਪ ਤੇ, ਅਭੁਤ ਭੁਤ ਪ੍ਰਗਟ ਹੋਇ,
ਤਾਹੀ ਤੇ ਉਪਜ, ਸਬੈ ਤਾਹੀ ਮੈ ਸਮਾਹਿੰਗੇ॥

(ਅਕਾਲ ਉਸਤਤਿ)

So for all the twenty four hours of the day, feel Him to be near you. This is usually the first part of the tradition of the saints :

There is a parable, relating to it - during

the times of the Tenth Master, when a terrible battle was raging at Anandpur Sahib. A powerful seige had been laid around the town. The war went on waging for many months. Many clashes of the armies used to take place. During this war, one devotee of God named Bhai Ghanneya gave water to drink to the thirsty, without discriminating between friend and foe. None of the soldiers of the two opposing armies fired on him with a rifle, nor made him a target of his arrow, nor the idea of stabbing him crossed any soldier's mind. The Sikhs made a complaint against him to Guru Maharaj. He was summoned and asked to whom he was serving water. That great man (Bhai Ghaneyya) was full of complete knowledge; he saw God (full of attributes or without them) in all beings; at all places he saw the expanse of Satguru's eternal light. He viewed the whole universe as the image of God, with his universal consciousness. His nature was totally without egoism. He never saw duality in any object (God was the only reality that he saw in all). For him, none was a friend, none was a foe. He was completely merged in the Absolute. When asked to whom he had been serving water, he replied, O Divine Being, there exists no one other than you. The giver of the water was you and the drinker too was you. Wherever I cast my eyes, I see the light of your formlessness spread all round in the manifest form. Bhai Vir Singh has clarified this point in one of his poems :

*Somebody complains to Guru Kalgidhar,
That when the Sikhs seriously wound the
Turks,
Then Bhai Kanahiya at once offers water to
the injured;
He being our own is doing something
wrathful,
His job is to offer water to the fighting Sikh*

*army,
Not to cuddle the foe as sons on the raging
battle field;
The strategy of war is to 'kill' the enemy by
whatever means
He who loves the foe is to be regarded as
enemy too;
The Guru summoned Kanahiya and him he
questioned,
The faithful devotee bowed his head and
pleaded thus -
"Only to you I offer water, only to you my
venerable Lord,
I do not see any Turk or Non Turk, only you I
see,
I serve only him in whose love I am deeply
bound,
I see only him, I serve only him, and only to
him I offer water"
The Guru laughed and embraced him and
gave him a box,
'Apply this salve where needed with the
water you offer'.*

ਕਲਗੀਧਰ ਦੇ ਪਾਸ ਕੋਈ ਆ ਪਿਆ ਸ਼ਿਕੈਤ
ਲਗਾਵੇ -
“ਮਾਰ ਮਾਰ ਕੇ ਸਿਖ ਤੁਰਕ ਨੂੰ ਕਾਰੀ ਫਟ ਜਦ
ਲਾਵੇ,
“ਭਾਈ ਕਨੁੱਯਾ ਤਦੋਂ ਤੁਰਕ ਨੂੰ ਪਾਣੀ ਆਣ
ਪਿਲਾਵੇ।
“ਅਪਣਾ ਹੋ ਕੇ ਭਾਈ ਕਨੁੱਯਾ ਦੇਖੋ ਕਹਿਰ ਕਮਾਵੇ।
“ਉਸਦਾ ਕੰਮ ਆਪਣੇ ਲਸ਼ਕਰ ਸਿੱਖਾਂ ਨੀਰ
ਪਿਲਾਣਾ,
“ਨਾ ਕੇ ਵੈਰੀ ਨੂੰ ਰਣ ਤੱਤੇ ਪੁੱਤਾਂ ਵਾਂਗ ਖਿਡਾਣਾ?
“ਰਣ ਤੱਤੇ ਦੀ ਨੀਤੀ - ‘ਮਾਰਨ’ ਜਿਉਂ ਕਿਉਂ
ਦੁਸ਼ਮਨ ਕੋਹੀਏ।
“ਜੋ ਵੈਰੀ ਨੂੰ ਪਯਾਰ ਕਰਾਵੇ, ਉਸਨੂੰ ਦੁਸ਼ਮਨ
ਕਹੀਏ”।
ਸੱਦ ਕਨੁੱਯੇ ਗੁਰਾਂ ਪੁੱਛਿਆ ਸਾਰੀ ਗੱਲ ਸੁਣਾਈ।
ਸੀਸ ਨਿਵਾਇਆ ਰੰਗ ਰਤੜੇ ਨੇ ਬਿਨਤੀ ਮੁਖੋ
ਅਲਾਈ -
“ਤੈਨੂੰ ਪਿਆ ਪਿਲਾਵਾਂ ਪਾਣੀ ਸਿਰ ਮੇਰੇ ਦੇ ਸਾਂਈ!
“ਤੁਰਕ ਅਤੁਰਕ ਨ ਦਿਸਦਾ ਮੈਨੂੰ ਤੂੰ ਸਾਰੇ ਦਿਸ
ਆਈਂ।
“ਪਿਆਰੇ ਦੇ ਇਕ ਪਿਆਰ ਪ੍ਰੋਤਾ ਉਸਦੀ ਸੇਵ
ਕਰਾਵਾਂ,
“ਉਸ ਨੂੰ ਦੇਖਾਂ, ਉਸ ਨੂੰ ਸੇਵਾਂ, ਪਾਣੀ ਉਨੂੰ
ਪਿਲਾਵਾਂ”।
ਹੱਸੇ ਤੇ ਗਲ ਲਾਇਆ ਪਯਾਰਾ ਡੱਬੀ ਹੱਥ ਫੜਾਈ

-
“ਪਾਣੀ ਨਾਲ ਮਲੁਮ ਬੀ ਰੱਖੀ ਲੋੜ ਪਈ ਤੇ
ਲਾਈ”।

ਅੰਗ - 245-46 (ਸ੍ਰੀ ਕਲਗੀਧਰ ਚਮਤਕਾਰ)

So this is the mental make up of the saints. They always feel the living presence of God around them.

The second tradition of the saints is -

To His sweet will he resigns himself.

ਪ੍ਰਭ ਕਾ ਕੀਆ ਮੀਠਾ ਮਾਨੈ॥ ਅੰਗ - 392

About this too, there is a parable, full of great love. A devoted Sikh named Gurumukh approached the Fifth Master and prayed, O True Emperor we do read this verse :

To His sweet will he resigns himself.

ਪ੍ਰਭ ਕਾ ਕੀਆ ਮੀਠਾ ਮਾਨੈ॥ ਅੰਗ - 392

He, who in his heart loves Lord's ordinance, is said to be the man having salvation while alive.

As is joy, so is sorrow for him.

In that state, there is everlasting happiness and no separation from God.

ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਆਗਿਆ ਆਤਮ ਹਿਤਾਵੈ॥

ਜੀਵਨ ਮੁਕਤਿ ਸੋਊ ਕਹਾਵੈ॥

ਤੈਸਾ ਹਰਖੁ ਤੈਸਾ ਉਸੁ ਸੋਗੁ॥

ਸਦਾ ਅਨੰਦੁ ਤਹ ਨਹੀ ਬਿਓਗੁ॥ ਅੰਗ - 275

But O True Emperor, We will call ourselves very fortunate, if we could see such a dear *Gurumukh* (man of the Guru). *Guru Maharaj* commanded, if you want to meet such a *Gurumukh*, and if this is your wish, even in this congregation, there are many Sikhs of the Guru, who are worthy of this epithet (*Gurumukh*), but you would not be convinced unless you meet him face to face. So you just now go to Gujrat. There in Gujrat lives a *Gurumukh*, Bhai Bhikhari by name, who is leading his normal life. His state is :

With thine hands and feet, you may perform all jobs, but, let thy mind be with the immaculate Lord".

ਹਾਥ ਪਾਉ ਕਰਿ ਕਾਮੁ ਸਭੁ ਚੀਤੁ ਨਿਰੰਜਨ ਨਾਲਿ॥
ਅੰਗ - 1376

You go and have his darshan (sight). You will automatically acquire the knowledge of that state. As commanded, this person reached the house of that *Gursikh*. Seeing his palaces and buildings, he inferred that he was greatly blessed by the Guru, in the matter of wealth. In the drawing room, that *Gurumukh* sat repairing a mat. He seated his guest (named *Gurumukh*) at a high seat, with all respect. He offered him water to drink with his own hands. *Gurumukh*, the guest, noticed that an atmosphere of auspiciousness and joy pervaded the house which indicated that they were preparing for some marriage; suddenly his sight fell on other articles in the room - there was a bier for the dead body and a new earthen pitcher and there was also a blade of wheat all required for a meant for cremation ceremony. He was troubled by the doubt, as to what the matter was. On one side, sweets are being prepared, new clothes are being got tailored and there is the rush of the kith and kin, there is so much joyous enthusiasm that people seem to be beside themselves with joy. On the other hand, there are preparations for performing the obsequies of the dead. Why?

Next day after the wedding, the marriage party was returning to their home. The bride and bridegroom were being brought in a bridal chariot. Suddenly on the way there arose an intense but fatal pain in the stomach of the bridegroom, and by the time they approached the gate of their house the boy expired. Mother was waiting to welcome the newly wedded couple with a vessel full of water which she would drink after revolving it around their heads.

(... to be continued)

ਆਤਮ ਮਾਰਗ ਦੀ ਨਵੀਂ ਮੈਂਬਰਸ਼ਿਪ ਅਤੇ ਰਿਨੀਊਵਲ ਅਤੇ ਪੁੱਛਗਿਛ

ਸ਼੍ਰੀ ਮਾਨ ਸੰਤ ਬਾਬਾ ਵਰਿਆਮ ਸਿੰਘ ਜੀ ਮਹਾਰਾਜ ਰਤਵਾੜਾ ਸਾਹਿਬ ਵਾਲਿਆਂ ਦੁਆਰਾ ਲਿਖਤ ਪੁਸਤਕਾਂ, ਗਾਇਨ ਕੀਤੀਆਂ ਸ਼ਬਦ ਗੁਰਬਾਣੀ ਕੀਰਤਨ ਦੀਆਂ ਕੈਸਟਾਂ, CD.'S, VCD.'S, DVD.'S MP3 ਦੇ ਆਪ ਜੀ ਹੇਠ ਲਿਖੇ ਐਡਰੈਸਾਂ ਤੋਂ ਮੰਗਵਾ ਸਕਦੇ ਹੋ ਜੀ।

For all enquiries about 'Atam Marg' viz. renewal, new membership, non-receipt of the magazine etc. and also for procuring audios, videos & CDs; and books authored by Sant Waryam Singh Ji, please contact the following

England (U.K.)

For U.K. renewal of Atam Marg Magazine please forward cheque £ 40.00 payable to A.M.S.S.E.C.T. (U.K.) 9 Elizabeth Road, Walsall, West Midlands WS5 3 PF

**Atam Marg Spiritual Scientific
Educational Charitable Trust (U.K.)**

9 Elizabeth Rd.,

Walsall West Midlands, WS5 - 3PF U. K.

Contact : Mrs. Gurbax Kaur,
Mr. Jagtar Kulair : Tel : 0044-1212002818
Fax : 0044-1212002879
Voicemail : 0044-8701654402
Raj Mobile : 0044-7968734058
Email : info@atammarguk.com

U.S.A.

**Vishav Gurmat Roothani Mission
Charitable Trust,**

Contact : Baba Satnam Singh Ji Atwal,
2755, Guildhall Dr., San Jose,
Ca - 95132, U.S.A

Phone :- 001-408-263-1844,
vgrmctusa@yahoo.com

S. Baldev Singh Grewal

Fremont, U.S.A - 001-510-249-9456

Canada

Bhai Sarmukh Singh Pannu

Phone - 001-604-433-0408

Bhai Parmjit Singh Sandhu

Cell: 001-250-600-3072

Bhai Tarsem Singh Bains

Cell : 001-604-862-9525, Phone : 001-604-599-5000

IN INDIA

09417214391, 09417214379 09814612900, 9417214378

Email: atammarg1@yahoo.co.in

Australia

Bibi Jaspreet Kaur

Cell : 0061-406619858

Email :- jaspreetkaur20@hotmail.com

Foreign Membership

| | Annual | Life |
|--------|----------|-----------|
| U.S.A. | 60 US\$ | 600 US\$ |
| U.K. | 40 £ | 400 £ |
| EUROPE | 50 Euro | 500 Euro |
| AUS. | 80 AU\$ | 800 AU\$ |
| CANADA | 80 CAN\$ | 800 CAN\$ |

समागम रतवाड़ा साहिब -
कथा कीर्तन का रसास्वादन करते हुए श्रद्धालुजन



समागम रतवाड़ा साहिब - समस्त श्रद्धालुजनों को कीर्तन द्वारा कृतार्थ करते हुए
बाबा लखबीर सिंह जी तथा साथ में ही सुशोभित अन्य गणमान्य शिख्रियतें

